राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग

गृह मंत्रालय, भारत सरकार

नई दिल्ली

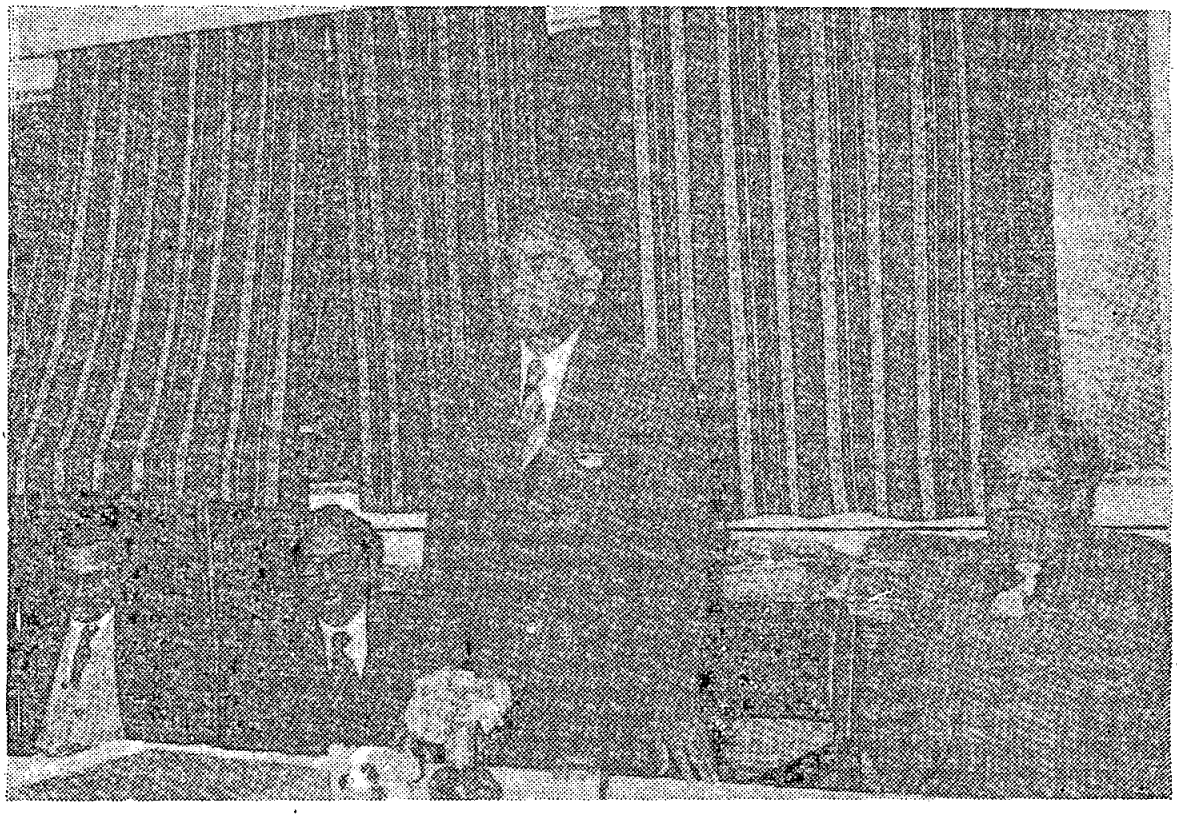

[राजभाषा विभाग द्वारा दी गई विदाई के अवसर पर बोलते हुए भूतपूर्व राजभाषा सचिव एवं भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव। साथ में दायीं ओर राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री देवेन्द्रचरण मिश्र, तथा बायीं ओर निदेशक श्री वीरकुमार मजोत्रा और उप सचिव श्री वी० पी० सिंह।]

इस अवसर पर लोकनायक भवन में एक विदाई समारोह का आयोजन किया गया, जिसमें राजभाषा विभाग के वरिष्ठ अधिकारी तथा अन्य कर्मचारीगण उपस्थित थे। राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री देवेन्द्रचरण मिश्र ने इस अवसर पर बोलते हुए सचिव महोदय द्वारा राजभाषा के प्रति की गई सेवाओं का उल्लेख करते हुए बताया कि उन्होंने अपनी अल्पावधि में ही अपनी कुशलता एवं सूझबूझ के द्वारा राजभाषा को गतिशीलता प्रदान की। संयुक्त सचिव ने आश्वासन दिया कि सचिव महोदय द्वारा जो मार्गदर्शन प्रदान किया गया है, राजभाषा विभाग उसी का अनुसरण करता हुआ हिन्दी की सेवा करता रहेगा।

सचिव महोदय ने स अवसर पर बोलते हुए संक्षेप में सरकार की भाषा नीति पर प्रकाश डाला और यह कहा कि इस नीति को कार्यान्वित कराने में राजभाषा विभाग पर महान उत्तरदायित्व है। अत: इस विभाग के सभी अधिकारियों को अत्यन्त निष्ठापूर्वक इस कार्य को सम्पन्न करना चाहिए, ताकि भारत सही अर्थों में प्रजातांत्रिक रूप ग्रहण कर सके। इस आयोजन के लिए आभार व्यक्त करते हुए उन्होंने अपना वक्तव्य समाप्त किया।

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

जनवरी—मार्च, 1984 अंक : 24

उप संपादक
जय पाल सिंह

पत्र व्यवहार का पता :
संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन (प्रथम तल)
खान मार्केट, नई दिल्ली–110003

*

फोन : 698617/617807

पत्रिका में प्रकाशित लेखों की अभिव्यक्ति स राजभाषा विभाग का सहमत होना अनिवार्य नहीं है ।

*

(निःशुल्क वितरण के लिए)

विषय-सूची

	कुछ अपनी—कुछ आपकी		7
1.	हिन्दी—विश्व मैत्री की एक कड़ी	—श्रीमती इन्दिरा गांधी, प्रधान मंत्री, भारत.	9
2.	हिन्दी की समृद्धि भारतीय भाषाओं की समृद्धि पर निर्भर है	—श्री मधुकर राव चौधरी —कार्याध्यक्ष, राष्ट्रीय समिति, तृतीय हिन्दी सम्मेलन	11
3.	हिन्दी समर्थतर से समर्थतम की ओर	—डा० बलराम जाखड़, अध्यक्ष, लोकसभा	13
4.	तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन ; सर्वसम्मत मन्तव्य तथा महत्वपूर्ण उपलब्धियां	—श्री मधुकर राव चौधरी	17
5.	तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन ; एक विवरण	—डा० कृष्ण कुमार गोस्वामी	19
6.	हिन्दी का एक अपनाया सा क्षेत्र : संयुक्त राज्य	—डा० आर० एस० मैकग्रेगर	21
7.	"विश्व भाषा" के रूप में हिन्दी	—प्रो० येगेनी चेलीशेव	23
8.	विश्व की हिन्दी पत्र–पत्रिकाएं	—डा० कामता कमलेश	25
9.	विदेशों में हिन्दी : प्रचार-प्रसार और स्थिति के कुछ पहलू	—प्रो० प्रेमस्वरूप गुप्त	31
10.	हिन्दी भाषा की भूमिका : विश्व संदर्भ में	—श्री राजेन्द्र अवस्थी	35
11.	मारिशस का हिन्दी साहित्य	—डा० लता	37
12.	हिन्दी की भावी अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका	—डा० ब्रजेश्वर वर्मा	41
13.	अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ में हिन्दी	—प्रो० सिद्धेश्वर वर्मा	47
14.	नेपाल में हिन्दी और हिन्दी साहित्य	—श्री सूर्यनाथ गोप	50
15.	अमरीका में हिन्दी	—डा० केरीन शोमर	54
16.	लोपजिग विश्वविद्यालय में हिन्दी	—डा० श्रीमती मार्गेट गात्स्लाफ़	57
17.	जर्मन संघीय गणराज्य में हिन्दी	—डा० लोठार लुत्से	59
18.	सूरीनाम देश और हिन्दी	—श्री सूर्यप्रसाद बीरे	61
19.	हिन्दी और महिला जगत : एक विकास यात्रा	—डा० उषावाला	64
20.	विविधा :–		66
	(1) भारतीयस्टेट बैंक, जयपुर द्वारा "हिन्दी दिवस" का आयोजन		

(2) आर्डनेन्स फैक्ट्री अम्बाझरी में "हिन्दी दिवस" 67
(3) भारत पैट्रोलियम कार्पोरेशन लि० बम्बई में "हिन्दी दिवस" 67
(4) बैंक आफ बड़ौदा, माण्डवी (बड़ौदा) में "हिन्दी दिवस" 68
(5) महालेखाकार, आन्ध्रप्रदेश के हैदराबाद कार्यालय में "हिन्दी दिवस" समारोह 68
(6) हिन्दी भवन, जयपुर में "हिन्दी दिवस" समारोह 68
(7) भारतीय खनिज व धातु व्यापार निगम में "हिन्दी दिवस" समारोह 70

21. राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण :–

(1) पंजाब नेशनल बैंक, गुजरात में हिन्दी की प्रगति 72
(2) कर्मचारी राज्य बीमा निगम में हिन्दी की प्रगति 74
(3) नेशनल बिल्डिंग्स कंस्ट्रक्शन कार्पोरेशन में हिन्दी कार्यशाला 75
(4) हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा आयोजित पुस्तक विमोचन समारोह 76
(5) यूनियन बैंक आफ इण्डिया, दिल्ली, में हिन्दी कार्याशाला का आयोजन 77
(6) आयकर विभाग, गपुमें 12वीं हिन्दी कार्यशाला का आयोजन 77
(7) कैनरा बैंक, मंडल कार्यालय, नयी दिल्ली में लिपिक वर्गीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन 78
(8) विश्व हिन्दी सम्मेलन में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का योगदान 79
(9) गोरखपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक 79
(10) नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बैंगलोर की दूसरी बैठक 80

कुछ अपनी

"राजभाषा भारती" का 24वां अंक आपके समक्ष है। इससे पहले का अंक तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित विशेषांक था। वर्तमान अंक इसी कड़ी में है, जिसमें इस सम्मेलन से संबंधित महत्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत की गई है।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन नई दिल्ली के इन्द्रप्रस्थ स्टेडियम में 28 से 30 अक्तूबर, 1983 तक किया गया, जिसका उद्घाटन भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी जी ने किया। इसमें भारत और विश्व के विभिन्न देशों के हिन्दी विद्वानों और प्रेमियों ने भाग लिया। इस सम्मेलन में यह बात स्पष्ट रूप से उभर कर आई कि न केवल राष्ट्रीय अपितु अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में भी हिन्दी के प्रसार तथा विकास की अनेक संभावनाएं हैं। इनका प्रतिपादन तथा उन्हें साकार करने का उत्तरदायित्व हम सब का है। यह भी स्पष्ट हुआ कि आधुनिक भारत में हिन्दी का बहुमुखी विकास हुआ है, और हिन्दी ने वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में भी आशाजनक प्रगति की है। शिक्षा के माध्यम के रूप में, पत्रकारिता के क्षेत्र में तथा जन-संचार के क्षेत्र में इसका प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है।

प्रस्तुत अंक में भारत एवं विश्व के विभिन्न देशों के हिन्दी विद्वानों के लेख प्रकाशित किए जा रहे हैं। इनमें विशेष रूप से विश्व के अन्य देशों में हिन्दी की स्थिति के बारे में वहीं के विद्वानों द्वारा प्रकाश डाला गया है। इस संबंध में क्रम सं० 6 से 18 तक के लेख क्रमश: 'सम्मेलन स्मारिका' और 'गगनांचल' पत्रिका से साभार संकलित किए गए हैं। डा० मैकग्रेगर ने ब्रिटेन में हिन्दी के पठन-पाठन की स्थिति पर प्रकाश डाला है, तो श्री चेलीशेव ने रूस में हिन्दी की स्थिति एवं संभावनाओं की छवि प्रस्तुत की है। डा० लता ने अपने लेख "मॉरीशस का हिन्दी साहित्य" में हिन्दी की सभी विधाओं में किए गए कार्य का विशुद्ध विवरण प्रस्तुत किया है तो श्री सूर्यनाथ गोप ने अपने लेख में नेपाल में पचहत्तर प्रतिशत लोगों द्वारा किसी न किसी रूप में हिन्दी के प्रयोग का दावा किया है। डा० केरीन शोमर के लेख में अमेरिका में हिन्दी के पठन-पाठन एवं लोगों के बढ़ते हुए हिन्दी-प्रेम के बारे में विस्तार से उल्लेख है तो जर्मनी के डा० लुत्से ने जर्मन संघीय गणराज्य में हिन्दी के प्रति बढ़ती हुई रुचि को दर्शाया है।

आशा है कि पिछले अंकों की भांति प्रस्तुत अंक भी पाठकों को उपयोगी एवं रुचिकर लगेगा। उनकी सम्मति एवं सुझावों का सदैव स्वागत है।

—उप संपादक

कुछ आपकी

"तृतीय विश्व हिन्दी के सम्मेलन के सफल आयोजन के लिए गठित सचिव स्तरीय समिति के अध्यक्ष के रूप में आपने तथा आपकी समिति के सभी सदस्यों ने हमें जो सहायता एवं सहयोग दिया उसके लिए मैं आपका तथा आपकी समिति का हृदय से कृतज्ञ हूं। सम्मेलन : सफलतापूर्वक सम्पन्न हो चुका है।

वास्तव में इस सम्मेलन में चार प्रमुख उपलब्धियां रहीं। पहली, प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने यह घोषणा की थी कि "हिन्दी भारत की राजभाषा तो है ही लेकिन साथ-साथ यह एक समृद्ध विश्व भाषा है।" उन्होंने यह भी बताया कि इस भाषा के उच्च स्तरीय अध्ययन-अध्यापन और शोध कार्य के लिए 'विश्व हिन्दी विद्यापीठ' की बृहद योजना को साकार बनाने के लिए भारत सरकार ने एक समिति का गठन किया है। यह निश्चय हुआ कि विश्व हिन्दी सम्मेलन की प्रक्रिया चालू रखने के लिए एक स्थायी सचिवालय के स्थापित होने की आवश्यकता है। इससे हिन्दी का अंतर भारतीय स्वरूप तो निखरेगा ही, साथ ही यह हिन्दी को अन्य देशों के साथ भारत के सांस्कृतिक संबंधों की कड़ी के रूप में भी जोड़ने का काम करेगा। इसके अतिरिक्त यह मंच भारत में भाषायी सहयोग का दौर तो प्रारंभ करेगा ही, साथ में हिन्दी विश्व बंधुत्व, भाषायी-चेतना और सौहार्द की भावना से बहुमुखी भूमिकाओं का निर्वाह करेगा।

इस सम्मेलन में पिछले दोनों सम्मेलनों में पारित संकल्पों की संपुष्टि की गई है तथा अंतर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के उन्नयन और विकास के लिए अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एक स्थायी समिति गठित करने का प्रस्ताव भी रखा है। इस संबंध में सर्वसम्मति से जो संकल्प पारित हुआ उसकी एक प्रति आपके पास विचारार्थ भेज रहा हूं।

प्रस्ताव में लिए गए निर्णयों के कार्यान्वयन के लिए विश्व हिन्दी सम्मेलन की संगठन समिति अपनी ओर से प्रयत्नशील रहेगी पर आपसे अनुरोध है कि इस संबंध में सरकारी स्तर पर जो भी अपेक्षित हो उसके लिए आप उचित कार्रवाई करने की कृपा करें।"

—मधुकर राव चौधरी
कार्याध्यक्ष राष्ट्रीय समिति,
तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन

(2)

राजभाषा भारती का अंक 21–22 प्राप्त हुआ। राजभाषा हिन्दी की प्रगति के लिए आपके द्वारा किये गये प्रयास निःसंदेह सराहनीय हैं। पत्रिका के माध्यम से महत्वपूर्ण समसामयिक परिचर्चाओं द्वारा राष्ट्रीय एकता का जो संदेश आपने जन-जन को दिया है, उसके लिए आप बधाई के पात्र हैं। हिन्दी के भाषा-वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, प्रयोजनमूलक तथा ऐतिहासिक पक्षों के संबंध में अनेक विचारकों एव भाषाविदों के विचारों से राजभाषा की महानता स्पष्ट परिलक्षित होती है। श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव द्वारा "भाषा, समाज और प्रयोजनमूलक हिन्दी" लेख के माध्यम से विश्वविद्यालयों में प्रयोजनमूलक हिन्दी के प्रशिक्षण की व्यवस्था करने की अपील–एक रचनात्मक सुझाव है। डा० विद्या निवास मिश्र ने "हिन्दी के विकास में पत्रकारिता का योगदान" में पत्रकारिता के महत्व पर प्रकाश डाला है, देश की सांस्कृतिक चेतना में राजभाषा का ऐतिहासिक दायित्व डा० रघुवंश और प्रो० चतुर्वेदी के लेखों में देखा जा सकता है। भाषा जितनी सरल और जनसामान्य के समझ में आयेगी, उतनी ज्यादा प्रभावशाली होगी–डा० कैलाश चन्द भाटिया ने अपने लेख द्वारा यह बताया है।

कुल मिलाकर सभी रचनाओं के प्रस्तुतीकरण में रोचकता, उपयोगिता और गूढ़ विचारों का सुन्दर सामंजस्य हुआ है। अन्त में राजभाषा हिन्दी की प्रगति के लिए किये गये सराहनीय प्रयासों के लिए आपको बार–बार बधाई। समय-समय पर हम अपने सुझावों से आपको अवगत कराते रहेंगें। हमें आशा है कि आपके मार्गदर्शन में हिन्दी के विकास में और भी सुचारू रूप से प्रगति होगी।

—इ०प्र० हिंगोरानी
मुख्य प्रबन्धक
सेन्ट्रल बैंक आफ इण्डिया, शिमला

(3)

"राजभाषा भारती" के प्रत्येक अंक को पढ़ने के बाद उस पर अपने विचार प्रकट करने की अत्यधिक उत्कण्ठा बनी रहती थी। लेकिन सीमाओं ने लिखित अभिव्यक्ति पर विजय पाई। संयुक्तांक 21–22 भी अत्यन्त उपयोगी एवं ज्ञानवर्धक अंक है।

श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव के "भाषा, समाज और प्रयोजनमूलक हिन्दी" लेख में प्रयोजनमूलक हिन्दी शीर्ष के अन्तर्गत व्यक्ति विचार वस्तुतः मौलिक एवं व्यावहारिक

। विशेषतः वहां, जहां वे साहित्यिक हिन्दी तथा व्यावहारिक हिन्दी में और हिन्दी साहित्य मर्मज्ञ व्यक्ति और हिन्दी मातृ-भाषी किन्तु साहित्यिक हिन्दी से अस्पृष्ट व्यक्ति द्वारा प्रयुक्त हिन्दी में अन्तर दर्शाते हैं। डा० मिश्र ने आधुनिक काल के हिन्दी साहित्य में सामाजिक सापेक्षता और लोकेषणा के तत्व को पत्रकारिता की देन के रूप में जो देखा है, वह सही है।

डा० रघुवंश का लेख तो बहुत ही विचारोत्तेजक एवं उत्प्रेरक है। उनका, उत्तर और दक्षिण की भाषाओं के मध्य विद्वानों द्वारा किए गए पारिवारिक या आकृतिमूलक वर्गीकरण को एक राजनैतिक षड़यंत्र मानना, युक्तियुक्त जान पड़ता है। उनका यह प्रश्न कि इस वर्गीकरण से देखने वालों की दृष्टि से, उत्तर दक्षिण की संस्कृति में समान रूप से अनुस्यूत, रीति-रिवाजों, खान-पान, व्रत-त्यौहार, पूजा-पाठ और संस्कार-व्यवहार की एकसूत्रता क्यों ओझल हो जाती है, वस्तुतः विचारणीय है। डा० चतुर्वेदी का प्रत्येक कालखण्ड में भारत में एक अखिल भारतीय भाषा की परम्परा की सत्ता का अध्ययन भी एक इतिहासपरक अध्ययन है।

इन सबके प्रस्तुतीकरण के लिए राजभाषा भारती परिवार बधाई का पात्र है, कृपया स्वीकार करें।

—कर्ण
हिन्दी अधिकारी,
कार्यालय, आयकर आयुक्त हरियाणा, रोहतक

(4)

राजभाषा भारती के संयुक्तांक 21–22 की प्रति प्राप्त हुई।

हिन्दी के प्रचार एवं प्रसार में हिन्दी पत्रकारों का सक्रिय सहयोग सदैव प्रशंसनीय रहा है। आज जब, पत्रकारों की निष्ठा को संदिग्ध दृष्टि से देखा जा रहा है, ऐसे समय डा० विद्यानिवास मिश्र का लेख अत्यन्त सामयिक एवं सटीक है। यह लेख राजभाषा हिन्दी की उन्नति के संदर्भ में हिन्दी पत्रकारिता को नयी दृष्टि प्रदान करता है। सभी लेखों का चयन सम्पादक की दूर-दृष्टि का द्योतक है। 'विविधा' के अन्तर्गत सभी सामग्री उपयोगी है। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकों की रिपोर्ट पढ़ कर, हमें पता चलता है कि विभिन्न नगरों के लोग राजभाषा के सम्बन्ध में कसे सोचते हैं और क्या कर रहे हैं।

राजभाषा भारती के समस्त परिवार को मेरी शुभकामनायें।

—गंगाप्रसाद राजौरा
इण्डियन ओवरसीज बैंक, पूसा रोड, नई दिल्ली

(5)

"राजभाषा भारती" विशेषांक 23 में इस प्रकार की सामग्री का समावेश किया गया है जो हिन्दी के प्रचार-क्षेत्र में कार्य करने वालों का मार्गदर्शन ही नहीं अपितु अक्षरशः अनुपालन करने में उत्साहवर्धन का सजग प्रतीक है। राजभाषा के माध्यम से हिन्दी में किये जा रहे प्रयास अत्यन्त सराहनीय हैं। आशा करता हूं कि इसमें संकलित सामग्री पाठकों को उपयोगी सिद्ध होगी।

"राजभाषा भारती" विशेषांक के प्रकाशन हेतु शुभकामनाओं सहित।

—डा० र० या० म० सिंह
कुल सचिव,
दयालबाग एजूकेशनल इंस्टीट्यूट, आगरा

(6)

राजभाषा भारती के अंक 23 की प्रति प्राप्त हुई।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर राजभाषा भारती का विशेषांक एक सफल एवं सराहनीय प्रयास है। हिन्दी सम्बन्धी देश के 16 महान नेताओं के सारगर्भित "संदेश" एक ही स्थान पर पढ़कर बहुत अच्छा लगा। वैसे तो राजभाषा भारती का प्रत्येक अंक संग्रहणीय होता है पर इन संदेशों तथा हिन्दी एवं राजभाषा संबंधी विद्वान विचारकों के लेखों से यह विशेषांक यादगार अंक बन गया है। डा० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, श्री गोपाल प्रसाद व्यास, श्री राजमणि तिवारी के लेख अत्यन्त प्रभावशाली हैं। श्री जगदीश चतुर्वेदी का लेख "विश्व में हिन्दी प्रचार की अपूर्व संभावना" विशेष सराहनीय है। उनके सुझाव सामयिक और व्यावहारिक हैं।

इस सब का श्रेय राजभाषा भारती के सभी सदस्यों को है। विशेष रूप से संपादक बधाई के पात्र हैं, इतने कम समय में इतनी श्रेष्ठ सामग्री इतने सुंदर ढंग से प्रकाशित करने के लिए।

शुभकामनाओं सहित,

गंगा प्रसाद राजौरा
राजभाषा अधिकारी
इण्डियन ओवरसीज बैंक, पूसा रोड, नई दिल्ली

(7)

आपके द्वारा भेजे गये राजभाषा भारती विशेषांक अक्तूबर-दिसम्बर 1983 की प्रति प्राप्त हुई। धन्यवाद। इस अंक के माध्यम से पाठकों को राष्ट्रभाषा के प्रयोग की प्रेरणा मिलेगी, साथ ही हिन्दी के संबंध में उपयोगी जानकारी भी प्राप्त होगी।

"राजभाषा हिन्दी राष्ट्रीय प्रकरण में" एक बहुत ही संतुलित लेख है। गृहमंत्री श्री सेठी का यह परामर्श अत्यंत

व्यावहारिक है कि "कामकाज की हिन्दी ऐसी होनी चाहिए जो सभी भाषाओं में प्रचलित शब्दों को अपने में समेटती हुई अबाध गति से बढ़ती जाये।"

"संघ सरकार की राजभाषा नीति और उसका कार्यान्वयन (देवेन्द्र चरण मिश्र) भाषा नीति के संबंध में महत्वपूर्ण जानकारी देने वाला लेख है। इसी श्रेणी में "हिन्दी की विधि शब्दावली" (बृज किशोर शर्मा) शीर्षक लेख को भी रखा जा सकता है। डा० भोलानाथ तिवारी और डा० रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव के लेख भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से महत्व-पूर्ण है। हिन्दी सलाहकार समितियों की बैठकों और निर्णयों की जानकारी भी इस अंक से मिल सकी है।

अन्य सामग्री भी अच्छी है। अंक में मुद्रण संबंधी दोषों के प्रति आप सजग रहे हैं, यह सराहनीय है। आशा है आप भविष्य में भी इसी तरह की उपयोगी सामग्री अपने पाठकों को देते रहेंगे।

पुनः धन्यवाद।

—बिमलेन्दु मुखर्जी,
उप कुलपति,
इन्दिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ (म० प्र०)

(8)

"राजभाषा भारती" का अक्तूबर-दिसम्बर 1983 का तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक प्राप्त हुआ।

अपनी पूर्व परंपरा के अनुसार "राजभाषा भारती" का यह विशेषांक भी अत्यंत उपयोगी सामग्री से युक्त है। कृपया मेरी बधाई स्वीकार करें।

"विश्व हिन्दी सम्मेलन" के अवसर पर विश्व के संदर्भ में दिए गए कई लेखों से काफी जानकारी प्राप्त होती है कि आज भारत के बाहर इतने बड़े देश की मुख्य भाषा के रूप में हिन्दी का कितना महत्व बढ़ रहा है। हमारे यहां एक कहावत है "घर की मुर्गी साग बराबर" शायद विदेशों में हिन्दी का महत्व बढ़ने पर यहां के लोग भी स्वीकार करने लगें।

"राजभाषा भारती" के रूप में हिन्दी के प्रयोग में "सरकार की राजभाषा नीति एवं उसका कार्यान्वयन" तथा "भारत की राजभाषा नीति" श्री देवेन्द्र चरण मिश्र तथा श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव के लेख मार्गदर्शक सिद्ध होंगे। हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने में इन लेखों से, तथा गृह राज्य मंत्री श्री निहार रंजन लस्कर के लेख "हिन्दी को प्रतिष्ठित करने का दायित्व जनता का भी है" से लोगों को प्रोत्साहन मिलेगा।

"राजभाषा भारती के सफल संपादन के प्रति आपका हार्दिक अभिनंदन है।"

—हरि शंकर
संपादक, "हिन्दी शिक्षक" (मासिक)
बम्बई

(9)

आप द्वारा प्रेषित "राजभाषा भारती" का अक्तूबर—दिसम्बर अंक 23 "विश्व हिन्दी विशेषांक" प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

वास्तव में तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर इस विशेषांक का निकलना अपनी एक अलग गरिमा है, कारण दुनिया भर के हिन्दी प्रेमियों के समक्ष राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण का लेखा-जोखा प्रस्तुत करके आपने एक बड़ा ही सराहनीय कार्य किया है। मैं आप सभी विद्वतजनों को इस पुनीत अवसर पर "राजभाषा भारती" के अनूठे विशेषांक के लिए साधुवाद देता हूं।

—प्रो० सी० पी० सिंह "अनिल"
महाराष्ट्र कालेज आफ आर्टस्,
साइन्स एण्ड कामर्स, बम्बई

(10)

"राजभाषा भारती" का अक्तूबर-दिसम्बर 83 का तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन विशेषांक अंक-23 मिला। हिन्दी के राष्ट्रभाषा तथा अंतर भारतीय स्वरूप और देश विदेश में उसके विकास एवं प्रचार प्रसार संबंधी गतिविधियों की व्यापक जानकारी विषयक स्तरीय सामग्री का समावेश होने के कारण अंक उपयोगी एवं संग्रहणीय बन पड़ा है।

—हनुमान तिवारी
प्रबंध मंत्री,
मध्य प्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, भोपाल

(11)

विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर प्रकाशित राजभाषा भारती का विशेषांक अंक 23 प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

"राजभाषा भारती" हिन्दी की नब्ज है जिसके द्वारा भारत सरकार के कार्यालयों एवं सार्वजनिक उपक्रमों/निगमों में हिन्दी की स्थिति का पता चलता है। इस बार के लेख काफी लाभप्रद हैं।

धन्यवाद सहित,

—एस० एस० जैन,
वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी,
हिन्दुस्तान पैट्रोलियम कार्पोरेशन लिमिटेड, बम्बई—20.

दीप प्रज्जवलित करके तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्घाटन करती हुई प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जी। सामने खड़े हैं लोकसभा अध्यक्ष डा० बलराम जाखड़, साथ में श्री मधुकर राव चौधरी, कार्याध्यक्ष, संगठन समिति, तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन एवं अन्य।

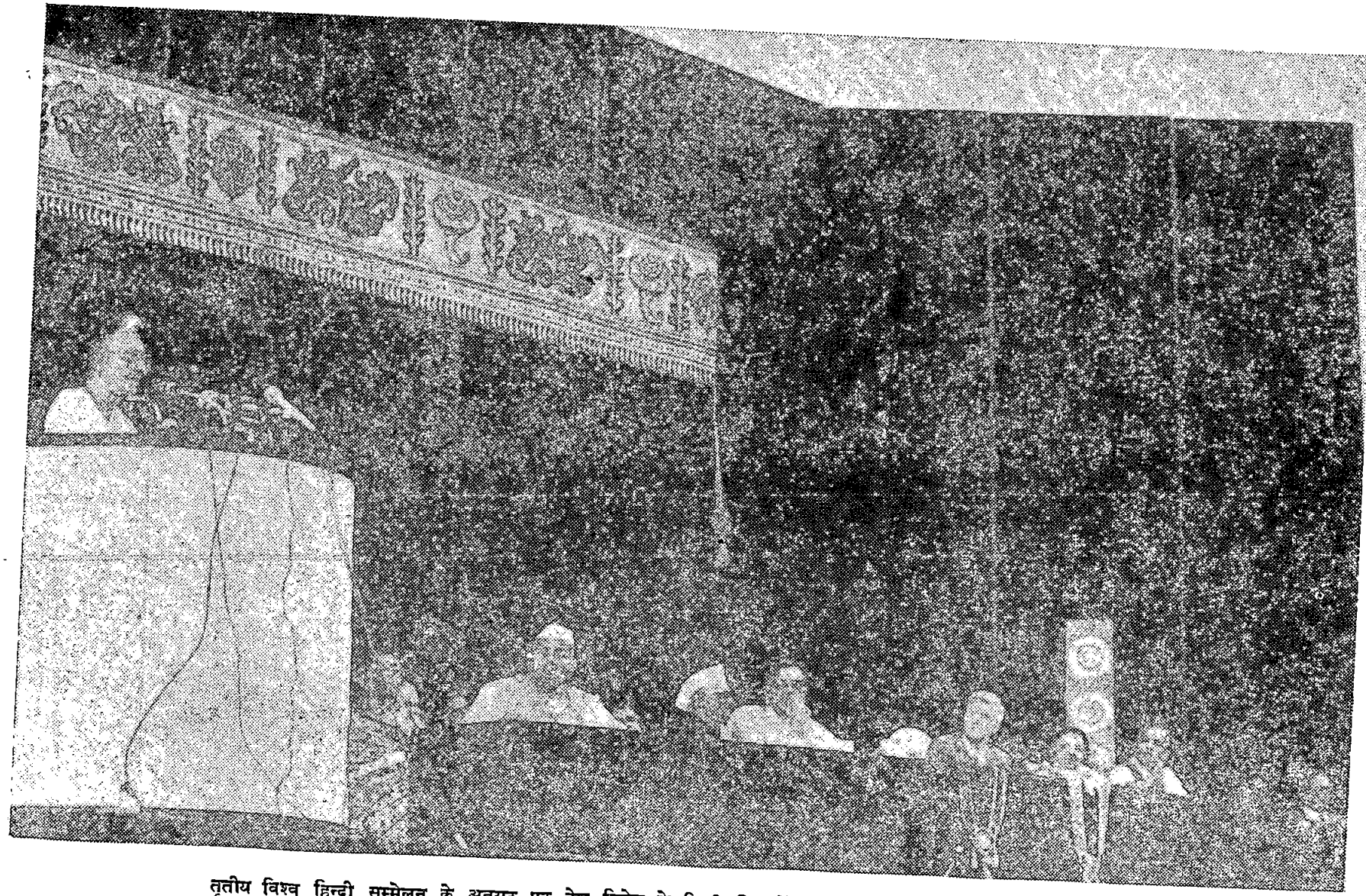

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर देश विदेश के हिन्दी विद्वानों, हिन्दी प्रेमियों एवं प्रचारकों को सम्बोधित करती हुई भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जी

हिन्दी—विश्व-मैत्री की एक कड़ी

—श्रीमती इन्दिरा गांधी
प्रधान मन्त्री, भारत

(तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी द्वारा दिया गया भाषण

—संपादक)

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है ।

मेरा जन्म, ऐसी नगरी में हुआ, जो भारतीय संस्कृति का केन्द्र है और ऐसे समय जब राष्ट्रीयता की हवा जोरों से उठी थी। तब काम अधिकतर उर्दु में होता था और पढ़े-लिखे लोग अक्सर फारसी के आलिम होते थे । उसका असर मेरे दादा और परिवार पर भी था । लेकिन साथ ही उन्होंने हिन्दी के महत्व को उस समय समझा और मोतीलाल जी ने अहिन्दी भाषियों के लिए हिन्दी पढ़ाने की पाठशाला का शिलान्यास नासिक में बहुत वर्षों पहले किया था । मेरे पिता जवाहर लाल नेहरू ने आजादी के पहले भी हिन्दी के लिए बहुत काम किया और देश के स्वतन्त्र होने पर हिन्दी के विकास के लिए विद्वानों के परामर्श से अनेक योजनाएं चलाईं जिससे हिन्दी में विश्व कोश, शब्दसागर तथा सैकड़ों ज्ञान-विज्ञान के ग्रन्थ लिखे जा सकें ।

विश्व हिन्दी सम्मेलन का अपना विशेष महत्व है । यह किसी सामाजिक या राजनैतिक प्रश्न अथवा संकट को लेकर नहीं, बल्कि हिन्दी भाषा तथा साहित्य की प्रगति और प्रसार से उत्पन्न प्रश्नों पर विचार के लिए आयोजित किया गया है।

मुझे खेद है कि इतने वर्ष बीच में बीत गए जब हम मिल नहीं सके । आप सब हिन्दी के प्रेमी और विद्वान हैं । अपने सामने मुझे बड़े-बड़े कवि, लेखक और दूसरे ऐसे लोग दिखाई पड़ रहे हैं । आप में से बहुत से ऐसे भी होंगे जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है । भारत से ही नहीं, संसार के सभी अंचलों से, हिन्दी प्रेमी यहां एकत्रित हुए हैं और आप देख रहे हैं कि यह हाल कैसे भरा हुआ है । मैं आप सबका हार्दिक स्वागत करती हूं । हिन्दी हमारी राजभाषा और विश्व-भाषा है । सबके मन में लालसा है कि हिन्दी एक महान भाषा बने ।

विदेशों में हिन्दी अधिकतर हमारे मजदूर भाइयों-बहनों के साथ गई । उनकी यह सांस्कृतिक धरोहर रही और अपने सत्व से वहां कायम रही । हिन्दी का जन्म संस्कृत और जनता की आम भाषा के मिलने से हुआ । इस भाषा को अहिन्दी भाषा-भाषियों ने संवारा और बढ़ाया । केशवचन्द्र सेन, राजाराममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, बाल गंगाधर तिलक, महात्मा गांधी जैसे अहिन्दी भाषा-भाषी महान पुरुषों ने इसका प्रचार किया और इसे बल दिया । विदेशी विद्वानों ने भी इसकी सेवा की और ग्रियर्सन जैसे व्यक्तियों ने हिन्दी में ज्ञान का खजाना बढ़ाया। महात्मा गांधी ने कहा कि यदि भारत को एक राष्ट्र बनना है तो चाहे कोई माने या न माने, राष्ट्र भाषा तो हिन्दी ही बन सकती है। तमिल के महाकवि सुब्रह्मनियम भारती ने भी राष्ट्र की एकता के लिए राष्ट्र भाषा हिन्दी पर ही जोर दिया ।

हमारे स्वतन्त्रता संग्राम में हिन्दी, उर्दू तथा भारत की दूसरी भाषाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रही है । देश के निर्माण के लिए इस भूमिका को बढ़ाना है। विदेशों के लिए इसे प्रेम और सदभाव की वाहिका बनाना है। हमारे कवियों और साहित्यकारों ने जेलों में भारतीय भाषाओं और हिन्दी-उर्दू के गीत गाकर और सुनकर प्रेरणा ली और दी तथा कभी न बुझने वाले स्वतन्त्रता के दीप में स्नेह-दान किया ।

भारत में अनेक भाषाएं हैं । हिन्दी के प्रेमी यह जानते हैं कि ये सब आपस में बहनें हैं । जितना ही इनमें स्नेह और समझ बढ़ेगी उतना ही हिन्दी को बल मिलेगा और दूसरी भाषाओं को भी ।

गांधी जी ने कहा था कि "हिन्दी के जरिए प्रांतीय भाषाओं को दबाना नहीं चाहता ताकि एक प्रांत दूसरे से अपना सजीव सम्बन्ध जोड़ सके ।" गांधी जी ने हिन्दी का उपयोग स्वाधीनता संघर्ष की वाणी के रूप में किया। परिणाम यह हुआ कि हिन्दी भाषा में एक नई जान पड़ी, एक नया तेवर और स्वर पैदा हुआ ।

हिन्दी को सभी भारतीय भाषाओं के बीच सम्पर्क का काम करना है । हिन्दी इसलिए मान्य नहीं हुई कि वह सबसे सम्पन्न भाषा है बल्कि इसीलिए कि अहिन्दी भाषा-भाषियों ने इसे अपनाया । उस पर उनका भी स्वत्व: और अधिकार है । गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा कि भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिन्दी महानदी । हिन्दी में यदि और नदियों

का पानी आना बन्द हो जाए तो हिन्दी स्वयं सूख जाएगी और यह नदियां भी भरी-पूरी नहीं रह सकेंगी ।

आधुनिक युग विज्ञान और तकनीकी का है । इसकी मानव के प्रगति के लिए बहुत आवश्यकता है। ज्ञान दिन प्रतिदिन तीव्र गति से बढ़ रहा है । हिन्दी में विज्ञान और तकनीकी के साहित्य को बहुत बड़े पैमाने पर बढ़ाना चाहिए । विश्व की अन्य सम्पन्न भाषाओं से जितना ज्यादा ज्ञान आएगा उतना ही जल्दी हिन्दी वाले उसकी जानकारी से लाभ उठा उन्नति कर सकेंगे। इसी कारण आवश्यक है कि हमारे बड़े बड़े वैज्ञानिक हिन्दी के माध्यम से सोचना और लिखना शुरू करें । मुझे खुशी है कि अब जो बच्चों के कार्यक्रम हैं उसमें इसका अधिक उपयोग हो रहा है । हिन्दी तब बढ़ेगी जब उसमें विज्ञान और ज्ञान का ऐसा साहित्य रचा जाए जिसे विश्व की अन्य भाषाएं ग्रहण करने के लिए लालायित रहें। हिन्दी को गुणों से भरना है और ऐसे विचार से भरना है कि यह जनता के हित में अधिक से अधिक ज्ञान दे सके ।

शब्द को भारत में ब्रह्म कहते हैं । ऐसे ही हिन्दी को व्यापक होना चाहिए । शब्दों का तो बहुत बड़ा खजाना है किन्तु यह खजाना उपयोगी तभी होगा जब शब्दकोशों में बन्द न रहे और इसका प्रयोग हो, हमारे प्रतिदिन के जीवन में ।

अब हिन्दी में लाखों नए शब्द हैं । इससे हिन्दी का विस्तार स्पष्ट है । हिन्दी का प्रचार-प्रसार तभी संभव है जब इसे सभी लोगों का विश्वास प्राप्त हो और साथ ही हिन्दी-भाषी दूसरी भाषाओं को मान दें ।

भाषा आदान-प्रदान का माध्यम है । राजनीतिक भदभाव लाने से उसका महत्व घटता है । इसी प्रकार, धर्म के नाम को राजनीति में लाना धर्म को संकीर्ण करता है ।

हिन्दी में नवीन विचार, ज्ञान एवं मनुष्य के दुःख-दर्द का साहित्य बढ़ाना चाहिए ताकि लोगों को उससे संतुष्टि हो और अपनापन दिखे। हमारे देश में त्रिभाषा सूत्र है । मातृभाषा तो आवश्यक है ही, राष्ट्रभाषा अन्य भाषाओं के के बीच कड़ी है और एक बाहरी भाषा अन्तर्राष्ट्रीय कड़ी के रूप में चाहिए - इसमें राष्ट्र की एकता को बल मिलेगा। अन्तर्राष्ट्रीय मैत्री बढ़ेगी और संसार से ज्ञान लेने और देने के लिए दरवाजे खुले रहेंगे ।

भारत सरकार ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए यथा-शक्ति प्रयास किए और कर रही है । हजारों पुस्तकें सरकारी सहायता से लिखी गईं और छपीं । पांच-छः लाख पृष्ठों का अनुवाद हुआ । भारत सरकार ने सभी राज्य सरकारों को एक-एक करोड़ रुपए अपनी-अपनी भाषाओं में ज्ञान और विज्ञान के उच्च साहित्य के प्रकाशन के लिए दिए जिससे कई हजार अच्छी किताबें छपीं । सरकार ने वैज्ञानिकों और तकनीशियनों के सहयोग से पांच लाख पारिभाषिक शब्दों का निर्माण कराया जिससे पुस्तकों में प्रयोग हो रहा है । अहिन्दी भाषा-भाषियों को हिन्दी सीखने के लिए पूरे अवसर दिए जाते हैं । संसार की बहुत सी भाषाओं और हिन्दी के शब्दकोश विद्वानों द्वारा बनाए जा रहे हैं । इन सब प्रयत्नों से हिन्दी ने प्रगति की है यद्यपि हमें अभी बहुत कुछ करना है ।

भाषा को अपने विकास के लिए केवल सरकार पर निर्भर नहीं रहना है । सभी समर्थ लोगों एवं संस्थाओं को भारत तथा विदेश में प्रचार के लिए सद्भावपूर्वक प्रयास करते रहना चाहिए ।

इस समय जैसे कि हमारे शिक्षा मंत्री ने कहा कि संसार के अनेक देशों में और बहुत से विश्वविद्यालयों और संस्थानों में हिन्दी पढ़ाई जा रही है और हिन्दी पर शोध हो रहा है । अब विश्व में हिन्दी और भारतीय भाषाओं के प्रति रुचि बढ़ी है । कल ही मैं एक सभा में जा रही हूं जिन्हें रोमां लोग कहते हैं । वे लोग समझते हैं कि बहुत-बहुत वर्ष पहले, सदियों पहले वे भारत से ही निकले और दुनिया के हर भाग में फैले । आज भी उनकी भाषा में बहुत से शब्द हिन्दी, पंजाबी और कुछ दूसरी भारतीय भाषाओं के हैं । लोग भारत और उसके बारे में अधिक जानना चाहते हैं । हिन्दी के पठन-पाठन की कुछ व्यवस्था विदेशों में पहले थी । सैंकड़ों वर्षों से थोड़े से विदेशी साहित्यकार हिन्दी के साहित्य को रच रहे हैं । उन्होंने हिन्दी की पुस्तकों का अनुवाद भी अपने देशों में किया है ।

अब चर्चा है कि संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी भी मानी जाए। संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी हो यह वास्तव में बड़ी बात होगी, किन्तु उससे बड़ी बात यह होगी कि भारत में मौलिक साहित्य इतना आगे बढ़े कि शोध तथा अन्वेषण का यह माध्यम बने और हिन्दी का साहित्य इतनी उच्च-कोटि का हो कि संसार के लोगों को हिन्दी न जानने का अभाव लगे ।

भाषा की टेक्नालाजी तेजी से बढ़ रही है । अनुवाद के लिए कम्प्यूटर आदि का प्रयोग हो रहा है । हिन्दी के वैज्ञानिकों और तकनीशियनों को इस दिशा में समय के साथ ही नहीं दूर की सोचना चाहिए जिससे हिन्दी और हमारी दूसरी भाषाएं पिछड़ न जाएं ।

हिन्दी में पत्रिकाएं और उनके पढ़ने वालों की संख्या बढ़ी है । सिनेमा और फिल्म-संगीत ने भी हिन्दी के प्रचार प्रसार में बड़ी सहायता की है । जो पत्र-पत्रिकाएं और फिल्में जनता तक पहुंचती हैं, उन्हें रचनात्मक और गुणात्मक होना चाहिए ताकि भारत जैसे महान देश की सांस्कृतिक चेतना वह प्रकट कर सकें ।

हमारी सरकार ने एक हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना पर विचार करने के लिए कुछ समय पहले ही कमेटी नियुक्त की थी और मेरी आशा है कि उसका काम तेजी से आगे बढ़ेगा ।

(शेष पृष्ठ 12 पर)

"हिन्दी की समृद्धि भारतीय भाषाओं की समृद्धि पर निर्भर है"

[तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर सम्मेलन के कार्याध्यक्ष श्री मधुकर राव चौधरी द्वारा दिया गया स्वागत भाषण। ——सम्पादक]

——मधुकर राव चौधरी
कार्याध्यक्ष,
तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन

माननीया प्रधान मन्त्री श्रीमती इंदिरा गांधी, उद्घाटन समारोह के अध्यक्ष प्रो० मैकग्रेगर, राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष श्री बलराम जाखड़, हिन्दी के प्रति आस्थावान देश-विदेश से समवेत प्रतिनिधि-गण, साहित्य-सेवी, विचारक तथा हिन्दी सेवक भाईयों और बहनों !

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के इस महापर्व पर आप सबका हार्दिक स्वागत करते हुए मुझे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है । हिन्दी के प्रति निष्ठा और प्रेम का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि आप लोग अपना कीमती समय निकाल कर यात्रा आदि के कष्टों की परवाह न करके इतनी भारी संख्या में यहां एकत्र हुए हैं । मैं अपनी ओर से तथा सम्मेलन के आयोजकों की ओर से आप सबका हार्दिक स्वागत करता हूं ।

जैसा कि आपको पता है, इस सम्मेलन का आयोजन राष्ट्रभाषा प्रचार समिति (वर्धा) की ओर से किया जा रहा है जिसकी स्थापना राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने की थी । वे भाषा के प्रश्न को एक राजनीतिक प्रश्न के रूप में नहीं देखते थे । उनके सामने देश के नवनिर्माण और सम्पूर्ण विकास का प्रश्न था जिसका उल्लेख उन्होंने 'मेरे सपनों का भारत' में किया है । भाषा को वे नवनिर्माण के इसी व्यापक प्रश्न के एक अंग के रूप में देखते थे। उन्होंने जहां मातृभाषाओं को शिक्षा का माध्यम बनाए जाने पर जोर दिया वहां सम्पर्क सूत्र के रूप में एक राष्ट्रभाषा की अनिवार्यता को भी महसूस किया । स्वयं उन्हीं के शब्दों में "राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है ।"

भारत के स्वतन्त्र होने के बाद यह स्वाभाविक था कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में भी स्वीकार किया जाए। हमारी संविधान सभा ने इसकी व्याख्या की और देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी को राष्ट्रभाषा का दर्जा दिया। एक स्वप्न पूरा हुआ फिर भी चूंकि भारत की सभी भाषाएं विदेशी शासन के दौरान उपेक्षित रही थीं इसलिए उनके विकास एवं संवर्धन का काम बाकी रहा। भारत के अधिकांश जनसमुदाय की भाषा होने के कारण हिन्दी को एक अतिरिक्त दायित्व वहन करना पड़ा और इस दायित्व की पूर्ति का भार भी हिन्दी के विद्वानों और साहित्यकारों के साथ-साथ केन्द्रीय सरकार पर भी आ गया। यद्यपि पिछले 35 वर्षों में हिन्दी ने काफी विकास किया है और केन्द्रीय सरकार ने भी इस दिशा में महत्वपूर्ण योग दिया है किन्तु यह स्वीकार करना पड़ेगा कि राजकाज में हिन्दी के व्यवहार की गति काफी धीमी रही है । किसी भी भाषा को व्यवहार में लाने के लिए 35 वर्ष की अवधि कम नहीं मानी जाएगी किन्तु संतोष का विषय यह है कि इसी कमी को महसूस करके प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने "राष्ट्रभाषा विभाग" की स्थापना पिछले दिनों कर दी है, इसलिए आशा की जानी चाहिए कि सरकारी कामकाज में हिन्दी जल्दी से जल्दी अपनाई जाएगी । श्रीमती इन्दिरा गांधी इस कार्य में विशेष रुचि ले रही हैं, यह राजभाषा हिन्दी के लिए निश्चय ही शुभ संकेत है ।

कहने की आवश्यकता नहीं कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी को विशेष महत्व मिला है । विदेशों के 110 विश्वविद्यालयों में इसके अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है और अनेक शिक्षा केन्द्रों में शोधकार्य भी नियमित रूप से हो रहा है ।

सम्पर्क भाषा या राष्ट्रभाषा होने का यह अर्थ नहीं कि हिन्दी का अन्य भारतीय भाषाओं से किसी तरह का विरोध है। हिन्दी का मार्ग सहयोग का है, विरोध का नहीं। वह दूसरी भाषाओं पर हावी होकर आगे नहीं बढ़ना चाहती । वास्तव में अन्य भारतीय भाषाओं की समृद्धि पर ही हिन्दी की समृद्धि निर्भर है । जिस प्रकार कमल में अनेक पंखुड़ियां होती हैं और कमल तभी सुन्दर लगता है जब सभी पंखुड़ियां सुन्दर हों । हमारी सभी भाषाएं ऐसी ही सुन्दर पंखुड़ियां हैं और हिन्दी की स्थिति उस वृत की तरह है जिस पर ये पंखुड़ियां लगी हुई हैं ।

विश्व के कई ऐसे देश हैं जहां भारत लघु रूप में निवास करता है। मारीशस, सूरिनाम, फिजी, ट्रिनिडाड; गुयाना आदि अनेक देश हैं जिनमें हिन्दी का व्यवहार व्यापक रूप में हो रहा है। ये सभी देश हिन्दी के व्यापक स्वरूप के निर्माण में योगदान करेंगे, इसमें सन्देह नहीं। इसका स्पष्ट प्रमाण यह है कि मारीशस जैसे देश ने बड़े उत्साह के साथ द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का अपने यहां आयोजन किया। आज भी इन देशों के प्रतिनिधि बड़ी संख्या में यहां पधार कर समारोह की शोभा बढ़ा रहे हैं।

भारत जब अपने अभ्युदय, विकास और उज्ज्वल भविष्य की कामना करता है तब उसमें सम्पूर्ण विश्व के कल्याण की कामना निहित रहती है। तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन इसी उद्देश्य से किया गया है कि हिन्दी न केवल भारत के सभी प्रदेशों के लिए स्नेह-सेतु बनकर रागात्मक एकता की भावना का पोषण करे वरन संसार के सभी देशों को आत्मीयता के सूत्र में बांध सके– 'यत्रविश्वम् भवत्येक नीडम्'।

विश्व हिन्दी सम्मेलन केवल हिन्दी का साहित्यिक मंच नहीं है, यह वह स्थल है जहां भारत के हृदय को हृदय से जोड़ने वाली हिन्दी को राष्ट्रीय और सार्वभौम परिप्रेक्ष्य में देखा जाता है। हमारे पिछले दो अधिवेशनों में दो बातें विशेष रूप से उभरकर सामने आई हैं :

(1) राष्ट्र संघ में विश्व भाषा के रूप में हिन्दी की मान्यता

(2) विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना

भारत के अलावा मारीशस, सूरिनाम, फिजी आदि देशों का आग्रह है कि हिन्दी को, जो संख्या की दृष्टि से विश्व की तीसरी भाषा है, राष्ट्रसंघ में स्थान दिया जाए। हमारा विश्वास है कि इस लक्ष्य की पूर्ति में आज के समारोह की सूत्रधार श्रीमती इन्दिरा गांधी बहुत हद तक सहायक हो सकती हैं। अतः उनसे अनुरोध है कि वे इस दिशा में विशेष प्रयत्न करने की कृपा करें।

विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना का प्रश्न भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। चूंकि अब हिन्दी को विश्व भाषाओं की श्रेणी में स्थान प्राप्त करना है, इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि हिन्दी भाषा और साहित्य को और भी समृद्ध किया जाए। इस वैज्ञानिक युग में नए-नए क्षितिज खुल रहे हैं। इन सभी क्षेत्रों के लिए हमें उच्च कोटि का साहित्य तैयार करना होगा—उससे पहले वैज्ञानिक अनुसंधान करने होंगे—और आवश्यकतानुसार विदेशी भाषाओं के मानक ग्रन्थों का अनुवाद करना होगा। विश्व हिन्दी विद्यापीठ के तत्वावधान में इन सभी योजनाओं को कार्यान्वित करने के लिए व्यवस्थित प्रयत्न करना होगा।

हमारे लिए यह हर्ष की बात है कि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रोफेसर मैकग्रेगर—जिन्होंने हिन्दी का एक महत्वपूर्ण व्याकरण लिखा है और सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक कोश तैयार किया है—(जो कि प्लाट्स के सुप्रसिद्ध कोश का संशोधित एवं परिवर्धित संस्करण है) हमारे अध्यक्ष हैं। अंग्रेजी भाषा-भाषी होने के बावजूद वे यह मानते हैं कि भारत का स्वत्व और आत्मा उसकी राष्ट्रभाषा हिन्दी में ही सही माने में प्रकट होती है इसलिए हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा का समुचित स्थान मिलना ही चाहिए।

अन्त में अत्यन्त स्नेह और सद्भाव के साथ इन थोड़े से शब्दों में आपका एक बार फिर हार्दिक स्वागत करता हूं और आशा करता हूं कि आप सबके सहयोग से तृतीय सम्मेलन का यह महान् यज्ञ न केवल सफल होगा वरन अपने गन्तव्य की ओर बढ़ने की प्रेरणा देगा। □□□

(पृष्ठ 10 का शेषांश)

हिन्दी सारे विश्व में मैत्री और सद्भाव की ध्वजा फहराए। हमारे अमूल्य संदेश सहअस्तित्व, शांति और अहिंसा को दुनिया के दूर से दूर स्थान पर फैलाए, यह हम सब की कामना होनी चाहिए। यही उसकी सार्थकता होगी।

काका साहिब कालेलकर कहा करते थे "अहिंसात्मक लड़ाई लड़ने वाली यह भाषा सारे संसार को आजादी का संदेश दे सकती है और दमन के खिलाफ आवाज उठा सकती है।" मैं यह कहूंगी कि विश्व शांति और दलित मानव के उत्थान में इसकी भूमिका प्रेरणात्मक होनी चाहिए तभी सब मानव जाति की सेवा यह भाषा कर सकेगी।

मैं आशा करती हूं कि इस सम्मेलन से हिन्दी का अधिक प्रचार होगा और सही माने में विश्व भाषा हिन्दी बन सकेगी। आप सबका मैं फिर से स्वागत करती हूं और इस शुभ अवसर पर अपनी शुभ कामनाएं देती हूं। □□□

हिन्दी समर्थतर से समर्थतम की ओर

[तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर सम्मेलन की राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष, डा० बलराम जाखड़ का भाषण ।
--सम्पादक]

--डॉ० बलराम जाखड़
अध्यक्ष, लोक सभा

भारत ने सदा विश्व शान्ति और सब के सुख की कामना की है। अभय और सुरक्षा के वातावरण में मधुर सम्बन्धों और मानवता की एकता पर बल दिया है। भारत की सदा यह मान्यता रही है कि विज्ञान और संस्कृति की उपलब्धियां मानव कल्याण के लिए है न कि शोषण, उत्पीड़ित आतंक और विध्वंस के लिए, विज्ञान और संस्कृति का सर्जन, प्रसारण, पोषण और संवर्धन समाजिक दायित्व से प्रेरित है, न कि स्वार्थ सिद्धि से। भारत ने सब के लिए ऐसे विश्व की परिकल्पना की है जिसमें मानवीय गरिमा को उचित स्थान मिले, मानवीय गौरव की प्रतिष्ठा हो। नए विचारों, ज्ञान-विज्ञान और सौन्दर्यबोध के लिए भारत ने सदा अपनी खिड़कियां और दरवाजे खुले रखे हैं। अभ्युदय और निः-श्रेयस् बहिर जीवन निर्माण के साथ-साथ अन्तर गवेषण भी संजोये रखा है। हमारी यह धारणा है कि समस्त सत्य मानवीय सत्य है। सत्य ही सभी जीवन मूल्यों का स्रोत है। राजनीतिक, आर्थिक संस्थाओं को इसी मानवीय सत्य को अभिव्यक्ति देना है। जीवन में सत्य और श्रम की प्रतिष्ठा करना बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय परिश्रम करना यह हमारा परम ध्येय है।

मानवीय संस्कृति की सब से मूल्यवान उपलब्धि भाषा है। भाषा के आविष्कार में मानवीय अस्मिता का आविष्कार है। हमारी सामाजिक संस्कृति से उद्गम हुआ हिन्दी भाषा का, सुरसरिता की तरह सब के हित के लिए। इस भाषा का नामकरण हुआ फारसी में। दिव्य वाणी संस्कृत इसका अग्रज स्रोत है।

संस्कृत, हिन्दी, मराठी, नेपाली तथा कई अन्य भाषाएं देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं। इस वर्णमाला की ध्वनियां भाषा विज्ञान के आधार पर वर्गीकृत हैं। इसके लिपि संकेत और उच्चारण में अन्तर नहीं। इस दृष्टि से यह अत्यन्त वैज्ञानिक लिपि मानी जाती है। देवनागरी लिपि के सुधार और यंत्रीकरण सुविधा विस्तार पर निरन्तर अनुसंधान हो रहा है।

हिन्दी का व्याकरण सम्मत रूप ही मानक है। वाक्य विन्यास और व्याकरण के अनुशासन बिना पठन-पाठन में विशेष कठिनाइयां पैदा हो जाती हैं जिनका समाधान सम्भव नहीं हो पाता। यह सच है कि कोई भी जीवट वाली विकासशील भाषा व्याकरण के सूत्रों-नियमों में नहीं बंधती। भाषा पहले, व्याकरण बाद में आता है। इस प्रसंग में विश्व के अग्रगण्य वैयाकरण पाणिनि के सूत्रों पर महाभाष्य नामक प्रसिद्ध व्याख्या ग्रंथ रचते हुए पतंजलि मुनि ने आज से प्रायः 2,500 वर्ष पूर्व व्यंग किया था--

"जो महानुभाव व्याकरण को भाषा से अधिक महत्व देते हैं वे उतने ही बुद्धिमान हैं, जितना कि वह मनुष्य, जो गाड़ी को बैलों के आगे रखते हैं।"

हिन्दी हमारी भावनाओं, विचारों और आकांक्षाओं को अभि-व्यक्ति देती है। हिन्दी में हमारा भव्य अतीत है। हम उससे विच्छिन्न नहीं हो सकते। भले ही उसमें लौट नहीं सकते। हमारा उज्ज्वल भविष्य भी हिन्दी में ही है। अतीत की गलतियों के भट-काव से हम सीखते हैं, भविष्य के लिए योजना बनाते हैं पर जीना तो हमें वर्तमान में है। हिन्दी को हमें वर्तमान की विज्ञान, संस्कृति, शिक्षा और जन संचार के साधनों के अपने घर की अधिक सशक्त, सरस, आकर्षक भाषा बनाना है।

आध्यात्मिक खोज, प्रतीकात्मक अर्थों की उपलब्धि और संप्रेषण का संवेदनशील माध्यम होने के कारण हिन्दी एक उन्नत और परिपक्व भाषा है। प्रतीकात्मकता भाषा की विलक्षण क्षमता है। यह शक्ति सर्जन प्रक्रिया और आधुनिक वैज्ञानिक आविष्कार का आधार है। संसार के समूचे ज्ञान-विज्ञान समस्त चिंतन को वहन करने की सामर्थ्य हिन्दी में है। हिन्दी एक संप्रेषण परक भाषा है। इसकी अभिव्यंजना शक्ति अपार है।

हिन्दी विभिन्न भारतीय भाषाओं की सहोदरा बहिन है। यह निकटता उस जीवन दर्शन का प्रतिबिम्ब है जो हमारी सामान्य परम्पराओं, विचारों और मूल्यों से उपजा है। कन्याकुमारी से कश्मीर तक, गुजरात से असम तक भारतीय जीवन दर्शन की एकता ने इन सब भाषा रत्नों को एक माला में पिरोए रखा। इसी जीवन दर्शन ने संबल दिया उन भारतीय मजदूरों, किसानों और व्यापारियों को जो रोजी-रोटी के लिए मारिशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिदाद, गुयाना, अफ्रीका, ब्रिटेन, यूरोप, कनाडा, अमरीका और एशिया के विभिन्न देशों में गए। विकट परिस्थितियों में, शोषण, दमन और प्रलोभन के बावजूद उन प्रवासी भारतीयों ने अपने धर्म,

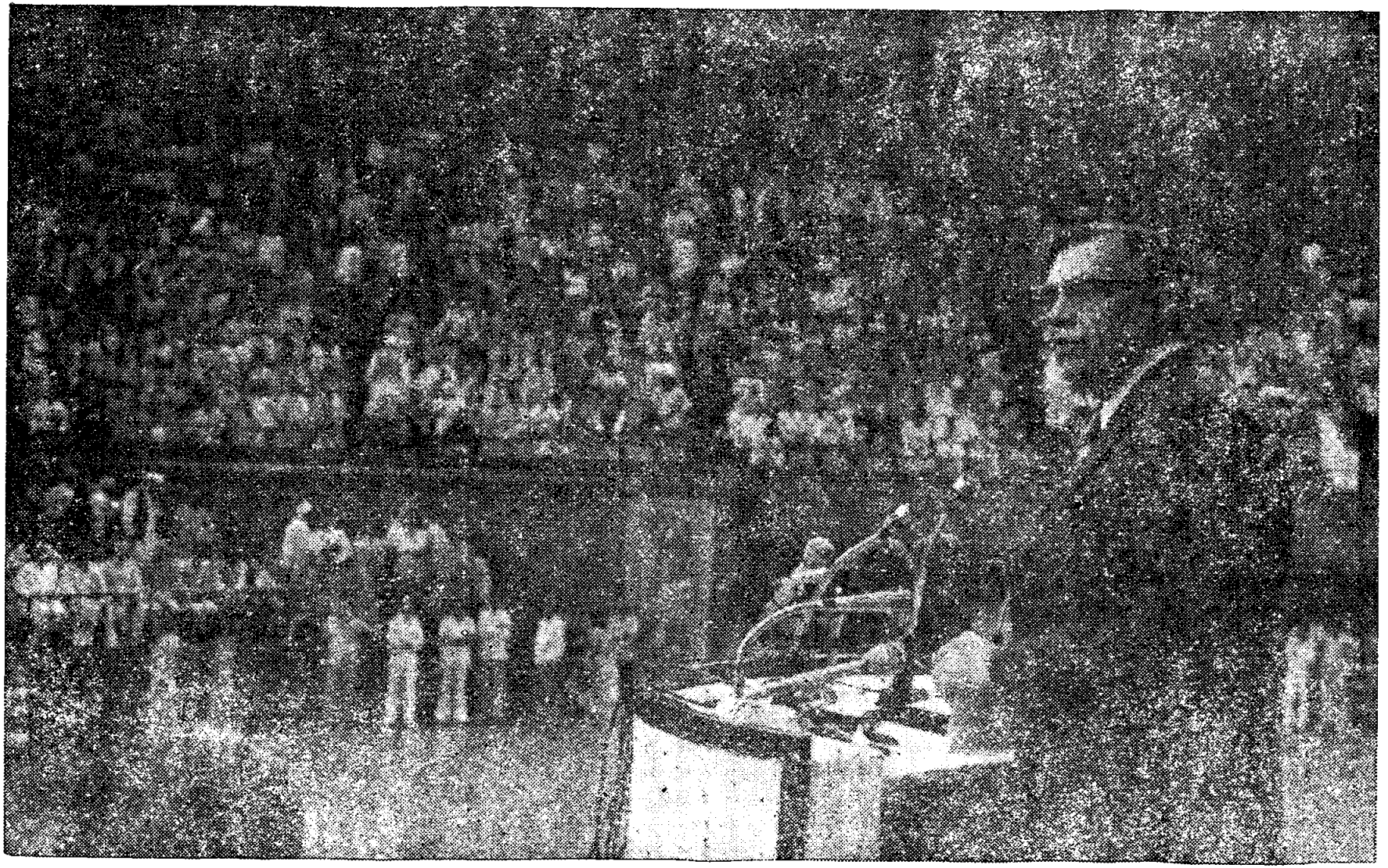

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष, डा० बलराम जाखड़

भाषा और संस्कृति को बचाए रखा—यह एक मर्मस्पर्शी गाथा है। विश्व संस्कृति के इतिहास में एक बेजोड़ अध्याय आर्थिक विपन्नता में भी अक्खड़ आत्माभिमान और मानवीय मूल्यों के संरक्षण का। उनके सतही फक्कड़पन की तह में था हिन्दी की संजीवनी आत्मबल—हिमालय की तरह स्थिर और समुद्र की तरह गम्भीर। उन्होंने हिन्दी के लिए नए क्षितिज और नए आलोक की खोज का मार्ग प्रशस्त किया—

रोटी को निकले हो ?
तो कुछ और चलो तुम।
प्रेम जीतते हो ?
तो मंजिल बहुत दूर है।
किन्तु, कहीं आलोक
खोजने को निकले हो,
तो क्षितिजों के पार,
क्षितिज पर चलते जाओ।

(रामधारी सिंह दिनकर)

हिन्दी उन लाखों भारतीयों की बोलचाल का माध्यम थी। स्थानीय भाषाओं से हिन्दी का मिश्रण हुआ। इस प्रकार अनायास ही हिन्दी को अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप देने का श्रेय उन्हीं प्रवासी भारतीयों को है। इस संदर्भ में मारिशस में द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का भव्य आयोजन प्रवासी भारतीयों के हिन्दी प्रेम का प्रतीक है। मारिशस में ही प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में पारित इस प्रस्ताव का फिर समर्थन किया गया कि हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र-संघ में एक आधिकारिक भाषा के रूप में स्थान मिले।

विदेशी विद्वानों ने ईसाई मत के प्रचार, भाषा ज्ञान, जिज्ञासा, भारत मैत्री, अनुराग आदि विविध उद्देश्यों, आशयों और भावनाओं से प्रेरित होकर भारतीय संस्कृति एवं भाषाओं के वैज्ञानिक अध्ययन, सर्वेक्षण कोश-व्याकरण-पाठ्य-पुस्तकें निर्माण, अनुवाद साहित्य सृजन और मुद्रण में अपूर्व योगदान किया। विश्व-भर में बिरला ही कोई ऐसा देश हो जहां हिन्दी बोलने समझने पढ़ने लिखने वाले न हों। आजकल विश्व के सभी मुख्य केन्द्रों हिन्दी में रेडियो प्रसारण होते हैं। यूरोप, अमरीका में यत्र तत्र पर एशिया अफ्रीका के प्रायः सभी देशों में हिन्दी फिल्में दिखाई जाती हैं। हिन्दी फिल्मों तथा गीतों की लोकप्रियता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। दूरदर्शन, आकाशवाणी, फिल्में, प्रेस, पत्र-पत्रिका हमारी या दूसरों की जो छवि प्रस्तुत करते हैं उसे जाने अनजाने स्वीकार लेते हैं। तदनुसार आचरण भी करने लग जाते हैं। रुचि या उसके अभाव में मूल्य पनपते हैं या नष्ट हो जाते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में जन संचार के साधनों का दायित्व है कि आकर्षक, रोचक, हास्य विनोद भरी सामग्री भिन्न रुचियों की तुष्टि के लिए प्रसारित करें। दर्शकों, श्रोताओं और पाठकों को सत्य, शिव, सुन्दर का साक्षात् कराएं। उन्हें अपनी गौरवशाली, कालजयी धरोहर संस्कृति, साहित्य, संगीत, कला, कौशल, ज्ञान, विज्ञान की गतिविधियों का परिचय दें। कृषि उद्योग के उत्पादन बढ़ाने वाले नवीनतम उपकरणों और प्रक्रियाओं की जानकारी दें। समस्याओं को विचारों के आदान-प्रदान द्वारा सुलझाने के लिए योजनाबद्ध कार्यक्रम बनाएं।

रुचि के परिष्कार के लिए विविध कार्यक्रमों के विषय और रूप के सामंजस्य और उत्कृष्टता के प्रति सतर्क रहें। भारत के बाहर 100 से अधिक विश्वविद्यालयों में हिन्दी के पठनपाठन की व्यवस्था है। फलस्वरूप अब संगणक भी हिन्दी पढ़ने लगे है। हिन्दी में आधुनिक टैक्नोलोजी का प्रवेश बड पैमाने पर हो रहा है। उपग्रह इन्सैट1—बी द्वारा इस अभियान को और बल मिलने की सम्भावना है।

विश्व में सब से अधिक प्रयोग की जाने वाली भाषाओं में हिन्दी का स्थान दूसरा है। यूनेस्को में हिन्दी को मान्यता प्राप्त है। दस से अधिक देशों में विद्यमान विभिन्न समुदाय इसका प्रयोग करते हैं। हिन्दी का साहित्य, ज्ञान, दर्शन, कला, कविता, मानविकी, विधि एवं विज्ञान का बहुत विशाल और समृद्ध भंडार है। हिन्दी विश्व को नई ऊर्जा देने में समर्थ है।

महर्षि दयानन्द, राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के पद चिन्हों पर चलते हुए महात्मा गांधी ने भारत में स्वराज्य और एकात्मकता की भावना के जागरण के लिए देशव्यापी आन्दोलन चलाया। स्वतन्त्रता संग्राम के सेनानियों, क्रांतिकारियों और नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की आजाद हिन्द फौज ने परतन्त्रता की बेड़ियां काटने के लिए इस विश्व को अपने खून से सींचा। हमारे प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम की चिनगारी भी हिन्दी ने लगाई थी और लड़ाई भी इसी भाषा में लड़ी गई थी। एक हजार वर्ष से अधिक दीर्घ काल में हिन्दी किसी साम्राज्यवाद से किसी राजसिंहासन से नहीं जुड़ी। हृदय की हिन्दी ने तो लोगों के दिलों पर राज किया है। दुखी-दीन दरिद्र के अधिकारों की रक्षा के लिए सर्वस्व को आहूति दी है। इस प्रेम दीवानी के बेटों ने सूली पर चढ़ते हुए भी देश प्रेम, वीरता, निर्भीकता के अमर गीत गाए हैं।

हमारी जड़े जननी जन्मभूमि की भाषा और संस्कृति में हैं। जडों के यथोचित सिंचन से ही हमारी अन्तर निहित शक्तियों का विकास होता है, आन्तरिक भावनाओं और विचारों को अभिव्यक्ति उत्तेजित होती है, अपनी पहचान होती है, मानवता के दर्शन होते हैं। अपनी जन्मभूमि, भाषा और संस्कृति से कटा हुआ आदमी बौना पड़ जाता है। भाषा केवल ध्वनियों, अक्षरों और शब्दों का समूह मात्र नहीं बल्कि हमारे दिलों की धड़कन और प्राणों का स्पन्दन है। भाषा हमारा अभियान है, आत्म सम्मान है। आधुनिक हिन्दी के निर्माता, गद्य के क्षेत्र में नये युग के प्रवर्तक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने जहां हिन्दी में कृ का दिये वहीं मानवीय मूल्यों की

भीस्थापना की। उनकी यह उक्ति आज भी कितनी समीचीन लगती है :—

लहौ सुख सब विधि भारतवासी,
विद्या, कला जगत की सीखी,
तजि आलस की फांसी ।
अपनो देश धरम कुल समझहु
छोड़ि वृत्ति निज दासी ।।

राष्ट्रीयता से हमारा उद्देश्य अन्धविश्वास और संकुचित वृत्ति को बढ़ावा देना कदापि नहीं है। नये विश्व के निर्माण के लिए दृढ़ विश्वास के साथ-साथ विशाल मन और बुद्धि की आवश्यकता है—

धर्मे ते धीयतां,
बुद्धिर् मनस् तु महद् अस्तु

उदारता, श्रद्धा व विश्वास मानव मस्तिष्क और हृदय को, विचारों और भावनाओं को उर्वरा बनाते हैं ।

हिन्दी ने तो भारत के विविध समुदायों को, देशों को एक राष्ट्रीयता के सूत्र में गूथ रखा है —

मयि सर्वम् इद प्रोत सूत्रे मणिगणा इव ।

हिन्दी ने सभी भारतीय भाषाओं के सहयोग से राष्ट्रीयता की चेतना को जागृत किया। समस्त भारतीय भाषाओं के विकास के साथ ही हिन्दी का विकास जुड़ा हुआ है। हिन्दी को अपनी उन्नति और विकास के लिए सभी भाषाओं के स्नेह और सद्भावना की आवश्यकता है। राष्ट्र के सच्चे व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति राष्ट्र-भाषा के माध्यम से सी संभव है। विज्ञान और उद्योग के विकास के साथ-साथ संस्कृति और भाषा का विकास अपेक्षणीय है। आजकल विज्ञान और उद्योग का विकास व्यक्तिपरक नहीं व्यवस्था और संस्था मूलक होता है। भारत ने इन क्षेत्रों में पर्याप्त उन्नति की है ।

पिछले दिनों सातवें गुट्ट निरपेक्ष सम्मेलन और ऊर्जा सम्मेलन के बारहवें अधिवेशन का सफल आयोजन करके भारत ने विश्व को अपनी व्यवस्था दक्षता और वैज्ञानिक कौशल का परिचय दिया है। इन दोनों अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में हिन्दी आधिकारिक भाषा के सम्मान से वंचित रही। अपने ही घर में हिन्दी के साथ सौतेली बेटी सिंड्रेला-सा व्यवहार हुआ। राष्ट्रीयता की भावना ही हमें अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर ले जाती है ।

आदिकाल से आधुनिक काल तक साहित्य की विभिन्न विधाओं के सर्जकों ने हिन्दी की उदात्त मानवीय मूल्यों, सहज सौहार्द और लोक मंगलकारी दृष्टि से सुसम्पन्न किया। संत-सायर—सूर की भाषा प्रेम-भक्ति, रस-सौन्दर्य, शौर्य—राष्ट्रीयता की नैसर्गिक चेतना से ओत-प्रोत रही। कबीर, नानक, सूरदास, तुलसीदास, मीरा, घनानन्द आदि संत कवियों की वाणी में सत्य निष्ठा, अभेद दृष्टि, श्रम साधन, अपरिग्रह और सदाचार, सैवित कथनी-करनी की एकता है। 'गहरे पानी पैठ' उन्होंने अपनी भक्ति साधनाओं में मानवीय गौरव, स्वातन्त्र्य, समानता; स्वाधीन चिंतन, लोक कल्याण एवं कर्मठता को महत्व दिया। सन्तों ने दिव्य को धरातल पर उतारने का प्रयास किया। उन्होंने हमारे देश को सांस्कृतिक एकता की कड़ी में पिरोये रखा। आधुनिक काल में विघट मय, कुंठा, घृणा, संकीर्णता, कट्टरपंथ, हिंसा की व्यापकता इस बात का प्रमाण है कि मानव ने पर हित, प्रेम के बजाय पर पीड़ा, क्रूरता को अपनाया है। मानव के प्रति मानव की क्रूरता ने लेखक की आधारभूत सामग्री को बदल दिया है। मानव शोषण की चीज अथवा तन्त्र का या मशीन का अदना पुर्जा बनकर रह गया है। मन का प्रदूषण पर्यावरण के प्रदूषण से भी अधिक भयंकर रूप धारण करता जा रहा है। समाज के नेता, अध्यापक जो कुछ कहते, करते हैं उस पर उन्हें स्वयं विश्वास नहीं रहा। उपदेश, प्रवजन और उबाऊ शब्द-स्फीति मात्र है, जर्जर, नीरस। शब्द का अर्थ का नाता टूट गया है। धन और सत्ता के लोभी अपनी उच्छृंखलता यह कहकर ढकते हैं :

'सभी भ्रष्टाचार करते हैं, समाज, सरकार सब भ्रष्ट है : व्यक्ति कुछ नहीं कर सकता।" मूल्यों के विश्वव्यापी विघटन के परिप्रेक्ष्य में हमें इस चुनौती को स्वीकारना है। व्यक्ति बहुत कुछ कर सकता है —मन, वचन, कर्म की एकता से। सोचने, बोलने, करने के साहस से। व्यक्ति का कृतित्व रोशनी की मीनार बनकर जनगण-मन का मार्ग आलोकित कर सकता है। सबसे महान् मानवीय मूल्य है—

अपनी दुनिया के लिए अपना दायित्व संभालो। अपना रास्ता आप बनाओ। अपने दीपक आप बनो। अपनी नियति के विधाता स्वयं बनो ।

हिन्दी संसार को नई ज्योति, नई मानसिकता, नई दृष्टि दे सकती है। पुरातत्व इतिहास साक्षी है कि भारत ने संसार को दिया ही दिया है। भावी विश्व संस्कृति को भारत की मुख्य देन उसके हजारों वर्षों के स्वाध्याय, तपस्या और अनुभवों का सार भौतिकता और आध्यात्मिकता के मधुर मिलन का सामंजस्य है। भारत ने जीवन के विविधि पक्षों—भौतिक, सामाजिक, मानसिक, आध्यात्मिक में व्यापक एकता की खोज की है। संस्कृति उपलब्धि नहीं सर्जना है भविष्योन्मुख सर्जना. उत्पादन नहीं गति है, परिणाम नहीं कृति है। परमाणु अस्त्रों के महाविनाश की क्षमता जन्म अन्धेरे से भयभीत मानवता को हिन्दी आश्वासन देती है कि वर्तमान युग के इस नए अंधेरे से परे एक नई ज्योति है।

सब भाई-बहिनों को मेरी शुभकामनाएं ।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन—

सर्वसम्मत मन्तव्य और महत्वपूर्ण उपलब्धियां

—मधुकर राव चौधरी

हिन्दी शताब्दियों से भारत की जनभाषा रही है और स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान वह निश्चित रूप से राष्ट्रभाषा के रूप में प्रयुक्त हुई। स्वतन्त्रता के बाद वह सर्वसम्मति से भारत की राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित हुई। राष्ट्रभाषा तथा राजभाषा के रूप में उसका व्यापक प्रयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। बावजूद इसके उससे अपना उचित स्थान दिलाने के लिए शासन और जन-समुदाय से बड़े पैमाने पर प्रयास की अभी भी नितान्त आवश्यकता बनी हुई है। गत वर्षों में यह भी अनुभव किया गया कि हिन्दी अपनी जन-पदीय सीमाओं से परे विश्व के अनेक देशों में सांस्कृतिक, ऐतिहासिक तथा सामाजिक दृष्टि से प्रयुक्त हो रही है। इसी तथ्य को ध्यान में रख कर राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने यह महसूस किया कि हिन्दी के इस अन्तर्राष्ट्रीय रूप को निखारने की प्रक्रिया को बल देने के लिए विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन किया जाए।

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन जनवरी, 1975 में नागपुर में सम्पन्न हुआ। इस सम्मेलन में सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि :

1. संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिन्दी को भी अधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दी जाए।
2. हिन्दी को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में विकसित करने के लिए विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की कर्मभूमि वर्धा में की जाए।

इस सम्मेलन से यह सिद्ध हुआ कि हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में स्वीकृत हो गई है। इसके फलस्वरूप मारिशस में अगस्त, 1976 में द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में पहले सम्मेलन के प्रस्तावों के समर्थन के अतिरिक्त दो और प्रस्ताव पारित हुए :—

1. मारिशस में विश्व हिन्दी केन्द्र की स्थापना की जाए।
2. एक अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका का प्रकाशन मारिशस से किया जाए।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का यह समापन समारोह है। इस सम्बन्ध में विभिन्न विचार-गोष्ठियों में 110 घण्टों की चर्चा के दौरान कुछ बातें स्पष्ट रूप से उभर कर आई। पहला तथ्य इस रूप में निखर कर आया कि अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के प्रसार तथा विकास की अनेक सम्भावनाएं हैं। किन्तु इनका प्रतिपादन तथा उन्हें साकार करने के लिए जितने प्रयासों की आवश्यकता है, उसका बहुत ही कम अंश अभी तक हो पाया है। यह भी तथ्य उभर कर आया कि आधुनिक भारत में हिन्दी का बहुमुखी विकास हुआ है। हिन्दी ने वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में काफी प्रगति की है। शिक्षा की माध्यम भाषा के रूप में पत्रकारिता के क्षेत्र में तथा जन-संचार के अन्य क्षेत्रों में इसका उपयोग निरन्तर बढ़ता जा रहा है। हिन्दी के विकास में शैक्षिक संस्थाओं का भी अमूल्य योगदान है। यह बात भी स्पष्ट रूप से सामने आई कि हिन्दी का अपना एक आन्तर-भारती स्वरूप निखर रहा है। इस स्वरूप के निर्माण में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में आदान-प्रदान की प्रक्रिया का बहुत बड़ा योगदान है। हिन्दी अन्य देशों के साथ भारत के सांस्कृतिक सम्बन्धों की कड़ी के रूप में काम कर रही है। तथा मानव-मूल्यों की स्थापना में इसकी अपनी विशिष्ट भूमिका है। इन सभी क्षेत्रों में प्रयासों की गति बढ़ाने की नितान्त आवश्यकता है, ताकि तमाम संभावनाओं को हम शीघ्र ही मूर्तरूप दे सकें।

हम प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी की घोषणा का हार्दिक स्वागत करते हैं कि "हिन्दी भारत की राजभाषा के साथ-साथ एक समृद्ध विश्व भाषा है।" हम उनके आभारी हैं कि उन्होंने इस स्वरूप को विकसित करने की दृष्टि से 'विश्व हिन्दी विद्यापीठ' की योजना को कार्यान्वित करने के लिए एक समिति का गठन किया है। हमारा यह अनुरोध है कि इस योजना को शीघ्रातिशीघ्र मूर्त-रूप दिया जाए जो अपने-आप में मौलिक एवं अनूठी है। यह सम्मेलन पिछले दोनों सम्मेलनों में पारित संकल्पों की सम्पुष्टि करता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के उन्नयन और विकास के लिए निम्नलिखित प्रयत्न करने का प्रस्ताव करता है और उसके कार्यान्वयन के लिए कटिबद्ध होता है।

अपने लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की पूर्ति के निमित्त अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर एक स्थायी समिति का गठन किया जाए और तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन की संगठन समिति को इस कार्य के लिए अधिकार दिया जाए कि वह भारत की प्रधानमंत्री से परामर्श कर उनकी सहमति से यह स्थायी समिति गठित करें। इस समिति में देश-विदेश के लगभग 25 व्यक्ति सदस्य हों। इसके प्रारूप एवं संविधान, कार्य-विधि और सचिवालय की रूपरेखा निर्धारित क

के लिए यह समिति अपनी एक उपसमिति गठित करे, जो तीन महीने के भीतर अपनी संस्तुति संगठन समिति को दे दे और उपर्युक्त विधि के अनुसार कार्रवाई की जाए।

आज के भाषाई संघर्ष के युग में हिन्दी को जोड़ने की भाषा के रूप में प्रयुक्त होना है। भारत तोडो का काम करने वाले तत्वों का मुकाबला करते हुए भारत जोड़ो का कार्य करना है। इसलिए इस मंच को भारत में भाषाई सहयोग का युग भी आरम्भ करना है। शांति और सेवा की परम्परा में विकसित यह भाषा प्रेम, सद्भाव और मैत्री के लिए प्रयुक्त हो तथा राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर वह विश्व बन्धुत्व, भाषाई चेतना एवं सौहार्द की भावना से अनुप्राणित होकर अपनी बहुमुखी भूमिकाओं का निर्वाह करे।

महत्वपूर्ण उपलब्धियां

इस सम्मेलन की वास्तव में कई उपलब्धियां रही। पहली, प्रधानमंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी ने सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए यह घोषणा की है कि "हिन्दी भारत की राजभाषा तो है ही लेकिन साथ-साथ वह एक समृद्ध विश्व भाषा भी है।" उन्होंने यह भी बताया कि इस भाषा के उच्चस्तरीय अध्ययन-अध्यापन और शोधकार्य के लिए जिस 'विश्व हिन्दी विद्यापीठ' की बृहद् योजना की संकल्पना की गई है, उसको साकार करने के लिए भारत सरकार ने एक समिति का गठन किया है। वस्तुत: 'विश्व हिन्दी विद्यापीठ' को मूर्तमान करने की दिशा में उठाया गया यह कदम सम्मेलन की दूसरी उपलब्धि है। विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन की प्रक्रिया को चालू रखने के लिए एक स्थायी सचिवालय के स्थापित होने की आवश्यकता है। संकल्प के रूप में सर्वसम्मति से पारित सचिवालय की स्थापना का प्रस्ताव इसकी तीसरी उपलब्धि है। यह सम्मेलन अपने चिंतन और विचार की प्रक्रिया में हिन्दी के आन्तर भारती स्वरूप को निर्धारित एवं निरूपित करने का एक प्रयास भी माना जा सकता है। मंच के रूप में इस सम्मेलन ने भारत में भाषाई सहयोग के दौर को प्रारम्भ करने का प्रयास किया और आगे भी करेगा। इस सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि जिस हिन्दी की संकल्पना सम्मेलन ने की, उस से अन्य देशों के साथ भारत के सांस्कृतिक सम्बन्धों की कड़ी सुदृढ़ होगी तथा हिन्दी विश्व बन्धुत्व, भाषाई चेतना और सौहार्द की भावना से प्रेरित बहुमुखी भूमिकाओं का निर्वाह करेगी। सम्मेलन की यह चौथी महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। □□□

"राष्ट्रीयता के उपादानों में जाति, धर्म और राजनैतिक तथा भौगोलिक परिस्थिति, संस्कृति और भाषा, इन पांचों ही अंगों का होना आवश्यक है। लेकिन हमारे विचार में एक भाषा का होना मुख्य है। राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का बोध हो ही नहीं सकता। जहां राष्ट्र है वहां राष्ट्रभाषा का होना लाजिमी है अगर सम्पूर्ण भारत को एक राष्ट्र बनाना है तो उसे एक भाषा का आधार लेना पड़ेगा। अंग्रेजी भाषा का प्रचार आपात धर्म है। इसे हम राष्ट्र-भाषा का पद नहीं दे सकते। भाषा ही राष्ट्र, साहित्य और संस्कृति का निर्माण करती है, आदर्शों की सृष्टि करती है। नदियों और पहाड़ों से राष्ट्रीयता के विकास में जो बाधा पड़ती थी, उसे रेल और हवाई जहाजों ने मिटाना शुरू कर दिया है। अगर एक संस्कृति के रहते हुए भी एक राष्ट्रभाषा का आधार न रहे तो ऐसा राष्ट्र स्थायी नहीं हो सकता एक भाषा बोलने वालों में कभी-कभी विरोध उत्पन्न हो जाते हैं और उनके पृथक राष्ट्र बन जाते हैं संयुक्त अमरीका इसका उदाहरण है। किन्तु इसकी केवल एक मिसाल है। इसके प्रतिकूल एक नस्ल, एक संस्कृति और एक धर्म के अन्तर्गत भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के अनेक उदाहरण हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि राष्ट्र-निर्माण में भाषा का स्थान सबसे महत्व का है।"

—प्रेमचन्द

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन : एक विवरण

—डा० कृष्णकुमार गोस्वामी
केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, दिल्ली केन्द्र

28 अक्तूबर 1983 को भारत की राजधानी दिल्ली के विशाल इन्द्रप्रस्थ स्टेडियम में तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का ऐतिहासिक समारोह प्रारम्भ हुआ। इस सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रधान मंत्री, श्रीमती इंदिरा गांधी को करना था। सुबह से ही प्रतिनिधियों और दर्शकों की भीड़ एकत्रित होने लगी। ठीक दस बजे भारत की प्रधान मंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी का पदार्पण हुआ। प्रमुख भाषाओं के प्रदेशों की युवतियों ने अपने-अपने क्षेत्र के परिधान में आरती कर प्रधान मंत्री का स्वागत किया। इधर उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता करने वाले कैंब्रिज विश्व विद्यालय, इंगलैण्ड के डा० आर० एस० मैग्रेगर का बड़े जोश से स्वागत किया गया। श्रीमती इंदिरा गांधी और प्रोफेसर मेग्रेगर के मंच पर अपना स्थान ग्रहण करने के साथ-साथ लोकसभा के अध्यक्ष और सम्मेलन की राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष डा० बलराम जाखड, सम्मेलन के कार्याध्यक्ष श्री मधुकरराव चौधरी, सम्मेलन के दोनों महासचिव प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद तथा श्री शंकरराव लोंढे, श्री वियोगी हरि, विदेश मंत्री श्री पी० वी० नरसिंह राव, शिक्षा मंत्री श्रीमती शीला कौल, संगठन समिति के कार्याध्यक्ष डा० सुधाकर पांडेय, संगठन समिति के सचिव प्रो० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, संगठन समिति के सदस्य श्री गंगाशरण सिंह, सुश्री निर्मला देशपांडे और श्री श्रीकांत वर्मा भी विराजमान थे। 'हिन्दी के बढ़ते चरण' प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के लिए मारिशस के प्रतिनिधि मंडल के नेता, श्री हरिश बुधु भी मंच पर उपस्थित थे।

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के महासचिव, प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद ने उद्घाटन समारोह का संचालन किया। सुश्री वाणी जयराम द्वारा कविवर निराला के "वरदे वीणा वादिनी वर दे" का मधुर गान करने के बाद सम्मेलन की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। सबसे पहले सम्मेलन के कार्याध्यक्ष, श्री मधुकरराव चौधरी ने अपना स्वागत भाषण पढ़ा। श्रीमती गांधी, डा० मेग्रेगर, जाखड़ और उपस्थित हिन्दी प्रेमियों का स्वागत करते हुए उन्होंने कहा, "तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के महापर्व पर आप सब का हार्दिक स्वागत करते हुए मुझे अपार हर्ष का अनुभव हो रहा है। हिन्दी के प्रति निष्ठा और प्रेम का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि आप लोग अपना कीमती समय निकाल कर यात्रा आदि के कष्टों की परवाह न कर के इतनी भारी संख्या में यहां एकत्र हुए हैं। मैं अपनी ओर से तथा सम्मेलन के आयोजकों की ओर से आप का हार्दिक स्वागत करता हूं।" राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी की महत्ता पर चर्चा करते हुए श्री चौधरी ने कहा "सम्पर्क भाषा या राष्ट्रभाषा होने के यह अर्थ नहीं कि हिन्दी का अन्य भारतीय भाषाओं से किसी तरह का विरोध है। हिन्दी का मार्ग सहयोग का है, विरोध का नहीं। वह दूसरी भाषाओं पर हावी होकर आगे नहीं बढ़ना चाहती। वास्तव में अन्य भारतीय भाषाओं की समृद्धि पर ही हिन्दी की समृद्धि निर्भर है। जिस प्रकार कमल में अनेक पंखुड़ियां होती हैं और कमल तभी सुन्दर लगता है जब सभी पंखुड़ियां सुन्दर हों। हमारी सभी भाषाएं ऐसा ही सुन्दर पंखुड़ियां हैं और हिन्दी की स्थिति उस वृन्त की तरह से जिस पर ये पंखुड़ियां लगी हुई हैं।"

तत्पश्चात श्रीमती इन्दिरा गांधी ने दीप प्रज्वलित करके सम्मेलन का उद्घाटन किया। अपने उद्घाटन भाषण में उन्होंने कहा "विश्व हिन्दी सम्मेलन का अपना विशेष महत्व है। वह किसी सामाजिक या राजनीतिक प्रश्न अथवा संकट को लेकर नहीं बल्कि हिन्दी भाषा तथा साहित्य की प्रगति और प्रसार से उत्पन्न प्रश्नों पर विचार करने के लिए आयोजित किया गया है।" हिन्दी प्रेमियों का स्वागत करते हुए श्रीमती गांधी ने कहा कि "हिन्दी हमारी राजभाषा और विश्व भाषा है। सब के मन में लालसा है कि हिन्दी एक महान भाषा बने।" हिन्दी के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्रसंघ की आधिकारिक भाषा के रूप में चर्चा करते हुए श्रीमती गांधी ने आगे कहा कि "संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिन्दी हो, यह वास्तव में बड़ी बात होगी, किन्तु उससे बड़ी बात यह होगी कि भारत में मौलिक साहित्य इतना आगे बढ़े कि शोध तथा अन्वेषण का वह माध्यम बने और हिन्दी का साहित्य इतनी उच्च कोटि का हो कि संसार के लोगों को हिन्दी न जानने के अभाव लगे।" श्रीमती गांधी ने आगे कहा कि "हमारी सरकार ने एक हिन्दी विश्वविद्यालय की स्थापना पर विचार करने के लिए कुछ समय पहले ही कमेटी नियुक्त की थी और मेरी आशा है कि उसका काम तेजी से बढ़ेगा।"

डा० आर० एस० मेग्रेगर ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा, "भारत को समझने के इच्छुक लोगों को हिन्दी सीखनी होगी। हिन्दी की अपनी उपयोगिता है, अपनी विशेषता है। इसे स्वीकार करना ही होगा। इंगलैण्ड में हिन्दी प्रयोग के बारे में बताते हुए वे कहते हैं "अभी प्रकाशित रिपोर्ट में बताया गया है कि यह ब्रिटेन की एक जुबान बन गई है। इस उद्घाटन समारोह का समापन श्री शंकरराव लोंढे के धन्यवाद ज्ञापन के बाद हुआ।

इसके बाद 12 बजे "अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में हिन्दी के प्रसार की संभावनाएं और प्रयास" विषयक खुला अधिवेशन हुआ जिसके अध्यक्ष मंडल में शिक्षा उपमंत्री, श्री पी० के० थुंगन, मैक्सिको की राजदूत प्रो० ग्रेसियाला डी० ला० लामा और वयोवद्ध साहित्यकार श्री श्रीनारायण चतुर्वेदी थे । इस अधिवेशन का संयोजन कर रहे थे प्रो० देवेन्द्रनाथ शर्मा । मुख्य वक्ता के रूप में विदेश सचिव श्री म० कृ० रसगोत्र ने बताया कि दुनिया के कई देशों में हिन्दी की पत्र-पत्रिकाएं प्रकाशित की जाती हैं और वहाँ हिन्दी के पठन-पाठन एवं अनुवाद की सुविधाएं उपलब्ध हैं । विदेश मंत्रालय की ओर से कई प्रयास किए जा रहे हैं । विदेशों में हिन्दी प्रचार-प्रसार की अपार संभावनाएं हैं । इन संभावनाओं को योजनाबद्ध तरीके से कार्यान्वित करने की आवश्यकता है । सबसे पहली बात है भारतवासियों को भारतीय संस्कृति से सम्पर्क बनाए रखने के लिए आवश्यक सुविधाएं मिलनी चाहिए । दूसरे प्रमुख वक्ता चैकोस्लोवाकिया के हिन्दी विद्वान डा० ओदोलेन स्मेकल हिन्दी के महत्व पर बल देते हुए कहते हैं, "हिन्दी हमारी भावनाओं का प्रतीक है, हमारे हृदय का स्पंदन है, किन्तु जब तक यह भारत की सशक्त भाषा नहीं बनेगी, विश्वमंच पर इसे यथोचित स्थान नहीं मिल पाएगा ।" बाद में केन्या के हिन्दी विद्वान डा० सत्यभूषण भारद्वाज ने केन्या में हिन्दी की स्थिति पर प्रकाश डाला । अन्त में अध्यक्ष मंडल के तीनों सदस्यों ने अपने-अपने विचार प्रकट किए ।

भोजन के उपरांत 3.00 बजे अपराह्न को "आधुनिक भारत में हिन्दी के बढ़ते चरण" विषय पर छः समानांतर संगोष्ठियां सम्पन्न हुई । वे गोष्ठी सत्र थे— (1) आधुनिक भारत में हिन्दी साहित्य की विकास रेखाएं, (2) आधुनिक भारत में हिन्दी भाषा की प्रगति, (3) आधुनिक भारत में हिन्दी की वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति, (4) देवनागरी लिपि : स्वरूप और संभावनाएं, (5) आधुनिक भारत में हिन्दी पत्रकारिता की प्रगति और (6) हिन्दी के विकास में स्वैच्छिक संस्थाओं का योगदान । इन सत्रों में हिन्दी साहित्य के बहुमुखी विकास और शिक्षा की माध्यम भाषा, जन संचार की भाषा, वैज्ञानिक एवं तकनीकी भाषा के रूप में हिन्दी के विविध पक्षों पर विवेचन हुआ । इसके अतिरिक्त देवनागरी लिपि की भी विशद चर्चा हुई । हिन्दी पत्रकारिता के विकास का विश्लेषण हुआ और हिन्दी के विकास में विभिन्न स्वैच्छिक संस्थाओं के योगदान की चर्चा की गई । रात्रि को श्रीराम थिएटर में "आषाढ़ का एक दिन" नाटक का आयोजन किया गया और सिरीफोर्ट में संगीत-नृत्य का कार्यक्रम रखा गया ।

दूसरे दिन 29-10-83 को प्रातः 10 बजे "अन्तर्राष्ट्रीय संदर्भ और हिन्दी" विषय पर तीन समानांतर संगोष्ठियां आयोजित की गईं— (1) भारतीय मूल के जन समुदाय में हिन्दी का प्रसार, समस्याएं और संभावनाएं, (2) विश्व के अन्य देशों में हिन्दी का प्रचार-प्रसार : समस्याएं और संभावनाएं और (3) संयुक्त राष्ट्र तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में हिन्दी का प्रयोग और संभावनाएं । इन सत्रों में यह बताया गया कि जहां भारतीय मूल के देशों में हिन्दी सामाजिक अस्मिता की प्रतीक है वहां विश्व के अन्य देशों में उसके अध्ययन-अध्यापन में बढ़ोत्तरी हो रही है । इस के अतिरिक्त हिन्दी के प्रयोग को संयुक्त राष्ट्र संघ में लाने के लिए संकल्प लेने की आवश्यकता महसूस की गई । उसी दिन 3.00 बजे अपराह्न "हिन्दी आंतर भारती स्वरूप" विषय पर छः समानांतर संगोष्ठियां सम्पन्न हुईं—(1) हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएं : आदान-प्रदान (तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़) , (2) मराठी, गुजराती और हिन्दी की बोलियां, (3) बंगला, उड़िया, और असमिया, (4) पंजाबी, कश्मीरी, सिंधी, (5) भोट, बर्मी और मुंडा परिवार, और (6) हिन्दी और प्राचीन भारतीय भाषाएं (संस्कृत, पालि, अपभ्रंश) । इन सत्रों में यह बताया गया कि हिन्दी अखिल भारतीय स्वरूप अपना रही है और इसमें अन्य भारतीय भाषाओं का योगदान उल्लेखनीय है । रात्रि को श्रीराम थिएटर और सिरीफोर्ट में सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया गया ।

30 अक्तूबर 1983 को प्रातः 10.00 बजे "भारत के सांस्कृतिक सम्बन्ध और हिन्दी" विषय पर खुला अधिवेशन हुआ । इस सत्र के अध्यक्ष मंडल में विदेश मंत्री श्री पी० नरसिंह राव और उत्तर प्रदेश सरकार के मंत्री श्री वासुदेव सिंह थे । इसका संयोजन डा० विद्यानिवास मिश्र ने किया । डा० लोकेशचन्द्र ने हिन्दी को शांति और क्रांति की भाषा कहा । फीजी में भूतपूर्व भारतीय राजदूत श्री भगवान सिंह ने सुझाव देते हुए कहा कि संसार के विभिन्न विश्वविद्यालयों में भारतीय संस्कृति के अध्ययन के लिए विभाग खुलवाए जाएं तथा हिन्दी सेवियों के नाम पर चेयर स्थापित की जाए । डा० रामकरण शर्मा ने सांस्कृतिक सम्बन्धों में हिन्दी को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान देने के क्रम में इस बात पर बल दिया कि इसके व्यावहारिक पक्ष का ध्यान तो रखा ही जाए, साथ ही इसका जो व्यापक आध्यात्मिक और सांस्कृतिक पक्ष है उससे भी लोगों को अवगत कराया जाए । श्री नरसिंहराव ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि इस सम्मेलन के बाद हिन्दी की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति को बल मिलेगा । उसी दिन 12.00 बजे अपराह्न में "मानव मूल्यों की स्थापना में हिन्दी की भूमिका" विषय पर खुला अधिवेशन हुआ । जिसमें स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती, श्री वियोगी हरि, डा० लक्ष्मीमल सिंघवी, श्री जैनेन्द्र कुमार, श्री चन्द्रगुप्त विद्यालंकार और डा० नामवरसिंह ने मानव मूल्यों का विवेचन करते हुए उसमें हिन्दी के योगदान पर सारगर्भित विचार रखे ।

उसी दिन सायं 3.00 बजे अपराह्न समापन समारोह का आयोजन किया गया । इसमें मुख्य अतिथि के रूप में हिन्दी की महान कवयित्री श्रीमती महादेवी वर्मा थीं और अध्यक्षता कर रहे थे लोकसभा के अध्यक्ष और सम्मेलन की राष्ट्रीय समिति के अध्यक्ष, डा० बलराम जाखड़ । इस में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के 41 साहित्यकारों को सम्मानित किया गया । सम्मेलन के कार्याध्यक्ष, श्री मधुकर राव चौधरी ने सम्मेलन का मंतव्य आदि प्रस्तुत किया ।

इस समारोह में हिन्दी के विदेशी विद्वानों ने भी अपने विचार रखे । सोवियत संघ के डा० चेलिशेव ने हिन्दी को भारत में उचित स्थान दिलाने पर जोर देते हुए कहा कि "हमें इस विचार में जरा भी संदेह नहीं है कि समसामयिक विश्व में बढ़ती सकारात्मक भूमिका अदा कर रहे महान एशियाई देश की एक सर्वाधिक विकसित

(शेष पृष्ठ 30 पर)

हिन्दी का एक अपनाया-सा क्षेत्र—संयुक्त राज्य

—डॉ० आर० एस० मैकग्रेगर

जिस कालक्षेत्र के अन्दर मेरा काम हिन्दी से रहा है, उसमें संयुक्त राज्य के भाषा-चित्र में एक नई रेखा खिंच गई है। पचासों के दशक में भारत के इंग्लैण्ड में बसकर रह जाने वाले लोग संख्या में नहीं के बराबर थे। आजकल की साफ दिखाई देने वाली लकीर तब अधूरी ही रही। अब तो भारत के हजारों लोग संयुक्त राज्य के बाशिंदे हो गए हैं। अखबारों में और आकाशवाणी के प्रसारणों में बार-बार मिलने से भारत की कई भाषाओं के नाम—पंजाबी, गुजराती, बंगला, उर्दू और हिन्दी—इस देश की आम शब्दावली में घुसकर जम गए हैं। संयुक्त राज्य के दस-बारह शहर और एक प्रकार से सारा ही देश भाषा को एक विशाल प्रयोग-शाला-सा बन गया है, जिसमें भाषा का एक सिद्धांत, जो हिन्दुस्तान में पहले से ही ठीक ठहर चुका है, नए सिरे से ठीक सिद्ध हो रहा है। वह सिद्धांत यही कि नातेवाली भाषाओं की एक मण्डली में कोई बीचवाली भाषा साधारण व्यवहार के लिए सहायक होती है, विशेषकर तब, जब उस भाषा का क्षेत्र किसी राजनीतिक, आर्थिक या ऐतिहासिक-सांस्कृतिक कारण या कारणों से महत्ता रखता है। हिन्दुस्तान की यह पुरातन भाषा-स्थिति तो संयुक्त राज्य के बिखरे हिन्दुस्तानी जन-समुदायों पर असर डाले बिना नहीं रह सकती। कोई बीस साल से आकाशवाणी का 'नई जिंदगी नया जीवन' वाला कार्यक्रम चल रहा है, जिसकी मिली-जुली भाषा खासी आम समझी जाती है। हिन्दी के और भी कार्यक्रम आकाशवाणी और दूरदर्शन के हैं। हिन्दी की फिल्में शहर-शहर में देखी जा सकती हैं, दूरदर्शन में भी प्रदर्शित होती हैं। साथ ही और भी एक नई बात है, जो ऊपरवाली बातों से शायद ज्यादा अहमियत रखती है। शिक्षा के क्षेत्र में भारत की भाषाएं पधार रही हैं। वयस्क-शिक्षा में हिन्दी के सबसे पहले कार्यक्रम आयोजित किए हुए दस साल हो चुके हैं। अब क्लासों की संख्या काफी हद तक बढ़ गई है। इस बात पर जोर देना है कि सबसे पहले ऐसे ही लोग इन क्लासों में आ बैठते हैं जिनका हिन्दुस्तान से कोई सम्बन्ध न था। हिन्दी के प्रति उनकी रुचि यहां बसे लोगों के सम्पर्क में आ जाने से या किसी-किसी दूसरे कारण से पैदा हो जाती थी। आज की स्थिति यहां तक बदली है कि वयस्क-शिक्षा में भारत के भी लोग आ जाते हैं, ऐसे जवान-जवान लोग जो इस देश में पलकर अपनी सांस्कृतिक विरासत से नाता बनाए रखना चाहते हैं। भाषा के साथ भारत का इतिहास भी चाव से पढ़ते हैं। अपनी परम्परागत संस्कृति का मनन-मूल्यांकन भी करते हैं। स्कूली शिक्षा वयस्क शिक्षा के पग-पग पर आगे बढ़ने लगी है। यह एक नई पौध-सी है। उस पौध से तो एक तिमुंही आशा रखी जा सकती है—शैक्षणिक, सामाजिक और सांस्कृतिक। मुझे पूरी आशा है कि समय के साथ इस देश के भारत के लोगों के बच्चे अंग्रेजी के साथ हिन्दी भी नियमित रूप से सार्वजनिक परीक्षाओं के स्तर पर पढ़ सकेंगे। उनके लिए कई विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ने का भी प्रबन्ध है। समय के साथ अंग्रेजी बच्चे भी कुछ हद तक स्कूलों में हिन्दी पढ़ने लगेंगे, इसका मुझे विश्वास है। यह शुभ स्थिति जैसे-जैसे यथार्थ हो जाएगी वैसे पुराने जमाने के उन अल्पसंख्यक अंग्रेजों का जीवन-कार्य एक प्रकार से फलीभूत होते देखा जाएगा, जिन्होंने पुश्तदर-पुश्त हिन्दी भाषा को सीखने में और साहित्य-संस्कृति को समझने में परिश्रम किया था। उनके प्रयत्नों की बदौलत हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन इस देश के विश्वविद्यालयों में काफी समय से हो रहा है। आने वाले पन्नों में इस प्रक्रिया के नवीनतम विकास की रूप-रेखा दी जाती है। हिन्दी-साहित्य के अध्ययन के विभिन्न क्षेत्रों में पदार्पण किया। उन लोगों की संख्या कम थी, लेकिन उनके उत्तराधिकारियों का सिलसिला बीसवीं शताब्दी में आगे चलकर अटूटा ही रहा। फिर भी कहना यही पड़ेगा कि इस जमाने में अधिकतर अंग्रेजों का ध्यान आधुनिक भाषाओं की उपयोगिता से कुछ हटकर दूसरे विषयों पर चला गया था। इसका नतीजा यह हुआ कि जिन अंग्रेज विद्यार्थियों की रुचि भारतीय भाषाओं और साहित्य की ओर गई उस काल में वे अधिकतर संस्कृत की ही ओर खिंच गए, न कि आधुनिक भाषाओं की ओर।

ऊपर का पलड़ा कब नीचे जाने वाला था ? द्वितीय महायुद्ध के बाद यह निश्चय कर लिया गया था कि भारतीय भाषाओं के ही नहीं, समस्त एशियाई भाषाओं के पढ़ने-पढ़ाने के प्रबन्ध में मौलिक परिवर्तन करने चाहिए। यह तो नया जमाना था। इस दूरदर्शी निश्चय के फलस्वरूप हिन्दी भाषा और साहित्य पढ़ने का एक त्रिवर्षीय या चतुर्वर्षीय अध्ययन-क्रम की व्यवस्था रखी गई। भारत की संस्कृति, साहित्य और भाषाएं तो विदेशी विद्यार्थी के लिए बिल्कुल नई अध्ययन-सामग्री है। इस बात पर ध्यान देकर यह समझा गया था कि विदेशी विद्यार्थी सिर्फ कई साल का ही एक अध्ययन-क्रम पूरा करने के बाद इन विषयों पर काबू पा सकेगा। साथ ही एक दूसरी बात भी सोचने की थी। विद्यार्थियों को भारत के जीवन के अलग-अलग पहलुओं से परिचित करा देना था, ऐतिहासिक, सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था इत्यादि। ऐसे विषयों को पढ़ने से उन्हें भाषा और साहित्य के अध्ययन के लिए एक ठोस नींव बन जाए। (उल्टी तरफ यह भी

कहा जा सकता है कि कोई भी विद्यार्थी किसी अज्ञात संस्कृति में तभी बैठ सकेगा, जब उसने भाषा या भाषाओं का अध्ययन कर लिया है) इस बहुरूपी अध्ययन-ढांचे का नाम पश्चिमी देशों में 'क्षेत्रोन्मुख', रखा जाता है। इस अध्ययन में भाषाविज्ञान का समुचित स्थान है। किसी भाषा की बनावट के समझने में भाषा-विज्ञान का ज्ञान कितना उपयोगी हो सकता है, यह अच्छी तरह समझा था। उपर्युक्त दोमुखी दृष्टिकोण के अनुसार ही हिन्दी का अध्ययन ब्रिटेन के विश्वविद्यालयों में व्यवस्थित हो गया है, सबसे पहले लंदन के प्राच्य-संस्थान में जहां भारत के अध्ययन के लिए क्षेत्रोन्मुख पृष्ठभूमि की सामग्री की व्यवस्था उसी एक संस्थान में मिलती है, और बाद में कैंब्रिज में (जहां प्राच्य भाषाओं और साहित्य के अध्ययन प्राच्य विद्या के ही संकाय में किए जाते हैं) और यार्क में (जहां हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन अधिकतर भाषा-विज्ञान के ही सम्बन्ध में विकसित हुआ है)।

चूंकि यूरोपीय विद्यार्थियों को हिन्दी का अध्ययन आरम्भिक स्तर से ही शुरू करना है, इसलिए उसमें उनका जल्दी ही बढ़ना जरूरी है, ताकि वे वहां तक पहुंचे जहां साहित्य के पढ़ने से पूरा लाभ उठा सकते हैं। पढ़ाने वाले का कार्य यदि एक ओर विद्यार्थियों के सामने एक विविधता-भरी साहित्य-सामग्री रखना है, तो दूसरी ओर उसे यही देखना है कि हिन्दी बोलने में भी विद्यार्थी तरक्की करते रहें, नहीं तो पढ़ने में भी प्रगति कम ही करेंगे। हिन्दी भाषा पढ़ाने की एक तो दो-तरफ प्रक्रिया अधिक-तर यहां अपना ली गई है, जिसमें एक तो नवीनतम अध्यापन-साधनों का भाषा-प्रयोगशाला, यांत्रिक उपकरणों का प्रयोग किया जाता है, साथ ही पढ़ने वाले का ध्यान शुरू से ही लिपि और व्याकरण दोनों पर आकृष्ट किया जाता है।

अपने कोर्स के हर वर्ष में विद्यार्थी हिन्दी बोलने का अभ्यास, अनुवाद या निबन्ध लिखने का अभ्यास करते हैं। साहित्य का अध्ययन पहले वर्ष के दूसरे वर्ष से शुरू होता है। पहले वर्ष में प्रेमचन्द की और आज के दूसरे लेखकों की कई कहानियां पढ़ी जाती हैं। आगे चलकर विद्यार्थी दूसरे और तीसरे वर्षों में अज्ञेय की, महादेवी वर्मा की, नागार्जुन की, और हरिश्चन्द्र की कोई-कोई गद्य-रचना और नई पीढ़ी के कई गद्य-लेखकों की भी कृतियां पढ़ते हैं। साथ ही उन्हें छायावादी कवियों से भी परिचय हो जाता है। मध्यकालीन साहित्य के क्षेत्र में तुलसीदास, सूरदास, नन्ददास और कबीर के उद्धत अंशों का खास अध्ययन किया जाता है। दूसरे कवियों के साहित्य का भी यथा संभव अध्ययन किया जाता है। हम ऐसे दो-तरफा पाठ्यक्रम से, गहन अध्ययन और विस्तृत अध्ययन की ऐसी मिलावट करने से आशा करते हैं कि हमारे विद्यार्थी हिन्दी के साहित्य के विविध पहलुओं से यथारुचि लाभ उठाएंगे।

पिछले दशकों में हिन्दी सम्बन्धी कई प्रकार के शोध-कार्य ब्रिटेन में हुए हैं। हिन्दी सिखाने के व्यावहारिक क्षेत्र में और हिन्दी के व्याकरण के अध्ययन के क्षेत्र में कार्य हो भी रहे हैं और प्रकाशित भी हुए हैं। भाषा विज्ञान में वर्णनात्मक और रूपांतरणपरक दोनों प्रकार के कई अध्ययन हुए हैं। दूसरा कार्य-क्षेत्र असंपादित पांडु-लिपियों को संपादित करने का रहा है। हिन्दी साहित्य की कई रचनाएं अनुवाद के और साहित्यिक-सांस्कृतिक टिप्पणी के विषय बन गई हैं और और बन रही हैं। मध्यकाल के साहित्य और उन्नीसवीं शताब्दी के साहित्य की रूपरेखाएं तैयार की गई हैं। कोश-कार्य हो रहा है। आधुनिक साहित्य के कई पहलुओं पर लेख लिखे गए हैं। आशा है कि प्रबन्ध शोध-भवन के पत्थर भी बनेंगे और विद्यार्थियों का काम सुलझाने की औजारें भी होंगे। हिन्दी की पढ़ाई में विदेशी विद्यार्थी के सामने बहुत सी कठि-नाइयां होती है — भाषा की, अलग-अलग शैलियों की, विभाषाओं की अज्ञात सांस्कृतिक विशेषताओं की। हर नए पाठ की अपनी अपनी नई कठिनाइयां अक्सर होती है। विदेशी विद्यार्थी को कभी-कभी महसूस भी होता है कि भगीरथ परिश्रम करने पर भी कभी कठिनाइयां को पार न कर पाऊंगा। अब स्कूली विद्यार्थियों की भी बात है। हिन्दी के सब पढ़ानेवालों के सामने यह कर्तव्य है कि वे विद्यार्थियों के काम की उपयुक्त सामग्री तैयार करते जाएं ताकि विद्यार्थी के 'संकट' काल में हर विषय के लिए सुलभ सहायता मिल सके।

आखिर में मैं एक और बात पर जोर देना चाहता हूं। विदेशी विद्यार्थी यह जानकर प्रायः आश्चर्यचकित ही रह जाता है कि आज का हिन्दी साहित्य आबदार चमकीले जवाहरातों से ठूंस-ठूंसकर भरा एक ख़जाना है। इस साहित्य में भारतीय तत्व इतने साफ़ सामने आ जाएंगे, वह वहां तक ओजपूर्ण और लाभदायक भी होगा। इन सब बातों पर अक्सर पहले से अनुमान ही नहीं होता। ऐसी बातों पर अगर शिक्षितों के दायरे में ध्यान खींचा जा सके; तो नतीजा यही होगा कि हिन्दी के साहित्य के अध्ययन के प्रति संयुक्त राज्य की अंग्रेजी और भारतीय दोनों आबादियों का चाव और उनकी रुचि सुसामयिक प्रकार से बढ़ जाएगी। आशा है कि जिस-जिस ओर से इस शुभ विकास के लिए जितनी प्रेरणा और सहायता मिल सकती है, मिलेगी। □□□

विश्व भाषा के रूप में हिन्दी

—प्रो० येगेनी चेलीशैव

सोवियत संघ में हिन्दी भाषा और साहित्य के अध्ययन के अन्तर्गत हमारे विद्यालयों में इस भाषा का अध्यापन तथा हिन्दी साहित्य के रूसी और सोवियत संघ की अन्य भाषाओं में अनुवाद से संबंधित विशाल कार्य सर्वविदित है ।

हम हिन्दी भाषा का अध्ययन करते हुए, समसामयिक भारत में इसके कार्य की, अन्य भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी के साथ इसकी क्रिया की समस्या का अध्ययन करते हुए इन सब प्रश्नों की तुलना अपने देश में भाषाओं के विकास के प्रश्नों से करने की निश्चित चेष्टा करते हैं ।

सोवियत संघ और भारत की भाषा स्थिति में समस्त अंतर के बावजूद कुछ समानताएं भी हैं, जो हमारे दोनों देशों के बहुभाषी स्वरूप द्वारा निर्धारित हैं । दोनों देशों में मिलती-जुलती भाषायी समस्याओं में से कुछ ये हैं :—

जातीय भाषाओं के विकास की समस्या, उनकी क्रिया तथा परस्पर समृद्धि की समस्या, संपर्क भाषा की, अंतर-जातीय व्यवहार की भाषा की समस्या, द्विभाषीयता की समस्या इत्यादि ।

यह समानता इंगित करते हुए सोवियत विद्वान भारत की भाषा-स्थिति के विश्लेषण में हमारे देश सोवियत-रूस में भाषा-समस्या का जो हल ढूंढा गया है, उसका उपयोग करने का प्रयत्न करते हैं। 1972 में मास्को में प्रकाशित डॉ० व० इ० कल्यूयेव की "स्वतंत्र भारत की जातीय-भाषायी समस्याएं" नामक पुस्तक में भारत में भाषा-स्थिति के विश्लेषण का तथा राष्ट्र-भाषा होने के नाते हिन्दी का स्वरूप निर्धारित करने का सबसे सफल और सुयोग्य प्रयत्न किया गया है। 1981 में इस पुस्तक का अंग्रेजी अनुवाद हुआ । वैसे यहां यह स्पष्ट कर देना चाहिये कि यह पुस्तक तथा हमारे अन्य शोधकार्य, इस समस्या को समर्पित अनेक भारतीय विद्वानों की रचनाओं की ही भांति, समस्या के कुछ पहलुओं पर प्रकाश अवश्य डालते हैं, लेकिन ये अब आधुनिक भारत में हिन्दी भाषा के स्थान और भूमिका को लेकर चल रहे वाद-विवाद को समाप्त नहीं कर सकते ।

सामाजिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से यह एक सबसे जटिल समस्या है, "भाषा और समाज" के सहसंबंध की एक सबसे कठिन कड़ी है ।

प्रत्यक्षतः इस समस्या पर सभी विद्वान बहुत समय तक अनुसंधान करते रहेंगे । उनके बीच विवाद होते रहेंगे । हमारे विचार में इस समस्या के हल की सैद्धान्तिक और व्यावहारिक खोज में निम्न दिशाएं सर्वाधिक फलप्रद हैं ।

(क) हिन्दी को भारत के जनगणना के लिए अंतरजातीय सम्पर्क की भाषा बनाने, देश की अहिन्दी भाषी जनता के लिए इसे दूसरी मातृभाषा बनाने के रास्ते खोजने की समस्या नितांत महत्वपूर्ण है ।

हमारे विचार में, इस प्रश्न के हल के लिए भारत के राजकीय निकायों द्वारा उठाये जा रहे कदमों के साथ-साथ हिन्दी भाषा के प्रचार में, देश के सभी राज्यों में स्वेच्छा से इसे दूसरी मातृभाषा के रूप में स्वीकार किये जाने की परिस्थितियां बनाने में, उच्च शिक्षा प्रणाली में, विज्ञान और तकनीक में तथा देश के सांस्कृतिक और सामाजिक, राजनीतिक जीवन के सभी क्षेत्रों में इसका उपयोग कराने में भारतीय जनमत के व्यापक हलकों की भूमिका बहुत बढ़नी चाहिए ।

(ख) हिन्दी के प्रयोग को इतना व्यापक बनाने की समस्या कि एक देश की संपर्क की भाषा से बढ़ कर यह अंतर-राष्ट्रीय, अखिल विश्व संपर्क के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त होने लगे । दूसरे शब्दों में इसे एक "विश्व-भाषा" बनाने की समस्या, तभी हल हो सकती है जब यह अपने देश में उचित स्थान पा लेगी । हिन्दी को विश्व भाषा बनाने के इस जटिल और महत्वपूर्ण कार्य में सामाजिक, राजनीतिक कारकों के साथ साथ भाषा वैज्ञानिक कारकों को भी ध्यान में रखना चाहिये । पहले कारक इस बात से संबद्ध हैं कि जिन लोगों की यह भाषा है, उनका भारत के इतिहास में, सारी मानवजाति के इतिहास में क्या स्थान है और समसामयिक विश्व में इन लोगों की इस जनगण की क्या भूमिका है । हमें इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि समसामयिक विश्व में बढ़ती सकारात्मक भूमिका अदा कर रहे महान एशियाई देश की एक सर्वाधिक विकसित और सर्वाधिक प्रचलित भाषा हिंदी "विश्व भाषा" बननी चाहिये, कि इसे संयुक्त राष्ट्र संघ की अधिकृत भाषा के रूप में स्वीकृति मिलनी चाहिए। 1975 में नागपुर में हुए पथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में हमने यही बात कही थी ।

इस सामाजिक राजनीतिक कारकों के साथ-साथ भाषा वैज्ञानिक कारक भी हैं, जो हिन्दी को विश्व-भाषा" का स्थान

पाने का अधिकारी बनाते हैं। इसका शब्द-भंडार और विशेष पारिभाषिक शब्दावली विकसित है जिसमें भारत में तथा सारे संसार में विज्ञान और संस्कृति की उपलब्धियों को अभिव्यक्त करने की क्षमता है। इसके मुहावरों का भंडार विपुल है, इस में लिखित साहित्य की परंपरा समृद्ध है, जो 12वीं सदी में चंद बरदाई से शुरू होती है, जिसे तुलसीदास और सूरदास, भारतेंदु हरिश्चन्द, प्रेमचन्द, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, निरला और पंत जैसी महान विभूतियों ने सदियों के दौरान संजोया-संवारा है। भारत के अनेक विलक्षण विद्वानों और महान नेताओं की भाषा हिन्दी थी और आज भी है। महात्मा गांधी और नेहरूजी ने हिन्दी या सरल हिन्दुस्तानी राष्ट्रभाषा बनाने का सदा समर्थन किया।

हिन्दी भाषा ने अपनी विभिन्न बोलियों में विकसित होते हुए, अपने साहित्यिक रूप को समृद्ध बनाने में बहुत बड़ी भूमिका अदा की है, इसने अपने सारे इतिहास के दौरान रूप-प्रक्रिया और शब्द-भंडार में स्थायित्व बनाये रखा है। इसका शब्द-भंडार महान प्राचीन भारतीय संस्कृति की भाषा संस्कृत से सीधे संबंधित है और इससे अन्य समृद्ध भाषाओं के शब्दों, मुहावरों और अभिव्यक्तियों को भी, जो बहुत लम्बी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक परम्पराओं को प्रतिबिम्बित करते हैं, अपने में समा लिया है।

(ग) हमारे विचार में, हिन्दी को 'विश्व भाषा' बनाने के हित में हिन्दी भाषा और साहित्य के क्षेत्र में काम कर रहे विभिन्न देशों के विद्वानों, लेखकों, अध्यापकों, अनुवादकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं के प्रयासों को एक जुट करना उचित होगा। इस उद्देश्य से हिन्दी भाषा और साहित्य का अंतर्राष्ट्रीय संघ स्थापित किया जाना चाहिए, जैसे कि रूसी भाषा और साहित्य के अध्यापकों का अंतर्राष्ट्रीय संघ तथा अंतर्राष्ट्रीय संस्कृत संघ है।

भारत और विदेशों में हिन्दी के प्रचार और प्रसार की दृष्टि से ऐसा करना बहुत उचित होगा कि प्रमुख हिन्दी साहित्यकारों और विद्वानों के नाम पर ऐसे भारतीय और विदेशी विशेषज्ञों को पुरस्कार दिये जायें, जो हिन्दी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं। उदाहरणार्थ —हिन्दी भाषा के अध्ययन के लिए श्यामसुन्दर दास, हिन्दी साहित्य के विवेचन के लिए रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी पत्रकारिता के लिये महावीर प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी गद्य के विकास के लिये प्रेमचन्द इत्यादि के नामों पर पुरस्कार दिये जा सकते हैं। इसी प्रकार भारत और विदेशों में हिन्दी के सुविख्यात लेखकों और कवियों जैसे प्रेमचन्द, निराला, पंत, मुक्तिबोध, यशपाल आदि के साहित्य का गहन अध्ययन करने वाले भारतीय और विदेशी अध्येताओं को प्रोत्साहित किया जा सकता है। हमारे देश में इसी प्रकार के पुरस्कार (पुश्कीन, चेरनीशेवस्की, दोवरोल्यबोव, हमजर इत्यादि) दिये जाते हैं।

हम सच्चे हृदय से यह कामना करते हैं कि भारत में हिन्दी तथा अन्य भाषाओं का विकास करने तथा दूसरे देशों में उनका प्रचार करने के लिए कार्यरत सभी लोगों के प्रयास सफल हों, कि भारत की एक सर्वाधिक विकसित, सर्वाधिक प्रचलित भाषा के नाते हिन्दी अपने देश के सामाजिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक जीवन में तथा अंतर्राष्ट्रीय मंच पर शीघ्रातिशीघ्र अपने लिए उचित स्थान पा ले।

स्वयं अपनी ओर से तथा सोवियत संघ में हिन्दी भाषा और साहित्य के सभी अध्येताओं की ओर से, सोवियत संघ में हिन्दी साहित्य के बहुसंख्य पाठकों की ओर से उन सब लोगों के लिए नई-नई सफलताओं की कामना करता हूं, जो भारत में हिन्दी भाषा का अध्ययन और प्रचार कर रहे हैं, हिन्दी में लिखने वाले सभी साहित्यकारों और भाषाविदों की सफलता की कामना भी करता हूं कि शांति एवं प्रगति के उच्च आदर्शों के हित में हिन्दी भाषा की प्रगति हो, हिन्दी साहित्य फले-फूले। □□□

"चाहे हिन्दी भाषी क्षेत्र हो या अहिन्दी, राजभाषा के प्रयोग-प्रसार में एक ही समस्या अधिक आड़े आती है, और मुझे दुःख के साथ कहना पड़ता है कि वह है, अधिकारियों की उदासीनता। अधिकारी तो अपने विभाग का नेता होता है। सफल नेतृत्व उसकी कसौटी है। इसलिए हमारे अधिकारी हिन्दी में काम करना शुरू करें तो कर्मचारी कब तक पीछे रहेंगे।"

—श्री केदार पाण्डेय

विश्व की हिन्दी पत्र-पत्रिकाएं

—डा० कामता कमलेश

विगत कुछ वर्षों से हिन्दी का वैश्विक मंच विशाल से विशालतर होता जा रहा है। राष्ट्र संघ में हिन्दी की स्थापना का प्रयास, विश्व हिन्दी सम्मेलनों का आयोजन आदि ऐसी घटनाएं हैं जिनसे हिन्दी की क्षमता का सहज ही ज्ञान हो जाता है। अब हिन्दी एकदेशीय नहीं अपितु बहुदेशीय भाषा का रूप ले चुकी है। यही क्या, बोलने वालों की दृष्टि से भी हिन्दी संसार की चतुर्थ बड़ी भाषा है। इस समय भारत से बाहर शताधिक विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में हिन्दी का पठन-पाठन इस बात का द्योतक है कि हिन्दी मात्र साहित्य की चीज नहीं वरन वह हृदयों को जोड़ने वाली ऊर्जा भी है और प्रेम की गंगा भी। वर्तमान समय में विदेशों में हिन्दी का लेखन एवं प्रचार-प्रसार प्रायः दो रूपों में हो रहा है। प्रथम के अंतर्गत वे देश आते है जहाँ के लोग हिन्दी को एक 'विश्व भाषा' के रूप में 'स्वांतः सुखाय' सीखते, पढ़ते-पढ़ाते है। इसके अंतर्गत रूस, अमेरिका, कनाडा, इंग्लैंड, जर्मनी, इटली, बेल्जियम फ्रांस, चैकोस्लोवाकिया, रूमानिया, चीन जापान, नार्वे, स्वीडन, पोलैंड, आस्ट्रेलिया, मौरिसको आदि देश आते हैं। दूसरे के अंतर्गत वे देश आते हैं जहां भारत से जाने वाले प्रवासी भारतीय और भारतवंशी लोग बड़ी संख्या में निवास करते हैं जिनकी मातृ-भाषा हिन्दी रही जो कि आजकल मारिशस, फिजी, गुयाना, सूरीनाम, कीनिया, ट्रिनीडाड-टुबैगो, बर्मा, थाईलैंड, नेपाल, श्रीलंका, मलयेशिया, दक्षिणी अफ्रीका आदि देशों में रह रहे हैं। इन्हें हिन्दी अपनी पैतृक संपत्ति के रूप में मिली। इन दोनों प्रकार के देशों में हिन्दी का रचना-संसार बहुत ही विपुल एवं समृद्ध है।

भाषा और साहित्य की कोई भौगालिक सीमा नहीं होती इसलिए हिन्दी भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को लक्ष्य करके प्रसारित हो रही है। विश्व की इस महान भाषा के विकास के लिए विभिन्न भारतेतर देशों में संचार साधन के रूप में आकाशवाणी, दूरदर्शन के साथ-साथ पत्र पत्रिकाओं का खुलकर सहयोग लिया जा रहा है।

मॉरिशस

(हिन्द) महासागर में अवस्थित मॉरिशस ही वह पहला देश है, जहां सर्वप्रथम दिसम्बर 1834 में प्रवासी भारतीयों के चरण पड़े थे। अन्य देशों में, विनीडाड 1845, द० अफ्रीका नवंबर 1860, गुयाना 1870, सूरीनाम जून 1873, फीजी मई, 1879 में भारतीय मजदूर पहुंचे थे। मॉरिशस ही वह प्रथम भारतेतर देश है जहाँ विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन हुआ और राष्ट्र संघ में हिन्दी को स्थान दिलाने का प्रस्ताव भी सर्वप्रथम इसी ने ही रखा था। अतः विश्व हिन्दी साहित्य में मॉरिशस का अपना विशिष्ट स्थान बन गया है। इस समय वहां भावयित्री एवं कारयित्री दोनों प्रतिभाएं एक साथ कार्यरत हैं। हिन्दी पत्रकारिता की दृष्टि से मॉरिशस में सर्वप्रथम 15 मार्च, 1909 को 'हिन्दुस्तानी' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह पत्र हिन्दी, अंग्रेज़ी तथा गुजराती में एक साथ प्रकाशित होता था। इसके प्रथम संपादक डॉ० मणिलाल थे। इस पत्र के माध्यम से ही वहाँ के लोगों में सामाजिक, राजनीतिक चेतना का उदय होने के साथ-साथ

निज भाषा उन्नति अहै, निज उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के, मिटै न हिये को सूल॥

का भी अनुभव किया लेकिन डॉ० मणिलाल के भारत आने के बाद ही इस पत्र का प्रकाशन बंद हो गया। सन् 1910 में डॉ० मणिलाल ने वहां आर्य समाज की स्थापना की और एक प्रेस भी खोला। यहीं से सन 1911 में 'मॉरिशस आर्य पत्रिका' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह एक साप्ताहिक पत्र था। पहले यह पत्र आर्य सभा के पदाधिकारियों की देख-रेख में चला। फिर सन् 1916 में पं० काशीनाथ किष्टो इसके संपादक बने जिन्होंने बड़ी लगन और निष्ठा से इसे कई वर्षों तक जीवित रखा। इसमें आर्य समाज की शिक्षा के साथ साथ वैदिक धर्म को ही प्रधान स्थान मिलता था। इसी वर्ष श्री रामलाल के संपादन में 'ओरिंटल गजेट' नाम का एक और पत्र प्रकाशित हुआ। इसमें भारतीयों के बारे में प्रचुर सामग्री छपती थी। सन 1920 में इंडो-मारिशस संघ के तत्वावधान में 'मॉरिशस इंडियन टाइम्स' का प्रकाशन हुआ 1924 में श्री गजाधर राजकुमार के संपादन में 'मारिशसमित्र' नाम का एक पत्र निकला जिसमें अधिकतर सामाजिक सुधार तथा भातृत्व भावना के लेख, छपते थे। फिर सन 1929 में 'आर्य वीर' नाम का एक द्विभाषिक पत्र निकला। यह एक साप्ताहिक पत्र था जिसके प्रथम संपादक पं० काशीनाथ किष्टो ही हुए। इसमें आर्य समाज के विचारों का बाहुल्य रहता था।

सन् 1933 में सनातन धर्मावलंबियों में श्री रामसामी नरसीमुलु (नरसिंह दास) के संपादन में 'सनातन

धर्मांक' पत्र निकला। जिसने हिन्दू धर्म और रीति रिवाजों पर विपुल सामग्री दी जाती थी यह एक द्विमासिक पत्र था। मारिशस के भारतवंशियों में सांस्कृतिक चेतना जाग्रत करने के उद्देश्य से सन् 1936 में 'इंडियन कल्चरल एसोसिएसन' की स्थापना हुई। इस संस्था ने 'इंडियन कल्चरल रिव्यू' नाम का एक पत्र निकाला जिसके प्रथम संपादक थे डॉ० के० हजारीसिंह, जो मोका स्थित महात्मा गांधी संस्थान के वर्तमान निदेशक हैं। इसी संस्थान में द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन का आयोजन सन् 1976 में हुआ था। सन् 1936 में रिव्यू के एक पूरक हिंदी पत्र 'वसंत' का प्रकाशन हुआ जिसके संपादक थे पं० गिरजानन उमाशंकर। कुछ वर्ष प्रकाशित होने के बाद यह पत्र बंद हो गया। पांच वर्ष पूर्व वसंत का पुनर्जन्म हुआ और इसके वर्तमान संपादक है, मारिशस के प्रसिद्ध लेखक श्री अभिमन्यु अनत। यह एक मासिक पत्र है तथा महात्मा गांधी संस्थान के तत्वावधान में प्रकाशित हो रहा है। यह पूर्ण साहित्यक धारा का पत्र है। इसमें नवोदित रचनाकारों को अधिक स्थान मिलता है। इसका कहानी विशेषांक काफी ख्याति अर्जित कर चुका है। विदेशी हिन्दी पत्र में वसंत का स्थान सर्वोपरि माना जा सकता है तथा इसका स्तर भी भारतीय श्रेष्ठ पत्रों के समान ही है।

सन् 1942 में पब्लिक रिलेशंस आफिस से 'मासिक चिट्ठी' नाम से एक लघु पत्र निकला जो सूचनात्मक अधिक था। सन् 1945 में 'आर्यवीर–जागृति' नाम से एक दैनिक पत्र निकला जिसके संपादक थे प्रो० विष्णुदयाल वासुदेव। इसने भी पर्याप्त ख्याति अर्जित की थी किंतु कुछ वर्षों के बाद इसे बंद होना पड़ा। सन् 1948 में 'जनता' पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इसके प्रथम संपादक हुए श्री जयनारायण राय। इसमें साहित्यिक और हिन्दी के लिए समर्पित भाव को स्थान मिला। बाद में इसको कुछ समय के लिए बंद होना पड़ा परन्तु पुनः सन् 1974 से इसका पुनर्प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस समय 'जनता' मारिशस का सर्वश्रेष्ठ साप्ताहिक माना जाता है तथा इसके वर्तमान संपादक हैं श्री राजेंद्र अरुण। द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन में के समय इसने हिन्दी प्रचार-प्रसार के लिए उत्कृष्टतम भूमिका निभाई थी। सन् 1984 में ही एक और पत्र 'जमाना' श्री विष्णुदयाल बंधु के संपादन में निकला। यह मारिशस के हिन्दी लेखकों का सहयोगी पत्र था और इसमें अधिकतर हिन्दी की रचनाओं को स्थान दिया जाता था। अब यह पत्र कभी-कभार ही निकल पाता है। इसके उपरांत आर्य सभा मारिशस ने पुनः 'आर्योदय' नाम का एक और पत्र निकाला। यह पत्र आज भी वैदिक धर्म और हिन्दी की सेवा बड़ी निष्ठा से कर रहा है। सन् 1953 में मारिशस आमाल गामटेड के तत्वाधान में 'मजदूर' का प्रकाशन हुआ जिसमें प्रवासी भारतीयों के समाचारों को प्रमुखता से छापा जाता था। सन् 1959 में श्री भगतसुरज मंगर और श्री रामलाल विक्रम के संपादन में 'नवजीवन' का प्रकाशन हुआ। फिर सन् 1960 में मारिशस हिन्दी परिषद् का त्रैमासिक पत्र 'अनुराग' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इस पत्रिका को संपूर्ण मारिशसीय हिन्दी लेखकों का सहयोग प्राप्त था। इसके प्रथम संपादक थे पं० दौलत शर्मा। इसमें कविता, कहानी नाटक, संस्मरण, भेंटवार्ता तथा निबंध को भरपूर स्थान दिया जाता है। यह पत्र इस समय मारिशस का एकमात्र त्रैमासिक साहित्यिक पत्र है। संप्रति इसके संपादक हैं मारिशस के सर्वश्रेष्ठ हिन्दी कवि और लेखक श्री सोमदत्त बखौरी। इसी वर्ष 'समाजवाद' पत्र का भी प्रकाशन हुआ जो थोड़े दिनों पश्चात् बंद हो गया। हिन्दु मारिशस कांग्रेस ने 'कांग्रेसनाम' से तथा प्रशिक्षण महाविद्यालय ने 'प्रकाश' नाम से सन् 1964 में अपने अपने पत्र निकाले। प्रकाशन में वहाँ के प्रशिक्षणार्थियों की रचनाओं का बाहुल्य होता है। यह पत्र अब भी वार्षिक अंक के रूप में प्रकाशित हो जाता है। प्रो० रामप्रकाश इसके संपादक हैं। सन् 1965 में मारिशस में सर्वप्रथम एक बाल पत्रिका का प्रकाशन हुआ जिसका नाम था 'बाल–सखा'। यह पत्रिका हिन्दी लेखक संघ के तत्वावधान में प्रकाशित हुई।

सन् 1970 में मारिशस के प्रसिद्ध आर्य नेता श्री मोहन लाल मोहित के संपादन में आर्य समाज का हीरक जयंती विशेषांक प्रकाशित हुआ तथा सन् 1973 में 'वैदिक जरनल' का प्रकाशन इन दोनों पत्रों का संकल्प हिन्दी भाषा को सुदृढ़ बनाना था। सन् 1974 में त्रियोले से 'आभा' तथा 'दर्पण' नाम के दो विशुद्ध साहित्यिक पत्र निकले। ये मासिक पत्र थे। 'आभा' के संपादक हैं मारिशस के उदीयमान कवि तथा कहानीकार श्री महेश रामजियवन। 'आभा' का कहानी विशेषांक पाठकों में काफी चर्चित रह चुका है। इसी के साथ द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन में स्वागताध्यक्ष श्री दयानंद दलाल वसंतराय के संपादन में 'शिवरात्रि' वार्षिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह पत्र आज भी अपनी गरिमा और गौरवमयी परम्परा के साथ प्रकाशित होता है। इसमें भी हिन्दी साहित्य को प्रचुर स्थान दिया जाता है। तथा संस्कृत शिक्षा के लिए भी कभी-कभार अच्छे लेख प्रकाशित होते हैं। सन् 1975 में हिन्दी सरस्वती संघ, त्रियोले की त्रैमासिक पत्रिका 'रणभेरी' का प्रकाशन प्रारंभ हुआ जिसमें वहां के हिन्दी रचनाकारों को विशेष रूप से प्रोत्साहन देने का संकल्प है। इस प्रकार मारिशस में हिन्दी पत्रों की एक लंबी पृष्ठ श्रृंखला समय के साथ निरंतर बढ़ती जा रही है जो कि विश्व हिन्दी साहित्य के लिए एक शुभ लक्षण है।

फिजी

प्रशांत महासागर के मोती फिजी में भी भारतीय श्रमिक कुली के रूप में लाए गए थे। वे अपनी लगन, निष्ठा और ईमानदारी से हिन्दी का अलख जगाए हुए हैं। यह संसार में दूसरा विदेशी राष्ट्र है जहां हिन्दी का बाहुल्य है। फिजी में सर्वप्रथम सन् 1913 में पं० शिवदत् शर्मा की देखरेख

में डॉ० मणिलाल द्वारा संपादित पत्र 'सेटलर' का हिन्दी अनुवाद साइक्लोस्टाइल रूप में प्रकाशित हुआ था। इसका लोगों ने भरपूर स्वागत किया। फिर सन् 1923 में 'फिजी समाचार' का प्रकाशन हुआ। यह साप्ताहिक पत्र था इसके प्रथम संपादक थे श्री बाबूराम सिंह और अंतिम श्री चंद्रदेव सिंह। यह पत्र कुछ वर्षों तक प्रकाशित हो कर बंद हो गया। इसी समय 'भारत पुत्र' 'बुद्धि' तथा 'बुद्धिवाणी' आदि पत्रों का प्रकाशन हुआ जो अधिक दिन तक न चल सके और शीघ्र ही इतिहास की एक घटना बन कर रह गए। सन् 1930–40 के मध्य दो मासिक पत्र और निकले, एक पं० श्रीकृष्ण शर्मा के संपादन में 'वैदिक संदेश' तथा दूसरा 'सनातन धर्म'। किंतु दोनों पत्र पारस्परिक आलोचना–प्रत्यालोचना के शिकार हुए और अकाल ही काल कवलित हो गए।

सन् 1935 में 'शांतिदूत' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। पं० गुरुदयाल शर्मा इसके संस्थापक-संपादक थे। अब श्री जगनारायण शर्मा संपादक तथा श्रीमती निर्मला पथिक सह-संपादिका हैं। यह फिजी का सर्वाधिक प्रसार वाला हिन्दी पत्र है तथा फिजी टाइम्स समूह प्रकाशन से संबंधित है। इसमें साहित्यिक, राजनीतिक विषयों पर भरपूर सामग्री रहती है। इसका प्रकाशन स्तर भारतीय पत्रों के समान ही है। सन् 1940 के आस पास फिजी कई हिन्दी पत्र उदित हुए, जैसे पं० बी० डी० लक्ष्मण के संपादन में 'किसान' अखिल फिजी कृषक महासंघ के तत्वावधान में 'दीनबंधु' श्री ज्ञानीदास के संपादन में 'ज्ञान' और 'तारा', आर्य पुस्तकालय के अंतर्गत 'पुस्तकालय', श्री काशीराम कुमुद के संपादन में 'प्रवासिनी' तथा श्री राम खेलावन के संपादन में 'प्रकाश' आदि। इन सभी पत्रों में हिन्दी लेखन और साहित्य के अलावा फिजी में प्रवासी भारतीयों की दशा का भी चित्रण होता था। ये सभी पत्र अधिक दिन तक 'प्रकाशित' न रह सके और एक-एक कर सभी बंद हो गए। फिर भी फिजी में हिन्दी पत्रकारिता में इनका योगदान सराहनीय रहा। इसी प्रकार 'जंजाल' 'सनातन प्रकाश' और 'मजदूर' पत्र भी हैं जो दो-चार अंकों के बाद अपने अस्तित्व की रक्षा न कर सके।

इसके बाद पं० राघवानंद शर्मा के कुशल संपादन में 'जागृति' पत्र का प्रकाशन हुआ जिसने काफी लोकप्रियता प्राप्त की। पहले यह पत्र अर्द्ध-साप्ताहिक था। कालांतर में साप्ताहिक हो गया। इसमें किसानों से संबंधित समाचार अधिक रहते थे। कुछ वर्ष पहले ही इसका प्रकाशन बंद हुआ है। सन् 1953 में 'आवाज' नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकला जिसमें राजनीतिक चेतना के स्वर अधिक थे। श्री ज्ञानदास के संपादन में 'झंकार' साप्ताहिक का प्रकाशन भी हुआ। इसका प्रकाशन बड़े उत्साह के साथ हुआ। इसमें सिने-समाचारों का बाहुल्य होने से इसे शीघ्र ही लोकप्रियता मिली, पर सन् 1958 में इसका प्रकाशन बंद हो गया।

सन् 1960 में 'जय फिजी' पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। इसके संपादक हैं पं० कमलाप्रसाद मिश्रा। यह फिजी का अति लोकप्रिय पत्र है तथा साप्ताहिक रूप में अब प्रकाशित हो रहा है। इसका मुद्रण फोटो सैट विधि से होता है। इस पत्र के संपादक पं० कमलाप्रसाद मिश्र की हिन्दी सेवा और उनका फिजी में हिन्दी पत्रकारिता में योगदान के आधार पर भारत सरकार ने उन्हें 'विदेशी हिन्दी सेवी' पुरस्कार से भी पुरस्कृत किया है। स्वं श्री नंदकिशोर के संपादन में 'किसान मित्र' श्री वेणीलाल मौरिस के संपादन में 'फिजी संदेश' का भी प्रकाशन हुआ। इन में स्थानीय लेखकों को बहुत प्रोत्साहन मिलता था फिर भी ये अधिक लोकप्रिय नहीं हुए और बंद हो गए। सन् 1974 में पं० विवेकानंद शर्मा के कुशल संपादन में 'सनातन संदेश, का प्रकाशन हुआ यह मासिक पत्र था। यह फिजी की सनातन धर्म सभा का प्रमुख पत्र था। श्री शर्मा के अनथक प्रयासों के बाद भी इसका प्रकाशन अधिक वर्षों तक न हो सका। इसके अतिरिक्त 1926 में 'राजदूत' पत्र का राजकीय प्रकाशन हुआ। जिसमें राजकीय बातों को ही अधिक प्रश्रय दिया जाता था इसी प्रकार 'विजय' के भी कुछ अंक निकले, पर विजय भी अपनी रक्षा न कर सका और समय के हाथों पराजय को प्राप्त हुआ। फिजी से सूचना मंत्रालय द्वारा 'फिजी वृतांत' और 'शंख' के भी प्रकाशन हुए जिनमें वहां के जन-जीवन को चर्चा, प्रधान होती थी। इस प्रकार विश्व हिन्दी पत्रकारिता में फिजी के हिन्दी पत्रों का अविरल धारा अनवरत चली आ रही है।

सूरीनाम

दक्षिणी अमेरिका स्थित सूरीनाम एक ऐसा राष्ट्र है जो कभी भारतीय मजदूरों के लिए श्रीराम देश था। यहां भी प्रवासी भारतीयों की विपुल संख्या है। हिन्दी का पठन-पाठन तथा भारतीय संस्कृति यहां की अधिकांश जनता में रची-बसी है। यहां सर्वप्रथम सन् 1964 में 'आर्य दिवाकर' नाम से एक पत्र आर्य समाज द्वारा प्रकाशित किया गया। यह पत्र आज भी अविरल प्रकाशित हो रहा है। इसमें आर्य समाज से संबंधित सामाजिक सामग्री तो होती ही है पर कभी-कभी हिन्दी की विश्वजनीनता पर भी लेख लिखे जाते हैं। इसी वर्ष पं० शिवरतन जी के संपादन में 'सरस्वती' मासिक पत्र का प्रकाशन हुआ। यह पूर्ण साहित्यिक पत्र है तथा वहां स्थापित सरस्वती प्रेस से इसका प्रकाशन होता है। सूरीनाम में यही एकमात्र हिन्दी प्रेस है। 'सरस्वती' लघु पत्र होते हुए भी अपनी सही भूमिका निभा रहा है। सूरीनाम के निकेरी शहर से दूसरा 'भारतोदय' नाम का पत्र निकला और भारतोदय प्रेस की स्थापना भी हुई किंतु आर्थिक कठिनाई के कारण प्रेस और पत्रिका दोनों को अकाल ही काल-गाल में जाना पड़ा। निकेरी में प्रवासी भारतीयों की संख्या सर्वाधिक है। सन् 1975 में डा० ज्ञान हंस 'अधीन' के संपादन में धर्म प्रकाश और पं० शिवरतन जी के संपादन में 'वैदिक संदेश' का एक साथ प्रकाशन हुआ किंतु ये पत्र भी अधिक दिनों तक नहीं चले

सके । डॉ० अधीन ने हिन्दी-डच कोश भी लिखा है। इन्होंने बनारस से हिन्दी की शिक्षा प्राप्त की है । इनके अथक प्रयास के बाद भी पत्रिका का प्रकाशन जारी न रह सका। इसके बाद एक अन्य हिन्दीसेवी भक्त श्री कालपू जी ने अपने व्यय से हिन्दी शिक्षण रिकार्ड बनवाया और इसके माध्यम से हिन्दी प्रचार को योग दिया । फलतः हिन्दी एक संचार साधन के रूप में विकसित हुई जिसका लोगों ने अतिशय स्वागत किया किंतु कालांतर ने यह प्रयोग भी असफल हुआ ।

श्री प्रेमचंद के संपादन में 'प्रेम संदेश' मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारंभ हुआ जिसमें साहित्य की प्रायः सभी विधाओं को स्थान मिलता था । इसका प्रकाशन साइक्लोस्टाइल पद्धति से होता था। किंतु दो तीन वर्षों तक हिन्दी की सेवा को इसका भी प्रकाशन बन्द हो गया । इसी प्रकार श्री महात्मसिंह के संपादन में 'शांतिदूत' मासिक पत्र का प्रकाशन हुआ । श्री सिंह ने इसकी रक्षा के लिए भरपूर साहस और लगन से कार्य किया किंतु यह भी अंततः बंद हो गया । इसका भी मुद्रण साइक्लोस्टाइल विधि से होता था । कुछ दिनों तक यह सर्वाधिक-लोकप्रिय पत्र रहा । गांधी सांस्कृतिक भवन के शांतिदल द्वारा 'प्रकाश' नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकल रहा है । इसी के साथ एक अन्य पत्र 'विकास' का भी प्रकाशन हो रहा है । हिन्दी प्रेस के अभाव में अनेक कठिनाईयों का सामना करते हुए भी सूरीनाम में हिन्दी पत्रों का दीप जल रहा है।

गुयाना

यह राष्ट्र भी दक्षिणी अमेरिका में अवस्थित है और यहां भी काफी संख्या में प्रवासी भारतीय रहते है । हिन्दी और भारतीय संस्कृति यहां के जनजीवन में सर्वत्र फैली है । यहां सर्वप्रथम हिन्दी पत्र का प्रकाशन एक रविवारीय परिशिष्ट के अंग के रूप में हुआ । यहां से प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक पत्र 'आर्गोसी' के रविवारीय अंक में एक पृष्ठ हिन्दी का रहा करता था जिसमें धार्मिक एवं सामाजिक समाचार ही प्रकाशित होते थे, पर पांच वर्षों तक अविरल प्रकाशित होने के बाद यह पृष्ठ बन्द हो गया । अन्य देशों की भांति यहां भी आर्य समाज द्वारा आर्य ज्योति का प्रकाशन होता है जिसमें आर्य समाज के सिद्धांतों तथा वैदिक धर्म के समाचारों को ही स्थान मिलता है । इसके अतिरिक्त सनातन धर्म सभा द्वारा 'अमर ज्योति' नाम का एक पत्र प्रकाशित होता है। पं० रामलाल का हिन्दी पत्रकारिता एवं हिन्दी शिक्षण से अधिक लगाव होने से वहां हिन्दी की ज्योति ज्योतित है । गुयाना का एकमात्र उत्कृष्ट पत्र 'ज्ञानदा' है । यह एक मासिक पत्र है जिसके संपादक श्री योगिराज शर्मा है । यह पूर्ण साहित्यिक पत्र है तथा इसका आवरण मुद्रित एवं शेष सामग्री साइक्लोस्टाइल पद्धति से छपती है। श्री शर्मा जी ने इसके अस्तित्व के लिए अहोरात्रि श्रम किया और गुयाना में हिन्दी पत्रकारिता को अक्षुण्ण रखा । इस प्रकार गुयाना में हिन्दी पत्रों की अस्मिता प्रेस की असुविधाओं के होते हुए भी सुरक्षित है।

त्रिनीडाड-टुबैगो

कैरेबियन समुद्र में स्थित त्रिनीडाड-टुबैगो में जो वेस्ट इंडीज के नाम से भी जाना जाता है, भारतीयों की संख्या अधिक है । यहां भी अन्य देशों की भांति भारतीय मजदूर शर्तनामा कुली के रूप में लाए गए थे । हिन्दी का लेखन-पाठन, वाचन आदि अन्य देशों की भांति ही चल रहा है। यहां से सर्वप्रथम हिन्दी में 'कोहेनूर अखबार' निकला जो अब बन्द हो गया है । इसमें धार्मिक सामग्री के अलावा कुछ स्थानीय समाचार भी प्रकाशित होते थे । यहां का सर्वाधिक लोकप्रिय पत्र 'ज्योति' है । यह एक मासिक पत्र है तथा इसका सर्वप्रथम प्रकाशन मार्च, 1968 को हुआ था । इसके संस्थापक-संपादक हैं प्रो० हरिशंकर आदेश । यह पत्र जीवन ज्योति प्रकाशन के अंतर्गत प्रकाशित होता है पहले यह पत्र हिन्दी शिक्षा संघ द्वारा प्रकाशित होता था परन्तु अब संघ के बंद हो जाने पर यह भारतीय विद्या संस्थान के मुखपत्र के रूप में प्रकाशित होता है । यह प्रत्येक मास की सात तारीख को प्रकाशित होता है । प्रो० आदेश ने इसे साहित्यिक बनाने का भरसक प्रयास किया है जिसमें वे सफल भी हुए हैं। हिन्दी अंग्रेजी मिश्रित इस पत्र में संगीत की तकनीकी शिक्षा के लिए भी लेख छपते हैं। नवोदित हिन्दी लेखकों को इससे काफी प्रोत्साहन मिलता है ।

त्रिनीडाड में हिन्दी प्रेस के अभाव में हिन्दी प्रकाशन को पर्याप्त कठिनाई का सामना करना पड़ता है । इस समय वहाँ स्व० पं० काशीप्रसाद मिश्र का एक ही प्रेस है जिसमें पर्याप्त टाइप न होने से मुद्रण में अप्रत्याशित संघर्ष उठाना पड़ता है । अतः ज्योति का प्रकाशन लीथो एवं आफसेट प्रणाली से होता है । फिर भी प्रो० आदेश वहाँ हिन्दी पत्रकारिता का दीप जलाए हुए हैं ।

दक्षिण अफ्रीका

दक्षिणी अफ्रीका के भारतीयों के मध्य से ही पूज्य बापू का राजनीतिक जीवन प्रारम्भ हुआ था । वहां प्रवासी भारतीयों की संख्या अधिक थी । यहां से सर्वप्रथम 1903 में 'इण्डियन ओपीनियन' साप्ताहिक का हिन्दी संस्करण प्रकाशित हुआ। इसके प्रथम सम्पादक श्री मनसुखलाल नाजर थे । यह डरबन से 13 मील दूर फिनिक्स आश्रम से प्रकाशित होता था और श्री मदनजीत के प्रेस में मुद्रित होता था। गांधी जी की इस पर कड़ी कृपा थी । नाजर जी की मृत्यु के बाद गांधी जी के अंग्रेज मित्र श्री हर्बट किचन एवं उनके अनन्तर श्री हेनरी एस० एल० पोलक इसके सम्पादक बने । अब यह पत्र बन्द हो चुका है । इस पत्र के माध्यम से वहां के प्रवासी भारतीयों में नई चेतना का उदय हुआ था । इसके बाद 5 मई, 1922 को 'हिन्दी' नाम का एक साप्ताहिक पत्र निकला जिसके आद्य सम्पादक थे पं० भवानी दयाल सन्यासी । इससे भी हिन्दी को बढ़ावा मिला। इस प्रकार वहां आज तक हिन्दी की धारा प्रवाहमान है ।

बर्मा

बर्मा कभी भारत का ही एक अंग था किन्तु अब वह एक स्वतन्त्र राष्ट्र है। यहां भी प्रचुर संख्या में प्रवासी भारतीय रहते हैं। यहां हिन्दी के विकास में पं० हरिवदन शर्मा एवं श्री एल० बी० लाठिया का योगदान अद्वितीय है। यहां श्री लाठिया ने 'बर्मा समाचार' का सर्वप्रथम प्रकाशन कर हिन्दी पत्रकारिता की नींव रखी। इसके बाद 'प्राची–कलश' मासिक पत्र भी कुछ वर्ष तक प्रकाशित होकर बन्द हो गया। सन् 1934 में 'प्राची–प्रकाश' पत्र हिन्दी दैनिक के रूप में प्रकाशित हुआ। इसके सम्पादक थे श्री अनन्त राम मित्र तथा सम्पादक श्री श्यामचरण मिश्र। फिर कुछ दिनों के बाद 'प्रवासी' साप्ताहिक पत्र का भी प्रकाशन हुआ जिसके संस्थापक, प्रकाशक एवं सम्पादक श्री श्यामचरण मिश्र ही हुए। सन् 1951 में श्री रामप्रसाद वर्मा ने 'नवजीवन' दैनिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ किया किन्तु कालांतर में दोनों पत्र आर्थिक कठिनाई के कारण बन्द हो गए। कुछ समय तक 'जागृति' पत्र का भी प्रकाशन हुआ। इसके बाद सन् 1953 में 'ब्रह्मभूमि' मासिक पत्र का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ जिसके प्रकाशक श्री ब्रह्मानन्द एवं सम्पादक श्री रामप्रसाद वर्मा हैं। यह रंगून से अब तक नियमित प्रकाशित हो रहा है––सन् 1970 में 'आर्य' युवक पत्रिका का भी मासिक रूप में प्रकाशन हुआ किन्तु कुछ काल के बाद इसका प्रकाशन रुक गया। फिर भी वर्मा में हिन्दी पत्रकारिता की ज्योति ब्रह्मभूमि के माध्यम से जल रही है।

नेपाल

यह हमारा निकटतम देश है। यहां नेपाली राष्ट्रभाषा है फिर भी दोनों देशों की भाषा लिपि 'देवनागरी' ही है। सन् 1956 से काठमांडू से 'नेपाली' हिन्दी दैनिक का प्रकाशन होता है जिसके सम्पादक हैं श्री उमाकांत दास। इसमें राजनीतिक समाचारों का बाहुल्य होता है तथा कभी–कभी हिन्दी की रचनाएँ भी प्रकाशित हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त त्रिभुवन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग से सन् 1980 से 'साहित्य लोक' नाम का एक पत्र प्रकाशित होता है जिसके सम्पादक हैं डा० कृष्णचन्द्र मिश्र। यह पूर्ण साहित्यिक पत्र है। इसके अतिरिक्त 'चर्चा' और 'आरोहण' आदि लघु पत्र भी येन-केन प्रकाशित हो जाते हैं। हिन्दी पत्रों के प्रकाशन की दृष्टि से नेपाल में वर्तमान स्थिति अधिक अच्छी नहीं है। फिर भी उपर्युक्त पत्र हिन्दी की विश्वक्षमीयता को बनाए हुए हैं।

हालैंड

पिछले कुछ वर्षों से सूरीनाम से आए हुए लाखों प्रवासी भारतीयों ने वहां हिन्दी की दीपशिखा प्रज्ज्वलित कर अपने अस्तित्व को बनाए रखा है। यहां भारतीय संस्कृति की अनेक संस्थाएं हैं जिनके अन्तर्गत हिन्दी शिक्षण एवं प्रकाशन होता है। 'लल्ला रुख' भारतवंशियों की प्रमुख संस्था है। इसी नाम से एक लघु पत्रिका का प्रकाशन होता है जिसमें सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक बातों की सूचनाएं ही छपती हैं। डा० जे० पी० कौलेश्वर सुकुल इस बात के माध्यम से हिन्दी की सेवा कर रहे हैं।

इंग्लैंड

इंग्लैण्ड ही विश्व में पहला राष्ट्र है जहां से सर्वप्रथम 1883 में कालाकांकर नरेश के सम्पादन में 'हिन्दोस्थान' पत्र का प्रकाशन हुआ। जिसने भारतीय स्वतन्त्रता में अभूतपूर्व योगदान दिया था। इसके बाद 'वैदिक पब्लीकेशन' का प्रकाशन हुआ जो आर्य समाज का मुख्य पत्र था। लन्दन से श्री जे० एस० कौशल के सम्पादन में 'अमरदीप' का प्रकाशन हुआ। इसका मुद्रण आफसेट प्रणाली से होता था तथा इसमें सामाजिक चेतना की ध्वनि अधिक थी। इसके बाद लन्दन में हिन्दीप्रचार परिषद् की स्थापना हुई और फिर उसी परिषद के मुखपत्र के रूप में सन् 1964 में एक हिन्दी त्रैमासिकी 'प्रवासिनी' का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ। जिसके सम्पादक हैं श्री धर्मेन्द्र गौतम। इस पत्र के कई विशेषांक निकले। जिसमें श्री गोपाल कृष्ण विशेषांक सर्वाधिक चर्चित रहा। हिन्दी एवं राष्ट्रीय चेतना का यह पत्र आज भी प्रकाशित हो रहा है।

कनाडा

भारत की स्वतन्त्रता के बाद कनाडा में प्रवासी भारतीयों की संख्या में अपार वृद्धि हुई, जिससे वहां हिन्दी का प्रसार स्वतः हो रहा है। इस समय टोरांटो से एक मासिक पत्र 'भारती' का प्रकाशन हो रहा है। यह पत्र 1975 से श्री त्रिलोचन सिंह गिल के सम्पादन में प्रकाशित हो रहा है। फोटोस्टेट पद्धति से इस पत्र का मुद्रण होता है तथा हिन्दी एवं अंग्रेजी दोनों भाषाओं में सामग्री रहती है। इसके अतिरिक्त श्री रघुबीर सिंह के सम्पादन में 'विश्व भारती' पाक्षिक पत्र का भी प्रकाशन होता है। कनाडा में 'विश्व-भारती' राष्ट्र भाषा हिन्दी एवं भारतीय संस्कृति की संवाहिका के रूप में विख्यात है। अब टोरांटो से ही एक नया मासिक पत्र 'जीवन–ज्योति' नई आशा अतिशय उमंग एवं पवित्र लक्ष्य को लेकर नवम्बर, 1982 से प्रकाशित हो रहा है। इसके संपादक हैं प्रसिद्ध ट्रवासी हिन्दी कवि और संगीतज्ञ प्रो० हरिशंकर आदेश। इन्होंने ट्रिनीडाड में हिन्दी का अलख जगा रखा है। अतः 'जीवन–ज्योति' से कनाडा में हिन्दी और भारतीय संस्कृति का गौरवमय प्रकाशन होगा, ऐसी आशा है।

रूस

रूस में अन्य भारतेतर देशों की अपेक्षा हिन्दी का अध्ययन–अध्यापन एवं प्रचार अधिक है। रूस ही ऐसा पहला देश है जिसने राष्ट्रभाषा हिन्दी को सर्वाधिक महत्व प्रदान किया है। रूस से हिन्दी के स्तरीय प्रकाशन हुए हैं तथा मास्को में एक हिन्दी प्रकाशन गृह भी स्थापित है। यहीं से 'सोवियत संघ' नाम का एक हिन्दी मासिक पत्र प्रकाशित होता है। यह सचित्र पत्र है तथा भारत–सोवियत सम्बन्धों पर आधारित अनेक लेख

इसमें प्रकाशित होते रहते हैं। यह पत्र हिन्दी के अतिरिक्त संसार की अन्य 20 भाषाओं में एक साथ प्रकाशित होता है। इसके प्रधान सम्पादक हैं श्री निकोलाई ग्रिबाचोव। मास्को से दूसरा हिन्दी पत्र है--'सोवियत नारी'। यह एक मासिक पत्र है तथा इसकी प्रधान सम्पदिका हैं--व० ई० फेदोतोवा तथा हिन्दी संस्करण के सम्पादक हैं--श्री ई० पा०. गुलुबेन। यह भी संसार की लगभग 20 भाषाओं में एक साथ प्रकाशित होता है। इसमें सोवियत नारी-जीवन का सचित्र चित्रण होता है।

चीन

चीन संसार में सर्वाधिक आबादी वाला राष्ट्र है। यहां हिन्दी का प्रचार-प्रसार तो नहीं है किन्तु चीन सम्बन्धी जानकारी विभिन्न देशों को देने के लिए वहां से 'चीन सचित्र' नामक एक हिन्दी मासिक पत्र निकलता है। यह विश्व की 19 भाषाओं में एक साथ प्रकाशित होता है। हिन्दी में इसके 326 अंक अब तक निकल चुके हैं। इसका मुद्रण एवं प्रकाशन बीजिंग से होता है।

जापान

संसार में सर्वप्रथम सूर्योदय के दर्शन करने वाला ज्वालामुखियों का देश जापान अपनी वैज्ञानिक कुशलता के लिए जग प्रसिद्ध है। यहां हिन्दी का पठन-पाठन अन्य देशों की ही भांति होता है। जापान और भारत का सांस्कृतिक एवं साहित्यिक सम्बन्ध बहुत प्राचीन है। बौद्ध धर्मावलम्बी होने के कारण जापानियों का भारत से भावात्मक लगाव है इसी-लिए यहां के लोग हिन्दी सीखते हैं। सन् 1964 में यहां से 'अंक' नाम का पत्र प्रकाशित हुआ। इसके अब तक 21 अंक प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अतिरिक्त जापान-भारत मित्रता संघ का मासिक पत्र पत्र 'सर्वोदय' भी प्रकाशित होता है। वस्तुतः यह धार्मिक पत्र है किन्तु इसमें हिन्दी सम्बन्धी सामग्री रहती है। यथार्थ रूप में ये सभी पत्र जापानी से अनूदित होकर प्रकाशित होते हैं। जापान का प्रथम हिन्दी पत्र 'ज्वालामुखी' है, जिसका प्रथम अंक सितम्बर, 1980 में टोकियो से प्रकाशित हुआ था। इसके सम्पादक हैं श्री योशिअकि सुजुकि। इसके अब तक दो अंक ही प्रकाशित हुए हैं प्रकाशन के बारे में सम्पादक का प्रथम अंक में मत है कि हिन्दी के माध्यम से जापानी साहित्य का परिचय, जापानी साहित्य का अनुवाद, जापानी साहित्य एवं हिन्दी साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन, जापानी संस्कृति का परिचय, आदि करने से भारत के लोगों को भी इसका लाभ मिलेगा। पत्रिका का नामकरण फुजि पर्वत की भव्यता को लेकर किया गया है। ज्वालामुखी की तरह सदैव हम भी क्रियाशील रहें। इसीलिए इस शीर्षक की सार्थकता है।

इस प्रकार भारत से बाहर विश्व के देशों में हिन्दी पत्र-पत्रिकाएं अपने-अपने उपलब्ध साधनों के आधार पर प्रकाशित हो रही हैं। जिन्हें देखकर एक 'विश्व-हिन्दी' की सहज ही कल्पना हो जाती है। □□□

(पृष्ठ 20 का शेषांश)

और सर्वाधिक परिचित भाषा हिन्दी विश्व भाषा बननी चाहिए और उसे संयुक्त राष्ट्रसंघ की अधिकृत भाषा के रूप में स्वीकृति मिलनी चाहिए।" इनके अतिरिक्त मारिशस के श्री सोमदत्त बखौरी ने हिन्दी के कार्य को बढ़ाने के लिए एक स्थायी सचिवालय स्थापित करने का प्रस्ताव पेश किया। चीन के श्री ल्यूकोनान ने हिन्दी को सशक्त और समृद्ध भाषा मानते हुए चीन में हिन्दी के प्रति बढ़ती रुचि का उल्लेख किया। महादेवी जी ने अपने सारगर्भित भाषण में कहा "अंग्रेजी की हीन भावना से ऊपर उठकर हिन्दी को प्रतिष्ठित कराने का व्रत लेना होगा।" भारत जैसे बड़े राष्ट्र को जोड़ने की भाषा हिन्दी को मानते हुए महादेवी जी ने आगे कहा "हिन्दी वट वृक्ष नहीं है वह दूब है, जिसे हाथ में लेकर हम संकल्प करते हैं, अब हमें वही करना है।" "अन्त में डा० जाखड़ में अध्यक्षीय भाषण देते हुए कहा "मानवीय संस्कृति की सबसे मूल्यवान उप-लब्धि भाषा है। भाषा के आविष्कार में मानवीय अस्मिता का आविष्कार है। हमारी सामाजिक संस्कृति से उद्गम हुआ हिन्दी भाषा का"। मानवीय मूल्यों की स्थापना में हिन्दी की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए डा० जाखड़ ने कहा कि "हिन्दी संसार को नई ज्योति, नई मानसिकता, नई दृष्टि दे सकती है।" अन्त में प्रो० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव ने धन्यवाद प्रस्ताव रखा और राष्ट्रीय गान के साथ ही सम्मेलन का समापन हुआ। रात्रि को कवि-सम्मेलन का आयोजन किया गया जिस में श्री शिव मंगलसिंह "सुमन", श्री सोहनलाल द्विवेदी, नीरज, ओदोलन स्मेकल आदि हिन्दी के प्रसिद्ध कवियों ने अपनी कविताओं से रसविभोर किया। □□□

विदेशों में हिन्दी : प्रचार-प्रसार और स्थिति के कुछ पहलू

—प्रो० प्रेमस्वरूप गुप्त

संतोष ही करना हो तो यह बात कम नहीं है कि हिन्दी विश्व के तीस से ऊपर देशों में पढ़ी-पढ़ाई जाती है, लगभग 100 विश्वविद्यालयों में उसके लिए अध्यापन-केन्द्र खुले हुए हैं। अकेले अमेरिका में लगभग 20 केन्द्रों में उसके अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। मारिशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड जैसे देशों में भारत-मूल निवासियों की उल्लेखनीय संख्या होने के कारण वहां हिन्दी स्वतः सस्नेह प्रचारित है। विश्व के प्रत्येक प्रमुख देश में हमारे दूतावास हैं, जिनसे राजनीतिक सन्दर्भों के अतिरिक्त यह भी आशा की जाती है कि वे हिन्दी के प्रचार-प्रसार की ओर ध्यान भी देंगे और अपने को भारत को सामाजिक संस्कृति और भारत की राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रतिनिधित्व समझेंगे। पर यदि यह चित्र उतना ही सच होता जितना रंगीन लग रहा है तो सन्तोष करने में कोई बुराई न थी।

विदेशों में हिन्दी के महत्व, प्रचार एवं प्रसार की स्थिति न सब जगह एक सी है, न ऐसा होना सम्भव है। मारिशस, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड में हिन्दी के लिए वहां की जनता के एक बड़े भाग में जो आदर और प्रेम है, वह यूरोप या अमरीका के देशों में कैसे मिल सकता है? इसलिए विदेशों में हिन्दी की स्थिति प्रचार और प्रसार की समस्याओं के भी विविध रूप हैं, उनके समाधान भी विविध रूपों में खोजने होंगे।

विदेशों में हिन्दी की स्थिति, प्रचार तथा प्रसार को लेकर दो भिन्न दृष्टियों से विचार करना होगा—एक दृष्टि है जो सरकारी तन्त्र से जुड़ी है, दूसरी है जिसका सम्बन्ध जन-जीवन में है। पहले सरकारी तन्त्रों की दृष्टि से विदेशों में हिन्दी की स्थिति का जायजा लिया जाए।

पहले अपने सरकारी तन्त्र की दृष्टि से जहां तक तथ्यगत स्थिति है, हमारे दूतावास सच्चे अर्थों में न तो भारत की सामाजिक संस्कृति के संवाहक बन पाए हैं, न ही भारत की राष्ट्रभाषा के प्रतिनिधि। उनके लिए अधिकारियों का जो चुनाव होता है उसमें भी इस दृष्टि को अनिवार्यतः केन्द्र में नहीं रखा जाता। घर में ही जब हिन्दी का मामला राजनीति के पचड़े में उलझ गया हो, तो हमारे दूतावासों पर उसकी छाया न हो, यह हो भी कैसे सकता है? सामान्यतः उन देशों में जहां कि भारतवंशीय लोगों की संख्या अच्छी-खासी है और वहां हिन्दी और भारतीय संस्कृति के लिए ललक-भरा अनुराग है? ऐसे ही प्रतिनिधियों और अधिकारियों का चयन होता रहा है, जो भारतीय संस्कृति और हिन्दी के अनुरागी हों। उदाहरण के लिए, मारिशस में डा० भगवतशरण उपाध्याय जैसे लोगों को भेजा जाना इसी दृष्टिकोण का परिचायक था। किन्तु यूरोपीय, अमरीका या अरब देशों के प्रतिनिधि भेजते हुए इन बातों की ओर ध्यान रखना अपेक्षित नहीं माना जाता रहा। परिणाम यह रहा है कि इन क्षेत्रों में हमारे दूतावास पश्चिमी रंगों में रंगे, हिन्दी का नाम भी यदा-कदा प्रासंगिक रूप में लेते हुए, हिन्दी के प्रचार-प्रसार से सर्वथा निःसंग रहे हैं। कहीं कोई अपवाद भले मिल जाए। अतः इस कोटि के दूतावासों में सामान्यतः हिन्दी की प्रतिष्ठा या प्रचार-प्रसार का वास्तविक रूप उभर ही नहीं पाया है। हां, रूस जैसे कतिपय साम्यवादी देशों में भारत की उसकी अपनी भाषा को अंग्रेजी से वरीयता दिए जाने की अपेक्षा की गई तो वहां के हमारे दूतावासों ने अवश्य इस ओर जागरूक रहने की आवश्यकता समझी। बात अब फिर शिथिल पड़ गई है और अधिकांशतः कार्य-व्यापार अँग्रेजी के माध्यम से ही होता है, हिन्दी के माध्यम से नहीं। कहीं-कहीं हिन्दी के अनुवाद साथ में लगाए जा रहे हैं, पर सीमित रूप में ही।

हमारे दूतावास जिन देशों में हैं उनकी सरकारों के साथ कार्य-व्यवहार में हिन्दी का उपयोग करें—यह स्थिति कल्पना से काफी दूर की है। प्रायः यह स्थिति है कि हमारे देश से जाने वाले भारतीय लोगों को अपने दूतावासों से सम्पर्क करने के लिए अंग्रेजी का ही उपयोग करना पड़ता है। इन लोगों में ऐसे लोगों की संख्या भी अधिक नहीं होती, जो हिन्दी में काम लेने में गौरव अनुभव करते हों। पर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जिन्हें अंग्रेजी अच्छी तरह नहीं आती। वे अपने दूतावासों से यदि हिन्दी के माध्यम से सम्पर्क-सहायता चाहें तो उन्हें कठिनाई ही होती है।

अब इस पहलू पर विचार किया जाए कि विदेशों की विविध सरकारों की ओर से हिन्दी के प्रति कैसा रवैया है? और किन सन्दर्भों में हिन्दी की क्या स्थिति है। जहां तक सरकारों का भारतीय दूतावासों या भारत के साथ सीधे सम्पर्क में हिन्दी

के प्रयोग की बात है, उन्हें इस बात की अनिवार्य आवश्यकता प्रतीत ही नहीं होती । उनका काम अधिकांशतः हिन्दी से नहीं, अंग्रेजी से चलता है – जो देश अंग्रेजी–भाषी नहीं हैं, और अपनी भाषा पर बल देते हैं, वे मुख्यतः अपनी भाषा का, साथ में अँग्रेजी का यदा–कदा हिन्दी के अनुवाद के साथ प्रयोग करते हैं । हिन्दी अनुवादों का प्रयोग बहुत ही सीमित मात्रा में, कहिए नगण्य होता है, हां, कुछ मामलों में हिन्दी अनुवाद साथ में लगाने का प्रतिबन्ध है, उन सन्दर्भों में उसे लगा दिया जाता है ।

भारत के स्वतन्त्र होते ही बड़े-बड़े देशों ने भी यह अनुभव किया था कि विश्व के इस बड़े भू भाग से सम्पर्क करने के लिए उन्हें हिन्दी की आवश्यकता पड़ेगी । भारतीय संविधान में व्यवस्था की गई थी कि 15 वर्षों में हिन्दी अंग्रेज़ी का स्थान ले लेगी । अतः उन्हें भी यह आभास हुआ था कि इस देश से निकट सम्पर्क बनाने के लिए उन्हें हिन्दी को और अपनाना पड़ेगा । फलतः विभिन्न प्रमुख देशों की सरकारों ने अपने विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्था और सुविधा की ओर ध्यान दिया । अपने छात्रों को छात्रवृत्तियां प्रदान कर हिन्दी पढ़ने के लिए भारत भेजा । यहां से भी अध्यापक बुलाए गए या यह सिलसिला कुछ न कुछ अब भी जारी है, पर वह ललक नहीं रही । उन्हें साफ दिखाई दे रहा है कि भारत में वह स्थिति अब कल्पना से भी दूर पीछे धकेली जा चुकी है, जिसमें हिन्दी एकमात्र देश की राष्ट्रभाषा और सम्पर्क–भाषा बनेगी । जब अंग्रेजी यहां स्थाई रूप से जमती दिखाई दे रही हो तो कोई राष्ट्र अपने युवकों के श्रम और अपने पैसे को हिन्दी के लिए क्यों व्यय करेगा । सीधा सवाल उपयोगिता का है ।

पर सरकारी सन्दर्भों से हटकर महत्वपूर्ण एवं विकसित राष्ट्रों में हिन्दी की उपयोगिता कुछ अन्य दृष्टियों से भी होती है । भारत के स्वतन्त्र होने से पहले से ही अनेक राष्ट्र इस देश की संस्कृति और सभ्यता को समझना चाहते रहे हैं । स्वातंत्र्य पूर्व के कारण कुछ और थे, अब कुछ और हैं–– यह बात दूसरी है, पर विश्व की जनसंख्या के एक बड़े भाग को समझने की कोशिश विकसित राष्ट्र न करें––यह आज के सन्दर्भों में सर्वथा असम्भव है । आज की राजनीति सीधे सरकारों के बीच भी चलती है, सरकारों और जनता के बीच से भी चलती है । प्रम, सह–सम्बन्ध, राजनीति सम्बन्ध के लिए ही नहीं, लड़ने के लिए भी दूसरे देश की भाषा सीखने की आवश्यकता होती है । इसका उदाहरण हिन्दी के सन्दर्भ में चीन का है । भारत–चीन के युद्ध के समय यह सामने आया था कि चीन ने अपने अनेक सैनिकों को एक आवश्यक मात्रा में हिन्दी का प्रशिक्षण दिया हुआ था । तो अपने–अपने स्वार्थों–अर्थों को ध्यान में रखकर विभिन्न विकसित राष्ट्र अपने यहां हिन्दी के पठन–पाठन की व्यवस्था करते हैं । कुछ भारत को समझने के लिए, कुछ भारत से उपयोगी सन्दर्भों के लिए कुछ भारत से प्रेम के लिए ।

जिन विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन–अध्यापन की व्यवस्थाएं हैं, उनकी आर्थिक व्यवस्था भले ही उन देशों की सरकारों की ओर से होती हो पर अनेकानेक विदेशी हिन्दी विधान हिन्दी और भारतीय संस्कृति के अनुराग में इतने रम गए हैं कि उन्होंने अपनी जीवनचर्या को हिन्दी के प्रति समर्पित कर लिया है । उनमें इतना सच्चा और गहरा हिन्दी-अनुराग है कि वे हिन्दी का काम ही नहीं करते, जब-जब हिन्दी इस देश में बढ़ती है, उनमें प्रसन्नता होती है, जब–जब हिन्दी पीछे धकेली जाती है, उन्हें पीड़ा होती है । हिन्दी के इन अनुरागी विदेशी विद्वानों के प्रति यह देश कृतज्ञ है ।

ऊपर की चर्चित स्थिति अरब राष्ट्रों में नहीं दिखाई देती । उनका झुकाव आवश्यकता की मात्रा के अनुरूप उर्दू की ओर हुआ है, हिन्दी की ओर नहीं, पर इसका लाभ इस देश के उन लोगों को बराबर मिलता है, जो इन राष्ट्रों में व्यापार, नौकरी या अन्य सन्दर्भों से गए हैं । उर्दू स्वरूपतः हिन्दी से दूर होकर भी बहुत दूर नहीं जा पाती, अतः लिखित रूप में चाहे न सही, बोलचाल के स्तर पर उसका लाभ हिन्दी–उर्दू दोनों के लोगों को वहां समान रूप से मिलता है ।

तीसरे वर्ग में वे देश आते हैं जहां भारत–मूल के निवासी बड़ी संख्या में बसे हुए हैं, जैसे मारिशस, फिजी, सूरीनाम, ट्रिनिडाड आदि । इन देशों में हिन्दी को राजकीय आश्रय सीमित रूप में ही प्राप्त है । अपनी जनसंख्या के आधार पर भारतीय जितना प्रतिनिधित्व अपने देश की सरकार में ले पाते हैं, उसी अनुपात में वे हिन्दी को उठाने की बात कर पाते हैं जब राजनीतिक जोड़-तोड़ों में भारतवंशियों की यह शक्ति भी बिखर जाती है तो हिन्दी को किसी ऊंचाई तक उठा ले जाना वहां भी संभव नहीं है । सरकारी तंत्र इन देशों में नीचे के स्तर पर हिन्दी शिक्षा की व्यवस्था करते है । उच्च शिक्षा और राजकीय प्रयोजन के लिए हिन्दी ग्रहण किए जाने का अभी वहां सवाल ही पैदा नहीं हुआ ।

इस प्रकार प्रशासकीय स्तरों पर, विदेशों में हिन्दी की जो भी व्यवस्था है उसका अधिकांश हक देश की अपनी-अपनी नज़र के अनुसार उपयोगिता के कारण है । उसमें भारत सरकार और भारतीय दूतावासों का योगदान बहुत ही सीमित है । हां, मारिशस, फिज़ी आदि देशों में भारतीय प्रशासन और दूतावासों के हिन्दी-प्रोत्साहन विषयक योगदान को अवश्य ध्यान में रखना होगा ।

यहां इस बात का विवेचन भी आवश्यक है कि प्रशासकीय माध्यमों से हिन्दी के अध्यापकों और विद्यार्थियों का जो आदान-प्रदान होता है, उसकी क्या स्थिति है ? विभिन्न देश कुछ अध्यापकों, कुछ विद्यार्थियों को अपने व्यय पर हिन्दी सिखवाने के लिए भारत भेजते हैं। कुछ विद्यार्थी भारत की छात्रवृत्तियों पर विनियम योजनाओं के भीतर भी आते हैं । ऐसे हिन्दी अध्येताओं का हिन्दी शिक्षण अधिकांशतः शिक्षा मंत्रालय के केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के माध्यम से दिया जाता है, कुछ को कतिपय विश्वविद्यालयों में

आवंटित कर दिया जाता है । कुछ देश कुछ निश्चित अवधि के लिए भारत से हिन्दी अध्यापकों का चयन करके आमंत्रित करते हैं और अपने यहां हिन्दी-शिक्षण की व्यवस्था कराते हैं। भेजे जाने वाले हिन्दी अध्यापकों के चयन की प्रक्रियाएं प्रशासकीय तंत्र से गुजरती हुई ऐसी बन गई है कि जो लोग जाते हैं, उनमें 'मिशनरी स्पिरिट' बहुत कम विदेश जाने का 'चांस' पाने की ललक अधिक काम करती है। सही क्षमताओं के लोगों का चयन आज वैसे ही कठिन हो गया है। अब रही उन लोगों की बात जो हिन्दी सीखने भारत आते हैं । इनमें से जो विश्वविद्यालयों में भेजे जाते हैं, उनमें सही शिक्षा इसलिए नहीं पहुंच पाती है कि विश्वविद्यालयों में हिन्दी को आधुनिक वैज्ञानिक प्रणालियों से द्वितीय भाषा के रूप में पढ़ाने की पद्धतियों का सही विकास नहीं हुआ। और हिन्दी केन्द्रीय संस्थान इसलिए सही उत्तरदायित्व का वहन नहीं कर पाता कि वह शिक्षण-प्रशिक्षण प्रणाली की आभासी वैज्ञानिकता में उलझ गया है । पर जो भी है, यही एक मात्र व्यवस्थित संस्था है जहां वैज्ञानिक पद्धति से विदेशियों को भारत में हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था आयोजित है ।

सब मिलाकर प्रशासकीय संदर्भों के साथ जुड़कर हिन्दी की दशा विदेशों में उतनी उत्साहवर्धक नहीं, उतनी संतोषजनक नहीं, जितनी होनी चाहिए । भारत में संवैधानिक और शासकीय स्तर पर हिन्दी की जो स्थिति है, उसमें जो शैथिल्य है या जो उत्साह है –दोनों की छाया विदेशों के प्रशासकीय तंत्र से विकसित होनेवाली हिन्दी-स्थिति पर पड़ना अस्वाभाविक नहीं है ।

यह रूप 'विश्व हिन्दी' का कहा जा सकता है, पर व्यवहार के क्षेत्र में हिन्दी की एक अपनी दुनिया है, जो अपने आत्म-बल पर विकसित हो रही है । भाषा की सही शक्ति सरकार नहीं होती, उसके बोलने वाली जनता होती है । आइए, हिन्दी की इस दुनिया का, 'विश्व हिन्दी' का नहीं अपितु 'हिन्दी-विश्व' का रूप देखें ।

भारत में हिन्दी बोलने समझने वालों की संख्या निरंतर बढ़ रही है । इस दृष्टि से उर्दू-भाषी लोग भी हिन्दी-विश्व की परिधि में ही आते हैं । भारत में हिन्दी चाहे सरकारी स्तर पर एकमात्र संपर्क भाषा न बन पाए, पर उन प्रसंगों पर जहाँ देश के विभिन्न प्रांतों से विभिन्न प्रकार के वर्गों के लोग जुड़ते हैं, वहां यह स्थिति देखने को मिलती है । यदि यह उच्चवर्गीय लोगों का सम्मेलन है, सरकारी, अर्द्ध-सरकारी, राजनीतिक दलों आदि का सम्मेलन है तो प्रायः अंग्रेजी संपर्क-भाषा के रूप में काम करती है, स्वल्प-सा प्रयोग हिन्दी का चलता है । पर यदि यह मिलन लोक-जीवन से जुड़े लोगों का हुआ तो हिन्दी अपने आप संपर्क भाषा का रूप ले लेती है । भारत के किसी भी भाग में जाइए, यदि मिलने वाले लोग उच्चवर्गीय या उच्चाभासीवर्गीय नहीं हैं तो एक भाषाभाषी से अन्य भाषाभाषियों के मिलन की संपर्क भाषा प्रायः हिन्दी मिलेगी । सैनिक जीवन में, रेल-यात्राओं में, तीर्थ स्थानों में, छात्र-सम्मेलनों में, प्राकृतिक-एतिहासिक दर्शनीय स्थलों में, बाजारों में आपको इस हिन्दी-विश्व की क्षमता और उपयोगिता का पता चल सकेगा। यह स्थिति निरंतर विकसित हो रही है। भारत में हिन्दी बोलनेवालों की, हिन्दी समझनेवालों की, और हिन्दी को व्यावहारिक जीवन में उपयोग करनेवालों की संख्या निरंतर बढ़ रही है।

यही विकासशील स्थिति हिन्दी के लिए विदेशों में भी है। विदेशों में हिन्दी का उपयोग मुख्यतः भारतवासियों के द्वारा होता है। इस दृष्टि से विदेशों को तीन वर्गों में रखा जा सकता है। पहला वर्ग वह जिसमें भारतीय, फिजी, सूरीनाम, त्रिनिडाड जैसे देश रखे जा सकते हैं, जहां भारतवंशीय लोग भारी तादाद में बस रहे हैं। ये लोग कामकाज को लेकर इन देशों में गए थे, इनमें भारत की संस्कृति और भारत की हिन्दी से सच्चा अनुराग है, उससे जुड़े रहने की ललक है। ये लोग जो हिन्दी बोलते, प्रयोग में लाते हैं, वह खड़ीबोली हिन्दी नहीं है। पर लिखाई-पढ़ाई के लिए वे मानक हिन्दी की ओर ही बढ़ रहे हैं।

दूसरे वर्ग में वे देश हैं जहां की भाषा उर्दू है, या जहां उर्दू भाषी जनता की पहुंच है । इन क्षेत्रों में यदि भारतीय हिन्दी-भाषी मिलते हैं तो जो भाषा संपर्क भाषा के रूप में माध्यम बनती है, उसे हिन्दी से भिन्न नहीं कहा जा सकता। अरब राष्ट्रों में भारत और पाकिस्तान दोनों ही देशों के काम-धामी लोग गए हैं। इनकी पारस्परिक संपर्क भाषा प्रायः हिन्दी होती है।

तीसरे वर्ग में यूरोप-अमरीका आदि वे विकसित राष्ट्र रखें जा सकते हैं, जहां बहुत बड़ी संख्या में भारत के लोग बस भी गए हैं और अस्थायी रूप में जा भी रहे हैं । इन लोगों में यदि किसी प्रांत-विशेष या क्षेत्र-विशेष के लोग परस्पर मिलते हैं तो अपनी क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग करते हैं । पर यदि विभिन्न भारतीय भाषाभाषी मिलते हैं तो संपर्क भाषा प्रायः हिन्दी होती है । उदाहरण के तौर पर अमरीका, केनेडा में गुजराती-भाषी काफी संख्या में बसे हैं । यदि गुजराती लोग परस्पर मिलेंगे तो आरंभिक संपर्क अंग्रेजी में होने के बाद संपर्क और बातचीत की भाषा गुजराती हो जाएगी । पर यदि गुजराती और तमिल-भाषी या गुजराती और मलयालम-भाषी मिलेंगे या एकाधिक भारतीय भाषाओं के बोलने वाले मिलेंगे तो व्यक्तिगत संपर्क भाषा अधिकांशतः हिन्दी बन जाएगी । भारत में अंग्रेजी ज्ञान विज्ञान की भाषा के रूप में उतनी नहीं, जितनी प्रतिष्ठाभास की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित है । यही स्थिति विदेशों में भारतीय के पारस्परिक मिलन के समय भी कुछ-कुछ उभर आती है । पर इस आभास से मुक्ति मिलते ही संपर्क-भाषा हिन्दी बनती है। यही बात भारत और पाकिस्तान के लोगों के पारस्परिक मिलन पर होती है। प्रतिष्ठाभासी स्तर पर अंग्रेजी चलने के बाद आश्मीय

सम्मिलन उस हिन्दी में होता है जो भारत और पाकिस्तान की वास्तविक बोली है, जिसमें संस्कृत-अरबी-फारसी की शब्दावली असहज रूप में ठूंसी नहीं जाती, सहज शब्दावली सहज रूप में बोली समझी जाती है ।

भारत में उच्च और उच्चाभासी वर्गों की संपर्क-भाषा अंग्रेजी है, जिनकी संख्या 3 प्रतिशत से अधिक नहीं है । लोक-जीवन अपनी-अपनी प्रांतीय-क्षेत्रीय भाषाओं में चलता है, वास्तविक लोक-संपर्क हिन्दी के माध्यम से चलता है । इसी प्रकार विदेशों में भारत और पाकिस्तान के निवासियों के पारस्परिक मिलन प्रसंगों में उच्च और उच्चाभासी वर्गों के लोगों के मिलन पर अंग्रेजी चलती है, एक-भाषी संपर्कों में क्षेत्रीय भाषा, एकाधिक-भाषी संपर्कों में हिन्दी कुल मिलाकर 20 प्रतिशत से अधिक अंग्रेजी का उपयोग ये लोग नहीं करते । हिन्दी जाननेवाले व्यक्ति को इस फैली हुई हिन्दी की दुनिया में, अंग्रेजी न जानने पर भी, कोई कठिनाई नहीं होती ; सैकड़ों लोग भारत से किसी भी प्रदेश की भाषा बोलनेवाले, विकसित देशों में कहीं भी काम के लिए चले जा रहे हैं । हिन्दी उनके लिए माध्यम का काम कर रही है और वे अपना काम कर रहे हैं ।

हिन्दी की इस दुनिया की, इस 'हिन्दी विश्व' की जनसंख्या कम नहीं है । विश्व में इस दृष्टि से हिन्दी का स्थान तीसरा है । पर इंडोनेशिया, जावा, सुमात्रा तथा उन मुस्लिम-बहुल देशों में जहां उर्दू बोली-समझी जा सकती है, हिन्दी के बोलने समझने में अधिक कठिनाई नहीं आती । इस दृष्टि से 'हिन्दी विश्व' की दृष्टि में उर्दू हिन्दी का ही एक रूप बनती है और हिन्दी विश्व की स्थिति अंग्रेजी के बाद आती है । उर्दू का व्याकरणिक ढांचा, उसकी आधार-भूत शब्दावली और उसकी मुहावरेदानी हिन्दी-विश्व की सीमा के बाहर की न थी, न अभी है ।

यह विशाल हिन्दी-विश्व विभिन्न देशों में फैला हुआ है, पर बिखरा पड़ा है । इसकी शक्ति क्षीण पड़ी है । इसे संजोना होगा ।

हिन्दी का इतिहास बताता है कि वह सरकारी मशीन की भाषा बनकर विकसित नहीं हुई, लोक-जीवन की भाषा बनकर बढ़ी है । उसका सही संबल लोग है, उसकी सही जड़ें लोक में हैं । प्रशासन से हिन्दी को प्रतिष्ठित कराने की मांग करते समय हिन्दी के तथाकथित प्रेमी यह बात भूल जाते हैं । अपनी निष्क्रियता और हिन्दी के लिए आत्मत्याग की कमी को छिपाने के लिए इससे अच्छा नुस्खा और कोई नहीं होगा कि हिन्दी की उन्नति का सारा जिम्मा सरकार पर डाल दिया जाए और संविधान की धाराओं की रट लगाई जाए । 'विश्व हिन्दी' को इसकी जरूरत होगी, 'हिन्दी विश्व' को इसकी जरूरत नहीं । उसे तो निश्छल लोक कल्याण-कामी महात्माओं की जरूरत है ।

हिन्दी मानवीय मूल्यों की भाषा के रूप में विकसित हुई है । उसके विकास के मूल में लोक के जीवन तत्वों को प्रस्फुरित करने और लोक-मंगल के विरोधी तत्वों से संघर्ष करने की आग रही है । उसमें मानवीय संस्कृति के उदार मूल्यों और प्रेम करुणा और उदारता के गीत गाने की वृत्ति रही है । जिन वीरों और संतों ने, जिन भक्तों और महात्माओं ने इसे पनपाया-फैलाया है, उनमें देश के हर भाग के लोग थे, हर मजहब के लोग थे, हर जबान के लोग थे, धर्म, जाति, प्रांत, ऊंच-नीच, पूंजी, प्रशासन—सब की छाया से मुक्त उदात्त चेतनाओं ने हिन्दी को खड़ा किया, एक भाषा खड़ी करने के लिए नहीं उदात्त मानवीय मूल्यों के रूपायन के लिए, मानवीय चेतना को मानव-जीवन के हर पहलू के सौंदर्य का पान कराने के लिए, अमंगलकारी तत्वों से जूझने के लिए, हिन्दी में आज भी वह शक्ति आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित है । मानवता के कल्याण के लिए उसका प्रचार-प्रसार आज अकेले भारत के लिए नहीं, विश्व के अपने हित में है ।

हिन्दी को उठाने की मांग करते समय लोगों के मन में यह कामना रहती है कि हिन्दी के राजभाषा बनते ही हिन्दी वालों को प्रशासकीय तंत्र में विशेष अधिकार-स्थान मिल जाएंगे, तभी उसका विरोध होता है । तब प्रतिष्ठाकामी प्रतिष्ठा के लिए अंग्रेजी को पकड़ना है । हिन्दी हेयता की, हीन भावना की संवाहिका बनकर रह जाती है । हिन्दी-विश्व भारत ही में नहीं, विदेशों में भी, इस हीन स्थिति का शिकार है, आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी-विश्व को संजोया जाए, उसे यह अनुभव कराया जाए की हिन्दी एक प्रतिष्ठा की भाषा है, इसलिए नहीं कि वह शासन-प्रशासन की भाषा है, अपितु इसलिए कि वह उदात्त मानव मूल्यों की संवाहिका भाषा है । मूल्यों के गिरते बाजार में विश्व को अच्छे मूल्यों की चीज देने की क्षमता हिन्दी में है, और 'हिन्दी-विश्व इस उत्तर-दायित्व की भाषा का संयोजन है, इस आत्म-गौरव को जगाने की आज सबसे बड़ी आवश्यकता है । आत्म-गौरव अनुभूति से संपन्न हिन्दी-विश्व हिन्दी की मानव-मूल्यों के लिए आत्म-त्यागवाली वृत्ति को अपनाता हुआ विश्व-कल्याण के क्षेत्र मेंभारी योग दे सकेगा । अतः विश्व-हिन्दी की इस भावना को भारत में भी विकसित करना होगा और विदेशों में भी । विदेशों में हिन्दी के प्रचार-प्रसार की बात करते समय इस बात की ओर प्रमुख ध्यान देकर चलना होगा ।

□□□

हिन्दी भाषा की भूमिका : विश्व के संदर्भ में

—श्री राजेंद्र अवस्थी

आज का तिब्बत हजारों साल पहले का सुमेरु पर्वत है। कहा जाता है कि प्राचीन सभ्यता सुमेरु पर्वत के नीचे ही जन्मी, पनपी और फैलती गई। उसका विस्तार ग्रीक, रोम, मेसोपोटामिया से लेकर सिंधु घाटी तक था। समूचे विश्व की प्राचीनतम सभ्यता के क्षेत्र यही स्थल रहे हैं। वैसे भी सुमेरु का अर्थ होता है मेरुदंड, यानी आधारशिला। हमारे शरीर का मेरुदंड हमारी रीढ़ की हड्डी है। उसी के सहारे पूरा शरीर टिका हुआ है। सुमेरु पर्वत के नीचे धीरे-धीरे जिस सभ्यता ने जन्म लिया था, वह विश्व-बंधुत्व का केंद्र थी। रोम और मसोपोटामिया में यदि सिंह और सूर्य चक्र के अवशेष मिले हैं तो वही सिंधु घाटी में भी हैं। यहां के निवासियों का रहन-सहन और धर्म लगभग समान था।

वर्षों शायद एक तारतम्य था जो सुमेरु सभ्यता को बांधे था और समूची मनुष्य जाति को जिसने एक ही तरह से रहना, खाना-पीना और विकास के तौर-तरीके समझाए थे। तब इनकी भाषा भी शायद बहुत मिलती-जुलती रही है। शिलालेख इसके प्रमाण हैं। भाषा और बोली के बारे में अक्सर कहा जाता है कि हर दो कोस यानी चार मील में बोली बदल जाती है और पांच कोस यानी दस मील में भाषा में अंतर आ जाता है। जो अवशेष मिले हैं, उनसे स्पष्ट है कि बोली और भाषा जो भी रही हो, आज की देवनागरी का वह प्रारंभिक स्वरूप है।

इस प्रसंग का उल्लेख इसलिए यहां आवश्यक है क्योंकि राजनीति और भूगोल की सीमाएं कालांतर में इतिहास पर पलीता लगाती चलती है और अपनी सुविधा के अनुसार हम नए इतिहास का निर्माण करते चलते हैं।

सुमेरु सभ्यता का समूचा क्षेत्र देवनागरी लिपि का विस्तार था और उसी देवनागरी से क्रमशः हिन्दी भी विकसित हुई। इसलिए मैं काफी वजन देकर यह कह सकता हूं कि हिन्दी भाषा की भूमिका इसी क्षेत्र में लिखी गई थी। बाद में वह सिमटती गई और हमलावरों तथा लुटेरों का कोपभाजन बनकर कई भाषाओं में वह बट गई। उसी के साथ देश और मनुष्य भी बदलता गया और सभ्यता की रीढ को हम क्रमशः भूलते गए।

बात यहीं समाप्त नहीं होती। मुझे लगभग समूची दुनिया देखने का मौका मिला है। आज की दुनिया हजारों सालों की दुनिया से बहुत अलग है। कई हिस्से महासागर के गर्त में चले गए और कई भूभाग महासागर से उभरकर बाहर आए। अमरीका जैसे महान और विकसित देश का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। आदमी जितना नया है, उतना संघर्ष उसका कम है। पुराने आदमी ने कहीं बहुत ज्यादा संघर्ष किया था। बदलते हुए मौसमों का उसे सामना करना पड़ा था और उसमें उसने अपनी सभ्यता को डुबते और तैरते देखा था। इस संघर्ष में भूमिका रहती है अभिव्यक्ति की। इसी अभिव्यक्ति के माध्यम की हमें तलाश है।

सुमेरु क्षेत्र के बाहर भी जाकर देखें तो दृष्टि कुछ और ही होगी। घने हरे वनों के बीच उभरे हुए नए-नए शहर। उन शहरों की चकाचौंध। झिलमिलाती हुई दुकानें। एक दुकान में हम घुस गए। कपड़े से लेकर कई आधुनिक कही जाने वाली चीजें उसी एक स्टोर में थीं। हम ठहरे पर्यटक, हमने एक-एक चीज देखना शुरू किया। थोड़ी देर बाद ही एक सज्जन ने हमसे कहा, 'आपको कुछ पसंद आया?'

चौंकना हमारे लिए असाधारण था। हमने उसकी ओर देखा, उसके तीन चार साथियों को देखा, फिर हम पूरी दूकान देख गए।

– 'आप भारत से आए हैं, ऐसा लगता है।'

– 'जी हां, राजकोट में हमारा घर था।'

– 'था, अब नहीं है?'

– 'पता नहीं, हमारे बाप-दादे आए थे, हमें जाने का मौका ही नहीं मिला।' हमें लगा, हमारे देश का एक टुकड़ा यहाँ टूटकर आ गया है।

– 'आप इतनी अच्छी हिन्दी बोल लेते हैं?'

निहायत भारतीय ढंग से उसने हाथ जोड़े, 'जी हाँ, पिताजी से और माताजी से सुनते रहे हैं हम, वही सीखा है।'

यह प्रसंग था कीन्या का, अफ्रीका का एक स्वतंत्र गण-राज्य। शहर था मोमबासा। यह केवल मोमबासा में नहीं था, अफ्रीका के समूचे पूर्वी तट, मध्य अफ्रीका जिसे अब काइरे कहते हैं और पश्चिमी तट, जहाँ नाइजीरिया आदि देश हैं– सभी जगह अचानक हमारा सामना भाषा के साथ हुआ है। न जाने कितने समय पहले इनके पूर्वज यहाँ आए थे, अपनी मेहनत से उन्होंने संघर्ष किया और यहाँ जम गए।

मारिशस भारत और अफ्रीका के बीच एक छोटा-सा द्वीप है। यहां पहले अफ्रीकी दास लाए गए थे और कोड़े मार-मारकर उनसे पत्थर उठवाए गए। पुर्तगाली और फ्रांसीसी शासक कोड़े के बल पर भी यह काम नहीं करा सके। तब आए बिहार और पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोग। उन्होंने कोड़े भी खाए, लेकिन मेहनत भी की और धीरे-धीरे समूचे द्वीप को उपजाऊ मिट्टी में बदल दिया। खेतों के बीच में छुटपुट पड़े पत्थर इस बात के गवाह हैं कि उन भारतीयों ने इतने भारी पत्थर पूरी जमीन से उठाए थे। भारत अब भी

उनकी 'महतारी' भूमि है और क्रियोल के सिवाय जिस भाषा में उन्हें बोलने में आनंद मिलता है, वह भोजपुरी या पूरबी अवधी मिली हुई हिन्दी है । भारत के प्रति उनके लगाव को देखकर लगता है, असल में जैसे भारत उनकी ही भूमि है। दूसरे विश्व हिन्दी सम्मेलन में मारिशस के तत्कालीन प्रधान मंत्री श्री शिवसागर रामगुलाम ने तो घोषणा की थी कि भारत के बाहर यदि कोई हिन्दी-भाषी प्रधानमंत्री है, तो वह मैं हूँ । हमारी तालियों ने ही उनका स्वागत नहीं किया था, हिन्दी भाषा के जयघोष में हमने अपनी आवाज मिलाई थी।

अफ्रीकी तटों के सारे द्वीपों में लगभग यही स्थिति है। यहां पहुँचकर बिलकुल नहीं लगता कि हम अजनबी हैं। इस हिस्से को छोड़कर आगे चलें तो इंग्लैंड पहुंचकर तो एक अजीब आभास होगा । लंदन शहर लगता है बंबई का टुकड़ा है, या यूं कहें बंबई लंदन का टुकड़ा है। साउथ हाल पूरी तरह हिन्दी की ध्वनि से गुंजित होता है। स्काटलैंड के एक विद्वान से बात हुई तो उन्होंने बताया कि उनकी भाषा का अंग्रेजी से दूर का भी संबंध नहीं है । वह संस्कृत, जर्मन और पालि का अपभ्रंश रूप है ।

यूरोप की यात्रा करते हुए प्रायः लोगों को भय होता है कि वे क्या करेंगे । भय छोड़कर जर्मन शब्द 'बुंदिशवान' में जाइए । घबराइए नहीं, यह रेलवे स्टेशन का पर्यायवाची है । हमारे यहां जब बग्घियां चलती थीं तब उनके लिए क्या लगभग यही प्रतिध्वनि नहीं थी । फ्रांस में जाकर मन घबराता है परंतु हिन्दी भाषी फ्रांस के हर शहर में हैं । स्पेन तो हमारा घर है । यूरोप में यात्रा करते हुए उत्तर भारतीयों को प्रायः स्पेन का निवासी समझा जाता है। फिर स्पेन के समुद्री तटों पर जाइए, आवाजों के शोरगुल में हमारी भाषा की ध्वनियां जरूर सुनने को मिल जाएंगी ।

रोम में हमारे कई मित्र रहते हैं। उनका कहना है कि इटली के बहुत से लोगों ने उनसे हिन्दी सीखी है । वहां के विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। उनकी शिकायत यही है कि भारत में अँग्रेजी का प्रभुत्व इतना अधिक है कि वहाँ पहुँचकर बिना हिन्दी बोले हमारा काम चल जाता है। यह सुनकर हमें लज्जित होना पड़ता है ।

हालैंड में बहुत बड़ी संस्था सूरिनाम के निवासियों की है। सूरिनाम दक्षिण अमरीका के उत्तरी भाग में है और पूरे देश में हिन्दी भाषा का प्रचलन है। यह हिन्दी उनकी सुविधामयी हिन्दी है, लेकिन वह अंग्रेजी नहीं है। सूरिनाम के लोगों का रहन-सहन, खान-पान सभी भारतीय है। मारिशस की तरह वे भी गंगा के दर्शनों के इच्छुक हैं। इन दिनों तो सत्ता भी उन्हीं के हाथ है। सूरिनाम में पहले डच शासन था । डच यानी हालैंड । यही डच जर्मनी तक फैले थे, इसलिए जर्मनी को डचेज लैंड भी कहा जाता है। हालैंड में एक लाख से भी अधिक हिन्दी-भाषी हैं। बड़े-बड़े शहरों में उनके अपने भवन हैं, जिन्हें 'एकता भवन' कहते हैं। इन्हीं एकता भवनों में वे यज्ञ, हवन और मंत्रों का उच्चारण करते हैं। हालैंड पहुँचकर अपने को अजनबी समझना सबसे बड़ी भूल होगी ।

आगे निकल चलें हम डैनमार्क, ओसलो और स्वीडन तक, या उसके आगे ग्रीन लैंड और फिनलैण्ड भी हिन्दी-भाषा के उच्चारण को सुनने के लिए हमें तरसना नहीं होगा। हर सड़क और हर मोड़ पर कोई भारतीय मिल जाएगा और मजे में आप उससे 'नमस्ते' या 'नमस्कार' कर सकते हैं। इन क्षेत्रों में कुछ विदेशियों को शुद्ध सँस्कृत बोलते हुए सुनना सचमुच बहुत अच्छा लगता है। जैसे लायडन विश्वविद्यालय में डा० हेस्तरमान से शुद्ध संस्कृत में संभाषाण किया जा सकता है ।

यूरोप से लगे हुए क्षेत्रों में यूगोस्लाविया, चेकोस्लोवाकिया, हंगरी, बलगेरिया, पोलैंड और रूस भी हैं। डा० स्मेकल से लेकर डा० चेलिशेव तक निहायत भारतीय हैं। वहां बहुत से परिवार हैं और हमसे अधिक शुद्ध हिन्दी बोलते हैं। इन देशों में कई बार अंग्रेजी के कारण कठिनाई हो सकती है, हिन्दी भाषी कोई न कोई, कहीं न कहीं अवश्य मिल जाएगा। फिर कई शब्द भी ऐसे हैं, जिन का उच्चारण और अर्थ देवनागरी हिन्दी से मिलते-जुलते हैं, थोड़ा दिमाग लगाने की जरूरत है, अजनबी नहीं कहा जा सकता।

दक्षिण अमरीका में सूरीनाम के साथ गुयाना, फिजी और फिर महान सांस्कृतिक देश मेक्सिको तक हिन्दू देवी देवताओं और हिन्दी भाषा तथा देवनागरी लिपि का विस्तार मिलेगा। जहां-जहां प्राचीनता होगी हिन्दी का प्रभाव अवश्य होगा। मैक्सिको में सारे हिन्दू देवी-देवताओं को लेकर लगता है, कभी भारतीय सभ्यता का विकास यहां तक अवश्य रहा होगा। यही स्थिति दक्षिण-पूर्वी देशों की है। वही देवी-देवता वहाँ भी हैं। सूर्य एक महान् शक्ति के रूप में संभवतः समस्त विश्व में व्याप्त है। जापान को तो सूर्योदय का देश ही कहा जाता है। मेरा अपना अनुभव बहुत बृहत है। चीन हो या जापान, रूस हो या कोरिया, अमरीका हो या कैनेडा, कहीं कोई शहर मुझे नहीं मिला, जहां भारतीय न हों। इससे स्पष्ट है कि भारतवंशी मूल रूप से बहुत दुःसाहसी रहे हैं, वे अपनी भाषा और सभ्यता को साथ ले गए हैं। इतना ही क्या काफी नहीं है कि भारी भीड़ में एक अकेला आदमी भी मिल जाए तो आपकी आवाज को सुन और समझ सके। दोस्ती के लिए भीड़ की नहीं, एक आदमी की जरूरत होती है। हिन्दी भाषा चाहे जिस रूप में, जहां गई हो, उसने अपने सहज संबंधों की तलाश की है और एक विश्व बंधुत्व को जन्म दिया है। भेद जहां भी उभरे हैं, उनके कारण राजनीति में मिलते हैं। राजनीति शक्ति पर आधारित है और भाषा का संबंध मनुष्य के भीतरी तत्वों से है, उन तत्वों से जिनमें न सड़ांध है और न कभी कीड़े पड़ सकते हैं, वे पावन गंगा की तरह भारत की उसे महान भूमि पर खड़े हैं, जो वर्षों की यातनाओं को झेलते हुए आज भी एक अकेली धरती समूची दुनिया का मानचित्र प्रस्तुत करती है। ऐसी धरती से उभरी हुई हिन्दी भारत में भले ही विवाद का माध्यम बने, यहाँ से बाहर जाकर वह विश्व बंधुत्व का माध्यम बनती है, इसका अनुभव कोई सैलानी ही कर सकता है।

मारिशस का हिन्दी साहित्य

—डॉ० लता

मारिशस विश्व के रंगमंच पर सुपरिचित और महत्व-पूर्ण राष्ट्र है। इस देश की संस्कृति संश्लिष्ट है। यहाँ अधिकांश निवासी भारतीय मूल के हैं। हिन्दी में इनका कृतित्व उल्लेखनीय है। इन लेखकों की लगभग दो सौ कृतियां उपलब्ध हैं जिनमें साहित्य, इतिहास, संस्कृति और धर्म विषयक सभी प्रकार की रचनाएँ हैं। इन कृतियों में मारिशस के जीवन मूल्यों का भी पता चलता है। इन्हीं प्रवासी भारतीयों द्वारा हिन्दी साहित्य का सर्वाधिक सृजन हुआ है। यह साहित्य हिन्दी की अंतर्राष्ट्रीय भूमिका के प्रति सजग है। यह अपने परिवेश के प्रति भी प्रतिबद्ध है। भारतीय पाठकों के प्रति भी प्रतिबद्धता इस साहित्य की विशेषता है। अतः इस साहित्य की अपनी अलग अस्मिता है।

डॉ० रामेश्वर ओरी ने मारिशस के अपने भाषावैज्ञानिक सर्वेक्षण में यहां बोली जाने वाली ग्यारह भाषाओं का उल्लेख किया है। इस देश में भारत, चीन, इंग्लैण्ड, फ्रांस, सेशल, रेयुनियन, मोजांबिक, पूर्व अफ्रीका और पश्चिम अफ्रीका इन नौ देशों की संस्कृतियों का संश्लिष्ट रूप मिलता है। केवल 61 किलोमीटर लम्बे और 47 किलोमीटर चौड़े मारिशस में इतनी विविधता को समेटना मानवीय सौहार्द्र की अभूतपूर्व उपलब्धि है।

साहित्य-सर्जन या तो शासकों की भाषा में हुआ है या सांस्कृतिक अस्मिता के प्रति सजग प्रवासियों की भाषा में। हिन्दी का साहित्य दूसरे वर्ग में है। क्रियोली और भोपुरी यहां की संपर्क भाषाएं रही हैं। वर्तमान भाषा स्थिति यह है कि क्रियोली भोजपुरी की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हो गयी है। भोजपुरी का स्थान हिन्दी खड़ी बोली ने लिया है। फिर भी भोजपुरी पुरानी पीढ़ी की भाषा है के रूप में जीवित है। यही कारण है कि वहां की हिन्दी का अधिकतर रचनात्मक साहित्य खड़ी बोली में है। काव्य, उपन्यास, कहानी और नाटक अधिक लिखे गये हैं। इस साहित्य का विकास पिछले 50 वर्षों में हुआ है। इसमें भी 1960 तक विकास की गति बहुत मन्द रही है कारण यह था कि हिन्दी मारिशस में शोषित मजदूरों की भाषा रही।

के० हजारी सिंह ने अपने ग्रंथ 'मारिशस के भारतीय का इतिहास' में जिस दर्दनाक इतिहास पर से परदा उठाया है वह विस्मयकारी है। इतने उग्र दमन और प्रतिरोध के बावजूद भारतीय संस्कृति मरी क्यों नहीं? भारत में आर्य समाज ने देश में पुनर्जागरण में जो योगदान दिया था उसकी चिनगारी मारिशस में भी मणिलाल के रूप में पहुँची। बहुत से हिन्दी प्रेमियों ने इसे प्रज्वलित रखा और इसकी रोशनी में हिन्दी साहित्य लिखा गया। प्रारंभिक साहित्यकारों में प्रो० वासुदेव, विष्णुदयाल, जयनारायण राय तथा ब्रजेंद्र भगत मधुकर रहे। वस्तुतः यह त्रयी ही मारिशस में हिन्दी साहित्य की प्रारंभिक कर्णधार है। अन्य हिन्दी-लेखकों की भूमिका भाषा-प्रचारक की रही। पाठक तैयार करने और हिन्दी प्रसार के लिए ये भी स्मरणीय है। स्वाधीनता के पूर्व ही कुछ साहित्यकारों का उदय हो गया था। स्वाधीनता के पश्चात् तो रचनाकारों की बाढ़-सी आ गई है। विविध विधाओं में लेखन होने लगा। इधर महात्मा गांधी संस्थान की 'वसंत' पत्रिका ने नई प्रतिभाओं को प्रोत्साहन दिया, पुरानी पत्रिकाओं में 'अनुराग' की भूमिका उल्लेखनीय रही है।

मारिशस की हिन्दी-कविता

मारिशस बाहरी देशों के निवासियों के द्वारा बसाया गया देश है। यही कारण है कि प्रत्येक प्रवासी अपने देश के संस्कारों से जुड़कर लिखता रहा है। बड़ी-बड़ी शास्त्रीय परिभाषाओं और वादों के मानदंडों पर यहां के हिन्दी काव्य को जांचना अन्याय होगा। यहां लोगों ने हिन्दी में काव्य-सृजन के उद्देश्य से कवितायें लिखी हैं। अभी तक एक भी महाकाव्य या खंडकाव्य यहां के कवियों ने नहीं लिखा है। यहां के कवियों की बंधी कलम से अब तक यह संभव भी नहीं था पर भविष्य का क्षितिज आशा की अरुणिमा लिए हुए है।

ठाकुरप्रसाद मिश्र की एक कथा कविता 1962 ई० में छपी है। इसका रचना-काल द्वितीय विश्व युद्ध का रहा है। 'दीपावली' शीर्षक यह रचना देवी भगवती को वंदना के रूप में है। ब्रजेंद्र भगत मधुकर ने पहली बार सामान्य मानव को कथा काव्य का नायक बनाकर 'एक कहानी कुली की' लिखी। सर शिवसागर रामगुलाम पर भी लंबी कविताएं लिखी गई हैं। फ्रेंच से अनूदित एक लंबी कविता 'सीता' भी मिलती है। कुछ लंबे जीवनीपरक भोजपुरी गीत भी हैं।

यदि प्रकाशन-तिथि को मापदंड मानें तो मुनीश्वरलाल चिंतामणि ने अपनी पुस्तक 'मारिशस का हिन्दी साहित्य

तथा अन्य निबंध' में लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी की 'रस पुंज कुंडलियां' (1923) को पहला काव्य-संग्रह माना है। परंतु मुझे लक्ष्मीनारायण चतुर्वेदी को मारिशसीय हिन्दी का कवि मानना ठीक नहीं लगता। वे कुछ दिनों के लिए ही भारत से मारिशस गए थे। वास्तव में मारिशस की भूमि पर जन्मा पहला कवि मुसलमान था। इसका नाम अज्ञात है। इसने 1892 के तूफान पर हिन्दी कविता लिखी थी। वहां की जनता में आज भी उसका नाम 'साइक्लोन मियां' के रूप में है। मुनीश्वरलाल चिंतामणि के निबंध में इसका उल्लेख है।

प्रकाशित कविताओं का पहला संग्रह 'मधुपर्क' है। मधुकर जी की यह रचना अब अप्राप्य है। इसका काल चिंतामणि ने 1942 तथा सोमदत्त बखौरी ने 1948 बताया है। इस कवि के कोई बीस कविता-संग्रह हैं। ये यहां की हिन्दी के प्राचीनतम कवि हैं। रणभेरी, स्वराज्य, गीतांजलि, मधुमास, रसवन्ती, हिन्दी गौरवगान आदि इनकी प्रमुख पुस्तकें हैं। मारिशसीय हिन्दी का राष्ट्र कवि, स्वाधीनता आंदोलन का यह अग्रणी कवि नेता अपनी ओजस्वी गीतों के कारण अमर है। इन्होंने भोजपुरी में भी राष्ट्रीय गीत लिखें हैं। इनकी सभी रचनाएं छंदोबद्ध हैं।

मुक्त छंद की कविता का आरम्भ 1961 में मुनीश्वरलाल चिंतामणि की कविता 'शांतिनिकेतन की ओर' से माना जा सकता है। सोमदत्त बखौरी के दो संग्रह प्रकाशित हुए—'मुझे कुछ कहना है' (1967) और बीच 'में बहती धारा' (1971)। ये मुक्त छंद के प्रौढ़तम कवि हैं। अब तो अभिमन्यु अनत भी इस विधा के सशक्त रचनाकार हैं। हरिनारायण सीता, गिरिजानन्द रंगू, रविशंकर कौले सर, पूजानंद नेमा, सूर्यदेव सिंवरत आदि भी नये खेवे के कवि हैं।

पहला काव्य संकलन 1966 में प्रकाशित हुआ जिस में कवियों की कविताएं संकलित हैं। 1970 में 'आकाश गंगा', 1971 में प्रवासी स्वर, 1975–86 में 'तरंगणि' और 'मारिशस की हिन्दी कविता' नामक सामूहिक संग्रह प्रकाशित हुए हैं। कुछ बालगीतों के भी संग्रह निकले हैं। वसंत पत्रिका में भी बहुत से नये हस्ताक्षर आ रहे हैं। कौन कितना टिकेगा, कहना मुश्किल है। गजल लिखनेवालों में मुकेश जी बोध अपना स्थान बना चुके हैं।

मारिशस के कवि विषय और शिल्प दोनों के प्रति सतर्क हैं। जहां संतुलन है वहां रचना उत्कृष्ट है। इनकी रचनाओं में आशा, आस्था और विश्वास के स्वर प्रमुख हैं। मारिशस के कवि भारतीय संस्कारों के प्रति विशेष निष्ठावान हैं। बदलते मूल्यों से तालमेल बिठाना कठिन है। ठाकुरदत्त पांडेय इस संदर्भ में उल्लेखनीय हैं। शोषण के बदलते संदर्भ और हथियार के बारे में अनत का कहना है।

धूप की जलती सलाखों को
नंगी पीठ पर सहता हुआ
तुम्हारी सलीब को ढोये जा रहा हूं
और, मेरी यात्रा को सुगम बनाने के वास्ते
मेरी रोटी की थैली
तुमने अपने हाथों में ले ली है।

(वसंत, 11 पृ०)

युग-धर्म के प्रति मारिशसीय हिन्दी कवि सजग हैं। परिस्थितियों के ठहराव का बोध और क्रांति की संभावना तो विश्व-काव्य का स्वर है। इन कवियों की शैली कहीं-कहीं पुस्तकीय है। अनुभवों की विविधता नहीं के बराबर है। प्रायः कवि पुनरावृत्ति के शिकार है। पर नए प्रतीकों का प्रयोग मिलता है। भारतीय कवियों का असर भी दिखाई पड़ता है। हिन्दी फिल्मी गीतों की छाप भी है। कहीं-कहीं तो लगता है कि कवि भारतीय पाठकों के लिए लिख रहा है। उसकी दृष्टि मारिशस के पाठकों पर कम है। हिन्दी कविता की घटती लोकप्रियता का यह भी एक कारण है।

मारिशस के भोजपुरी गीतों का पहला संकलन श्रीमती भगवतीदेवी ने 1912 में किया था। कई संकलन उसके बाद हुए, पर प्रकाशित बहुत कम है। यह गीत परंपरा नारी कंठों में थी पर वर्तमान पीढी इसके प्रति उदासीन है। श्रीमती सीतारमय्या ने अपने पत्र में (15–4–1980) लिखा है कि (पत्र मेरे पास है)—'भोजपुरी गीतों को हमारे पूर्वजों ने रचा था. . . आगे चलकर भोजपुरी गीत का महत्व मारिशस में कम होने लगा क्योंकि जो लोग गाते थे उन गीतों को बिना साज और पोशाक के गाते थे। उनके पास सिंगार सामग्रियां न थीं। . . .लोग इसे मजाक के रूप में देखते थे।' भोजपुरी के प्रति हीनभावना वहाँ की नई पीढी में आ गई है जो एक कटु सत्य है।

मारिशस के हिन्दी उपन्यास

मारिशस में उपन्यास के विकास के लिये जितनी परिस्थितियां, संस्कृतियां और विषय हैं, उस अनुपात में उपन्यास का विकास नहीं हुआ है। 1980 तक कुल पंद्रह उपन्यास लिखे गये हैं। ग्यारह उपन्यासों के लेखक श्री अभिमन्यु अनत है। पहला उपन्यास 1960 में कृणालाल बिहारी ने लिखा था। 'पहला कदम' नामक यह उपन्यास असफल प्रेम की कथा है। कथा-सौष्ठव और चरित्र-विकास पंगु है पर वर्णन-शैली में औपन्यासिकता है। ग्रामीण और शहरी वातावरण का अंतर तथा सामाजिक रूढ़ियों के सांकेतिक चित्र हैं। इसकी भूमिका में लेखक ने कहा है—मैंने यह पुस्तक सिर्फ हिन्दू जाति को जीवित रखने और हिन्दी भाषा की धारा बहाने के उद्देश्य से बनाई है।

'फट गई धरती' नामक एक उपन्यास 1976 में विष्णुदत्त मधुचंद्र का छपा है। 'वसंत' में धारावाहिक 'सगाई'

हीरालाल लीलाधर का एक लघु उपन्यास छपा है। पाल एंड वार्जिनी का एक पुराना अनुवाद भी मिलता है। अभिमन्यु अनत के सभी उपन्यास भारत में छपे हैं—और नदी बहती रही, आंदोलन, एक बीघा प्यार, जम गया सूरज, हड़ताल कल होगी, लाल पसीना, चौथा प्राणी, कुहासे का दायरा, तीसरे किनारे पर, शेफाली आदि।

अनत की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि 'लाल पसीना' है। इस में मारिशस का तीन पीढ़ियों का भारतीय प्रवासी समाज बोलता है। अस्पताल का वर्णन पढ़कर तो सोलफेनित्सिन के कैंसर वार्ड की याद ताजा हो जाती है। इस उपन्यास का दूसरा भाग कुछ शिथिल है। फिर भी यह मारिशस के हिन्दी साहित्य की सर्वोत्तम उपलब्धि है। 'आंदोलन' में ग्रामीण और शहरी जीवन-धारा के अलगाव बिंदुओं की खोज है। 'एक बीघा प्यार' ग्रामीण पृष्ठभूमि में प्रेम की त्रिकोणीय कथा है। 'तीसरे किनारे पर' में शहरी अजनबीपन और संपन्न समाज का छायांकन है। सभी उपन्यासों में मारिशस का समाज चित्रित है। संश्लिष्ट संस्कृति की झलक भी है, पर अच्छा होता यदि अनत मारिशस में रहने वाले अन्य देशों के निवासियों तथा संस्कृतियों को भी उपन्यास का विषय विशुद्ध रूप से बनाते। इससे हिन्दी के पाठकों को सामासिक संस्कृति की और व्यापक जानकारी होती। उनकी भाषा में वहां बोली जानेवाली अन्य भाषाओं के शब्द हिन्दी को अंतर्राष्ट्रीय बनाते हैं।

मारिशस की हिन्दी कहानी

कहानी विश्व की सबसे विकसित साहित्य-विधा है। मारिशस में नवविकसित शैली की कहानियां ही लिखी गई हैं। यहां कहानी-साहित्य का जन्म संघर्ष और आंदोलनों के युग में हुआ। शिल्प अधिकतर समानांतर कहानी का है। कहानी संग्रह कम है। पत्र-पत्रिकाओं में ही अधिकांश कहानियां छपी हैं। 'अनुराग' और 'वसंत' ने इस विधा को सर्वाधिक स्वर दिया है। प्रमुख कहानी-संग्रह सागर 'पार', 'स्वर्ग में क्या रखा है' (दीपचंद, बिहारी) 'परख, (ब्रजलाल रामदीन), 'चिराग और तुफान' (प्रेमचंद मूली) 'खामोशी के चीत्कार', (अभिमन्यु अनत) और 'मिनिस्टर' (भानुमती नागदान) हैं। 'नए अंकुर', 'मारिशस की हिंदी कहानी' आदि सामूहिक कहानी-संग्रह है, जिसमें कई लेखकों की रचनायें हैं।

मारिशस की कहानियों में वर्ग-संघर्ष और मानव-मन की जुझारू प्रवृत्तियों का विश्लेषण है। मनोवैज्ञानिक कहानियां अपनी जमीन से जुडी है। इनमें शोषण के इतिहास के साथ मेहनती वर्ग की विवशता की कथा है। वर्ग-भेद, वर्ण-भेद और कुंठित संस्कारों की बात कहने में संकोच नहीं है जीवन-मूल्य भारतीय संस्थाकारों से जुड़े हैं। ऐसी कहानियों में 'माथे का टीका' (अनत), 'बिगड़ा हुआ यंत्र' (दीपचंद्र बिहारी), 'एक कदम' (रघुनाथ दयाल), 'मोड़' (रामदेव धुरंधर), 'ओवर-टाइम' (कृष्णलाल बिहारी), 'अनुबंधन' (भानुमती नागदान) उल्लेखनीय हैं।

सदियों के प्रवास में भी भारतीय अस्मिता सुरक्षित है। शैली और शिल्प पर भारतीय हिन्दी कहानी का प्रभाव है। मारिशसीय कहानियों में नाटकीयता अधिक है क्योंकि प्रायः लेखक कहानी और नाटक दोनों लिखते हैं। कथा-संयोजन की दृष्टि से दीपचंद्र बिहारी सर्वाधिक सजग और तटस्थ कलाकार हैं। रामदेव धुरंधर का शिल्प कैमरे से खींचा गया चित्र है। कुछ लेखकों ने लोक कथायें और बाल-कथायें भी लिखी हैं। महिला लेखिकाओं में भानुमती नागदान ने संवेदनशील दृष्टि से आसपास के समाज को परखा है।

मारिशस की अन्य गद्य विधाएं

मारिशस का हिन्दी गद्य भोजपुरी गद्य का विकसित रूप नहीं है, जैसा कि यहां के परिवेश में होना चाहिए था। खड़ीबोली का यह गद्य हिंदी शिक्षा प्राप्त मारिशसीय लेखक की भाषा है जिसका संबंध उसकी घरेलू भोजपुरी से नहीं है। 1940 से 1960 तक इसका आरंभिक विकास हुआ। 1960 के बाद के लेखक भी अधिकतर कथा-साहित्य ही लिखते रहे। कुछ विधाओं का विकास नहीं के बराबर है। जीवनी, संस्मरण, नाटक, एकांकी, यात्रा विवरण, समालोचना, इतिहास, धार्मिक साहित्य, पत्रकारिता और पाठ्य-पुस्तकों को इसके अंतर्गत गिना जा सकता है।

प्रकाशित नाटकों में पहला नाटक जयनारायण राय का 'जीवन संगिनी' है जो 1941 में प्रकाशित हुआ था। इसकी कथा में नारी जीवन के परंपरागत मूल्य सुरक्षित हैं। भाषा पर भारतेंदु काल की-सी छाप है। 1951 में ब्रजेन्द्र भगत मधुकर का 'आदर्श बेटी' नामक दो एकांकी नाटकों का संग्रह प्रकाशित हुआ। इसकी शैली समस्या नाटकों की है। 1954 में अभिमन्यु अनत का उदय रंगमंच के इतिहास की क्रांतिकारी घटना है। टेलीविजन और रंगमंच के लिये कई लेखकों ने अनेक एकांकी और नाटक लिखे हैं। प्रकाशित नाटकों में सबसे प्रमुख हैं अनत का 'विरोध' युवा वर्ग की मान्यताओं को स्वर दिया है इस नाटक ने। दूसरा प्रकाशित एकांकी-संग्रह ठाकुरदत्त पांडेय का 'पांच एकांकी': एक सपना है। 'वसंत' पत्रिका में भी समय-समय पर एकांकी प्रकाशित हो रहे हैं।

निबंध और समालोचना का विकास नहीं के बराबर है। अधिकांश निबंध धार्मिक और सांस्कृतिक हैं जिन्हें प्रवचन कहना अधिक उपयुक्त होगा। इस दिशा में प्रो० वासुदेव विष्णुदयाल ने लेखावली-निबंधावली आदि लिखकर जटिल विषयों को सरल ढंग से प्रस्तुत किया है। कुछ शीर्षक 'मनुष्य आत्मा है', पश्चिम को भारत की देन', 'संसार वृक्ष 'गीता और उपनिषद्'—विषय के स्पष्टीकरण के लिये पर्याप्त हैं। हिन्दी के प्रसार और विकास में इनका योग अविस्मरणीय है। एक और निबंध संग्रह है प्रसादगण पंत का 'जीवन प्रदीप'। इसमें कुछ निबंध मनोभावों पर भी हैं। पत्र-पत्रिकाओं

में भी सुधारवादी निबंधों की संख्या काफी है। समालोचकों की संख्या नगण्य है। कुछ साहित्यिक आलोचनायें छिटपुट पत्रिका में छपी हैं। गंगादत्त शर्मा, मुनीश्वर लाल चिंतामणि, पूजानंद नेमा आदि दो-चार हस्ताक्षर यदा-कदा दीखते हैं।

जीवनी और संस्मरण साहित्य के नाम पर डा० शिव-सागर रामगुलाम के संबंध में कुछ रचनाएं लिखी गई हैं। पं० रामलगन शर्मा की 'मारिशस के निर्माता सर शिवसागर रामगुलाम' तथा सुरेश रामवर्ण की 'चाचा रामगुलाम के संस्मरण, उल्लेख-योग्य हैं। निबंध-रूप में कुछ अन्य लोगों के जीवन-परिचय भी पत्रिकाओं में छपे हैं।

यात्रा-विवरण के रूप में सबसे महत्वपूर्ण रचना है, सोमदत्त बखौरी की 'गंगा की पुकार'। भारत-मारिशस संबंध और भारत के प्रति मारिशसवासी की धारणाएं इससे स्पष्ट होती हैं। यहां यात्रा साहित्य की बहुत संभावनायें हैं। प्राय: सभी मारिशस भारतीय विश्व के कई देशों की यात्रा कर चुके हैं। वे चाहें तो विश्व के अनेक देशों के बारे में विपुल जानकारी दे सकते हैं। पर यह विधा उपेक्षित है। प्रहलाद-राम शरण ने डा० रामगुलाम की राजस्थान यात्रा का वर्णन' अवश्य किया है।

इतिहास ग्रंथों की तो मारिशसीय हिन्दी में भरमार है। मारिशसीय हिन्दी की प्राचीनतम विद्या यही है। 1929 से ही इतिहास ग्रंथ लिखे जाते रहे हैं। द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन की स्मारिका में सोमदत्त बखौरी ने नाम गिनाए हैं। इधर का सर्वाधिक प्रशंसनीय प्रयास है—'मारिशस में भारतीयों का इतिहास' जिस के लेखक हैं के० हजारी सिंह। हिन्दी में लिखित सारा इतिहास भारतीय प्रवासियों की भाषिक और सांस्कृतिक चेतना का इतिहास है।

पत्रकारिता का आरम्भ 1903 में हुआ। अनगिनत पत्र-पत्रिकायें बनती और मिटती रही हैं। पत्रों में 'आर्योदय' और 'जनता' अभी भी जीवित है। पत्रिकाओं में केवल वसंत चल रही है। अनुराग का विलयन इसी में हो गया है।

भोजपुरी गद्य बोलचाल में है। इसमें साहित्य नहीं है। यह लोक-गीतों की भाषा है। एकाध कहानी या प्रचार पुस्तक को साहित्य नहीं कहा जा सकता। भोजपुरी गद्य जहां कहीं लिखित है, वह अप्रकाशित या छोटी पुस्तिका के रूप में है। सब मिलाकर मारिशस का हिन्दी गद्य साहित्य विकासशील है और इसकी भविष्यत् संभावनायें अनंत हैं।

सर्वेक्षण

मारिशस में स्वाधीनता से पूर्व हिन्दी की भूमिका अधिक सबल रही। स्वाधीनता के बाद भी दस वर्षों तक यह गति शीघ्र थी। इधर कई कारणों से हिन्दी के प्रति यहां के लोग उदासीन हो रहे हैं। क्रियोल को सरकारी संरक्षण प्राप्त है। संपर्क भाषा के रूप में उसके प्रचार-प्रसार के आधिक्य से मारिशस का हिन्दी लेखक अपने को हीन और असुरक्षित महसूस कर रहा है। द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन वाला उत्साह अब नहीं रह गया। पड़ाव को मंजिल मानकर वे राहत की सांस ले रहे हैं। यद्यपि यह सबसे कठिन परीक्षा का समय है। भारत से पढ़कर गये हुए छात्रों की साहित्यिक उदासीनता भी एक कारण है। अभिमन्यु अनत ने नव उपनिवेशवादी षडयंत्रों को भी इसका कारण माना है। वहां की एक प्रसिद्ध लेखिका भानूमती जी ने 13 जुलाई 1981 के एक पत्र में मुझे लिखा है:

'इन दिनों मारिशस में हिन्दी का स्तर काफी नीचे चला गया है। इसे अपने स्थान पर कुछ हद तक पुन: लाने के लिये हम परिषदों में आंदोलन चलाने का प्रयास कर रहे हैं।'

अत: अब आवश्यकता है कि हिन्दी का अधिक से अधिक विकास किया जाए। □□□

हिन्दी दुनिया की महान भाषाओं में एक है। भारत को समझने के लिए हिन्दी का ज्ञान अनिवार्य है। हिन्दी का महत्व आज इसलिए और भी बढ़ गया है क्योंकि भारत आज शिक्षा, उद्योग और तकनीकी के हिसाब से दुनिया का अग्रणी देश है।

—डा० मैग्रेगर, इंगलैंड

चित्रसमाचार

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर राजभाषा विभाग के सचिव एवं अन्य अधिकारीगण

भारत पैट्रोलियम कार्पोरेशन लि० में 'हिन्दी दिवस' के अवसर पर भाषण देते हुए श्री के० के० श्रीवास्तव, भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार एवं सचिव, राजभाषा विभाग। बायीं ओर बैठे हैं श्री यू० एम० किणि, अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक श्री आर० के० गाजरी, निदेशक वित्त तथा श्री बी० यु० राणा, उपमहा प्रबन्धक (स्टाफ) एवं अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर भारतीय कृषि अनुसंधान सस्थान द्वारा आयोजित प्रदर्शनी स्थल पर संस्थान के संयुक्त निदेशक (प्रशासन) श्री एम० डी० सिंह (बीच में) अन्य अधिकारियों के साथ। उनके साथ हैं हिन्दी अधिकारी श्री सतीशचन्द्र (बाएं से दूसरे)

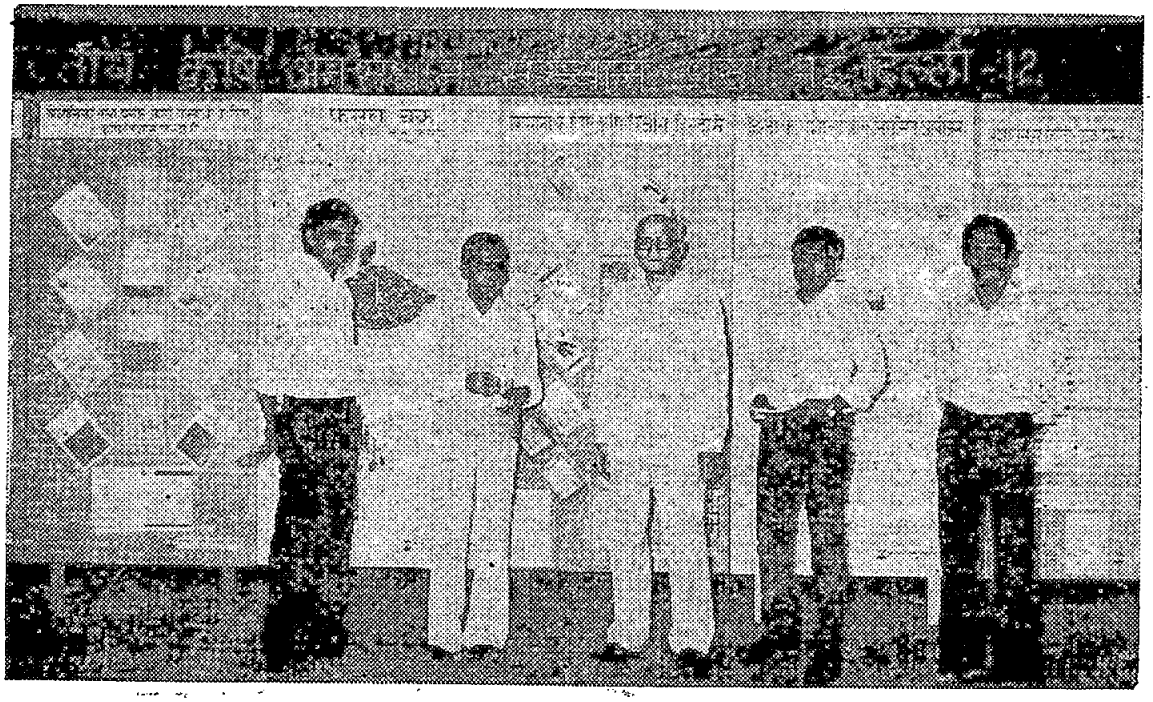

भारतीय स्टेट बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, जयपुर द्वारा आयोजित विचार-गोष्ठी में बाएं से श्री राजेन्द्र वोहरा, डा० महीपसिंह, श्री रमेशचन्द्र माथुर और श्री प्रियदर्शी ठाकुर ।

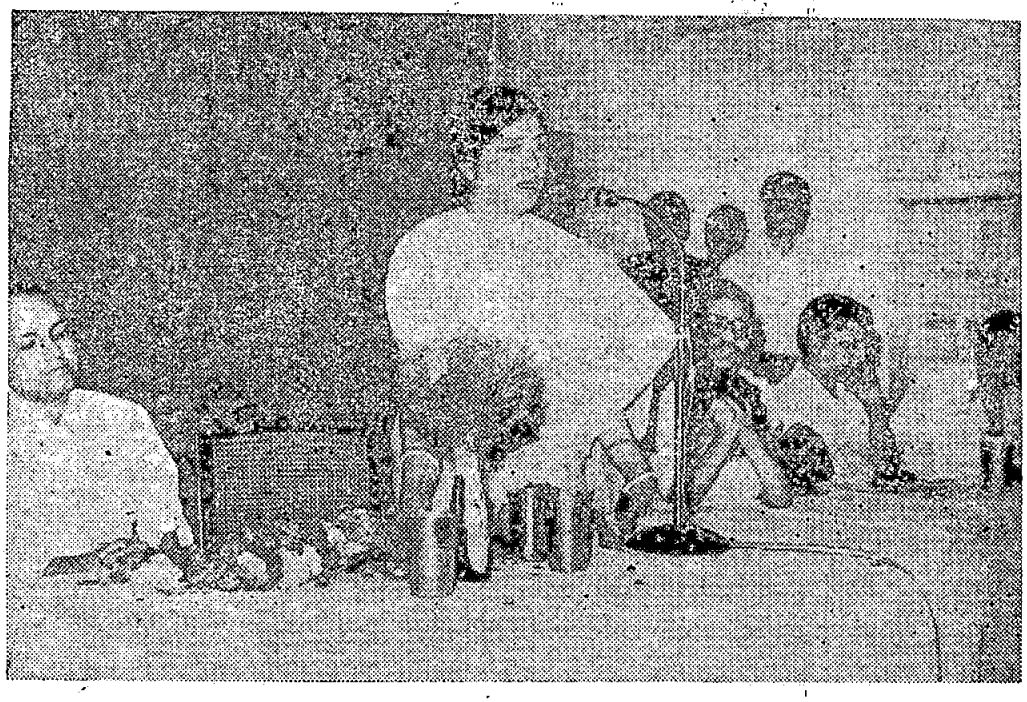

रतलाम मण्डल में 'हिन्दी सप्ताह' पर भाषण करती हुई सुप्रसिद्ध हिन्दी लेखिका श्रीमती मेहरुन्निसा परवेज । बायीं ओर है जिलाधीश श्री भगीरथ प्रसाद तथा दाहिनी ओर मण्डल रेल प्रबन्धक श्री हरि खेमानी तथा मण्डल राज-भाषा अधिकारी श्री शं० नारायणस्वामी ।

हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा आयोजित समारोह में सोवियत संघ के प्रख्यात विद्वान डा० चेलिशेव को पुस्तक भेंट करते हुए अकादमी के सचिव डा० नारायणदत्त पालीवाल । साथ में बाबू गंगाशरण सिंह तथा श्री गोपाल प्रसाद व्यास ।

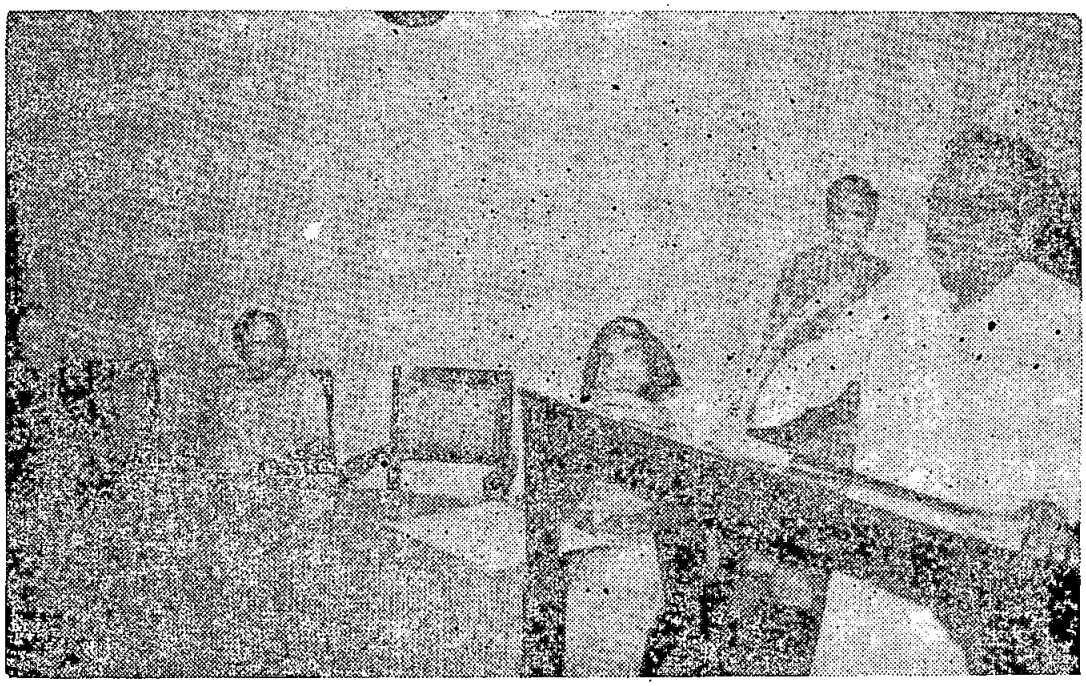

महालेखाकार, आन्ध्र प्रदेश के हैदराबाद कार्यालय में 'हिन्दी दिवस' के अवसर पर उपस्थित बाएं से दाएं श्रीमती पद्मा महालेखाकार, श्री एस० वाई० गोविन्दराजन सदस्य ले० प० बोर्ड, श्रीमती रमा मुरली वरिष्ठ उप म० ले० एवं राजभाषा अधिकारी, श्री नरहर देव लेखापरीक्षक, हिन्दी अनुभाग एवं भाषण देते हुए, पद्म श्री कलाप्रपूर्ण डा० सी० नारायण रेड्डी, अध्यक्ष, आं० प्र० रा० भा० आयोग (मुख्य अथिति)।

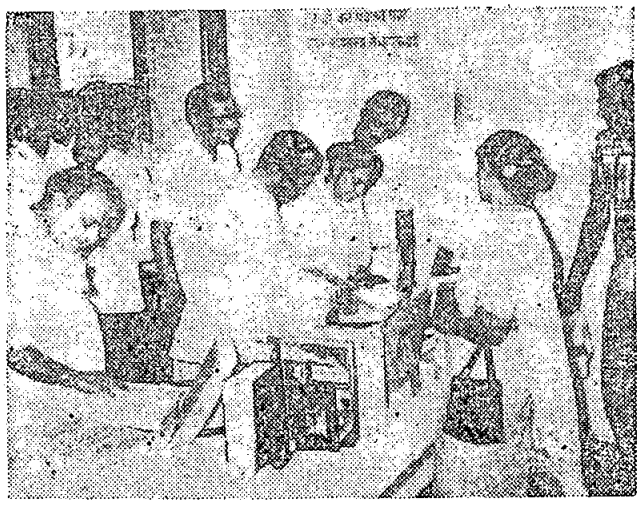

राजस्थान सरकार के भाषा निदेशक डा० कलानाथ शास्त्री के साथ श्रीमती अ० र० सोपारकर, बीमा आयुक्त शब्दावलियों का अवलोकन करते हुए।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, अलीगढ़ की पांचवी बैठक में बोलते हुए डा० मोतीलाल चतुर्वेदी उपनिदेशक (कार्यान्वयन) राजभाषा विभाग। बायीं ओर श्री केवल राज गुप्त, अधीक्षक अभियन्ता, आकाशवाणी।

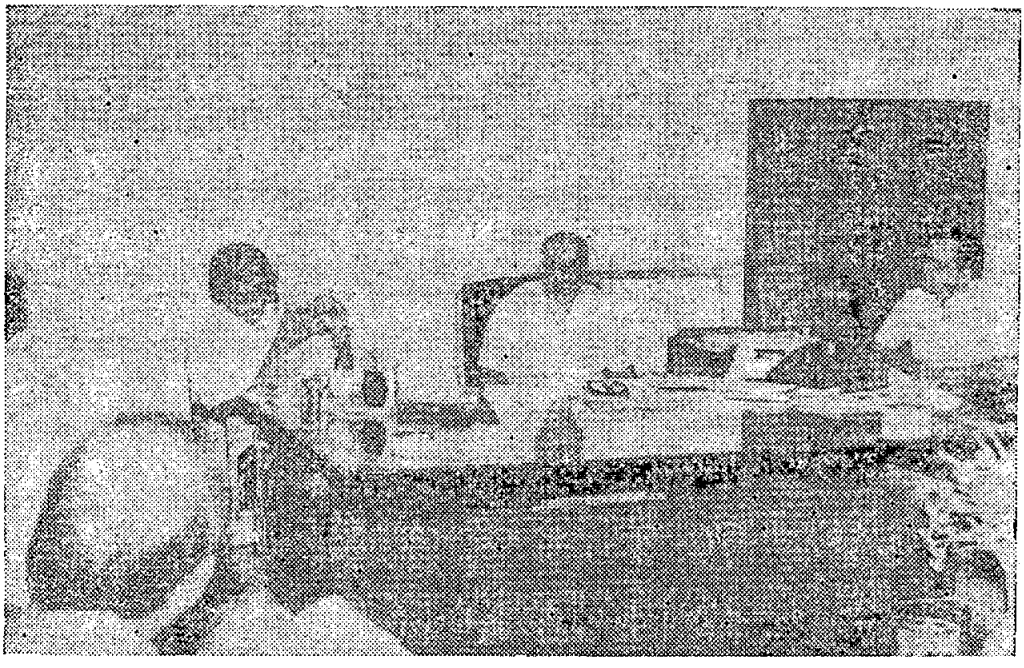

भाषा विभाग, राजस्थान के नवीनतम प्रकाशनों का विमोचन करते हुए राजस्थान विधान सभा अध्यक्ष श्री पूनमचन्द विश्नोई। बाएं से दाएं श्री पूनमचन्द विश्नोई, श्रीमती कमला, ऊर्जा एवं भाषा मंत्री राजस्थान, श्री नाथूलाल जैन, महाधिवक्ता, राजस्थान, श्री कलानाथ शास्त्री, निदेशक, भाषा विभाग, राजस्थान।

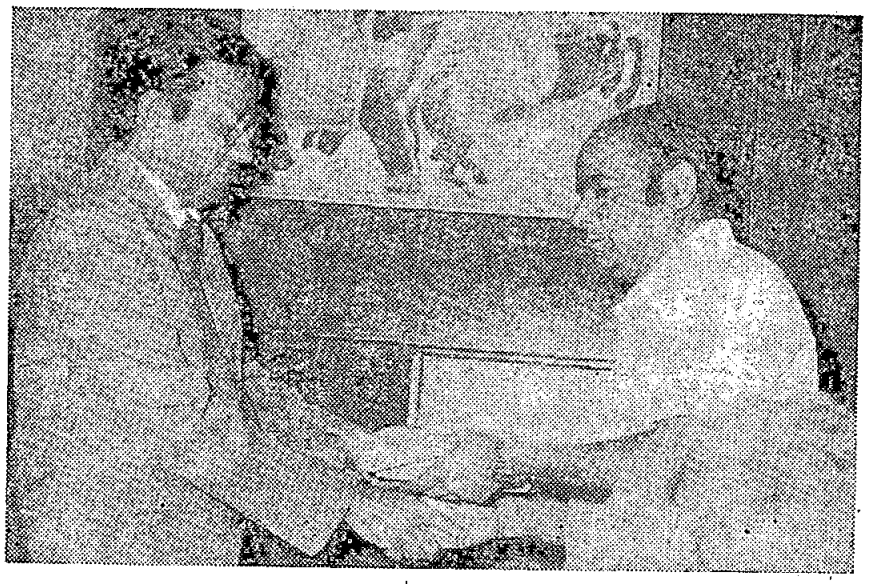

श्री राजेन्द्र भंसाली, अध्यक्ष नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं मंडल रेल प्रबन्धक उ० रे० बीकानेर से हिन्दी टंकण प्रतियोगिता का पुरस्कार प्राप्त करते हुए श्री जीवन लाल व्यास–वरिष्ठ टंकक, मंडल कार्यालय, उत्तर रेलवे, बीकानेर।

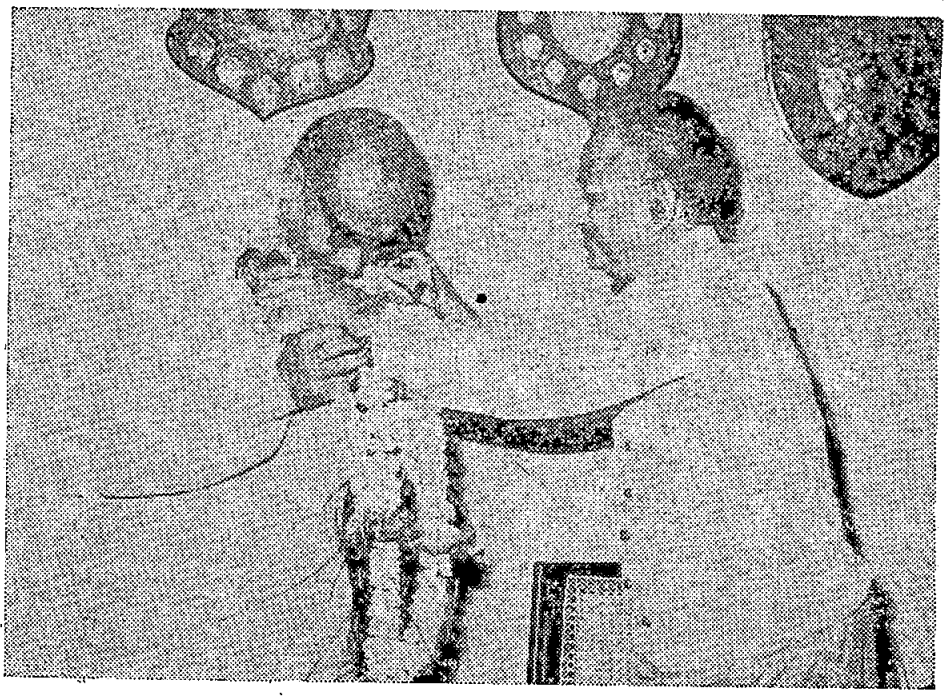

आयकर विभाग, नागपुर में दि० 28 अक्तूबर, 83 को आयोजित 12वीं हिन्दी कार्यशाला के उद्घाटन के अवसर पर मुख्य-अतिथि एवं वक्ता के रूप में आमंत्रित सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं भाषा चिंतक श्री रज्जन त्रिवेदी का स्वागत करते हुए, आयकर आयुक्त श्री केदारनाथ जी।

हिन्दी की भावी अन्तर्राष्ट्रीय भूमिका

—डॉ० ब्रजेश्वर वर्मा

आधुनिक हिन्दी की यह असाधारण विशेषता है कि वह अपने वर्तमान रूप में किसी क्षेत्र-विशेष की बोली नहीं है। उन्नीसवीं सदी से प्रचलित खड़ी बोली नाम से उसके किसी क्षेत्र की बोली होने का संकेत नहीं मिलता। यह नाम वास्तव में उसे ब्रजभाषा से भिन्न सूचित करने के लिये दिया गया था। ब्रज की 'ओ' कार बहुलता की जगह उसमें 'आ' कार की प्रधानता है 'ओ' ब्रज की मधुरता के विपरीत उसमें खरापन या खड़खड़ाहट अधिक है। मेरठ-दिल्ली के अंतराफ़ की बोली से उसका उदय अवश्य हुआ, पर क्षेत्र की खड़ी बोली क्षेत्र का नाम भाषा के नामकरण के बाद मिला। बांगरू, कौरवी और हरियाणवी नाम भी बाद में दिये गये। सबसे पहले इस भाषा का सिंधु के पार के देश 'हिन्द' और उसके निवासी 'हिन्दू' 'हिन्दुई' और 'हिन्दवी' ये सब नाम आठवीं से लेकर ग्यारहवीं-बारहवीं सदी तक लगातार आक्रमण करने वाले अरब, तुर्क, ईरानी और अफगानों ने दिये थे। इस तरह हिन्दी भाषा को संपूर्ण देश की भाषा के रूप में सबसे पहले विदेशियों ने पहचाना और उसी के अनुरूप उसे नाम दिया। 'हिन्दुई', 'हिन्दवी', के साथ 'हिन्दी' नाम भी काफी पुराना है, जैसा कि अमीर खुसरो (1253–1325) के उल्लेख से सिद्ध होता है, हालांकि अमीर खुसरो ने 'हिन्दी' नाम से, जान पड़ता है, संस्कृत का भी संकेत किया था, क्योंकि हिन्दी को अरबी के समान कहकर उन्होंने जो प्रशंसा की, वह संस्कृत पर अधिक लागू होती है।

बारहवीं-तेरहवीं से शुरू होकर जब वह अपभ्रंश से निकलकर स्वतंत्र भाषा बन ही रही थी, तभी से हिन्दवी ने अठारहवीं सदी तक सारे देश में दूर-दूर तक फैल कर संपर्क भाषा का दायित्व संभाल लिया था। विचित्र संयोग है कि उस समय तक और उसके बाद उन्नीसवीं सदी के अंत तक वह हिन्दी साहित्य की मुख्य भाषा भी नहीं थी। अवधी और ब्रज और अंततः ब्रज का हिन्दी का काव्य भाषा के रूप में पांच सौ वर्ष तक वर्चस्व बना रहा। परंतु अठारहवीं शताब्दी से जो नई सामाजिक चुनौतियां आने लगीं, उनका सामना करने में अपने व्यापक प्रसार के बावजूद ब्रजभाषा असमर्थ सिद्ध हुई। यह भारी जिम्मेदारी उठाने का सौभाग्य हिन्दवी नाम से प्रचलित भाषा को ही मिला। ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी से ही विदेशी विजेताओं के द्वारा राज्य विस्तार के लिये जो सैनिक अभियान किये गये, उनमें यही भाषा जन-संपर्क का माध्यम रही। इस कारण शुरू से ही उसकी क्षेत्रीय विशेषतायें घिसने लगीं और अंतरप्रांतीय व्यवहार में आकर उसका नया रूप निखरने लगा। हिन्दी क्षेत्र की बोलियों के अलावा उसने भारत की प्रायः सभी मुख्य भाषाओं के अनेक तत्व आत्मसात् किये और अपनी असीम सहनशीलता के बल पर उसने सारे देश में स्वेच्छा से अपनाये जाने की योग्यता पैदा कर ली। हिन्दी की यही शक्ति उसकी भावी संभावनाओं का स्रोत है।

जिस तरह उत्तर-पश्चिमी स्थल मार्गों से आये विदेशियों ने उसे हिन्दी नाम देकर पूरे देश की प्रमुख भाषा बनाया और उसी के माध्यम से अपना शासन उत्तर-पूर्व, दक्षिण और पश्चिम सभी ओर बढ़ाया, उसी तरह दक्षिण-पश्चिमी समुद्री रास्तों से आये यूरोप के व्यापारी, राजनीतिक विजेताओं ने भी 'हिन्दुस्तानी' नाम से उसकी पहचान की। इस तरह दोनों नाम हिन्दी और हिन्दुस्तानी भाषा की अक्षेत्रीय, अंतरप्रांतीय और सर्वभारतीय व्यवहार-योग्यता के सूचक है। इसी योग्यता के बल पर और अपनी मूल प्रकृति और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के अनुरोध से यह भाषा अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता की अधिकारी बन जाती है। हर नए राजनीतिक दौर में विदेशियों द्वारा प्रतिष्ठा पाना इस मान्यता की गारंटी है।

सर्वसाधारण के व्यवहार की हिन्दी या हिन्दुस्तानी अपने दो भिन्न परिनिष्ठित और साहित्यिक रूपों में भारत और पाकिस्तान दो देशों की राजभाषा है। हिन्दी और उर्दू दो स्वतंत्र भाषाओं के रूप में भारतीय संविधान में भी स्वीकृत है। परन्तु यह सर्वविदित है कि उनकी भिन्नता और अभिन्नता, पृथकता और एकता के बीच लगभग एक सौ वर्ष तक जो मीठा-कड़ुवा विवाद चलता रहा और भारत में जो उनका मिला-जुला व्यवहार होता रहा और हो रहा है, उससे यह साफ प्रकट होता है कि हिन्दी और उर्दू ऐसी भिन्न और परस्पर अनमिल भाषाएं नहीं हैं कि उनमें परस्पर संवाद संभव न हो। हिन्दी और उर्दू के भारत में कोई अलग-अलग क्षेत्र नहीं हैं। यदि उर्दू पाकिस्तान की राजभाषा है, तो भारत के भी कई राज्यों में उसे यह दर्जा मिला हुआ है। जिस तरह भारत के विभिन्न भाषा-क्षेत्रों में हिन्दी कहीं भी अजनबी नहीं है और उसके माध्यम से हर जगह सामान्य व्यवहार संभव है, उसी तरह बल्कि उससे भी अधिक पाकिस्तान की सभी भाषाओं—पंजाबी, सिंधी, और पश्तो के क्षेत्रों में हिन्दी के लिये सहज अनुकूलता है। भारत के

हिन्दी-भाषी को पाकिस्तान बनने के पहले से इन भाषाभाषियों के साथ आत्मीयता स्थापित करने में जो आसानी होती थी उसमें भी कोई फर्क नहीं पड़ा। विदेशों में हिन्दी भाषी भारतीय और पाकिस्तान के बीच भाषा का कोई अंतर नहीं रहता। फिर भी, हिन्दी और उर्दू नाम से दो भाषाओं वाले देशों की ये भाषायें अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार की भाषाओं कहीं जा सकतीं हैं। इतना ही नहीं, भारत के पास-पड़ोस के देशों नेपाल, अफगानिस्तान, वर्मा और श्रीलंका में हिन्दी के सरल रूप का सामान्य व्यवहार किसी न किसी स्तर पर कमोबेश सीमा में प्रचलित है। हिन्दी के इस सरल रूप को हिन्दुस्तानी कहना अधिक उपयुक्त है, विशेष रूप से उर्दू के साथ अधिक निकटता प्रकट करने के लिये। भारत और पाकिस्तान दोनों की इस सम्मिलित भाषा की अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार की संभावनायें असीम हैं। पश्चिम ऐशिया के देशों में जहां इस समय भारतीयों और पाकिस्तानियों के आवागमन का क्रम बढ़ता जा रहा है इसका स्पष्ट संकेत मिल रहा है। ज्यों-ज्यों हिन्दी-उर्दू भाषी व्यापार, कारोबार, मजदूरी और तकनीकी और गैर-तकनीकी पेशों के सिलसिले में फैलते जाएंगे, हिन्दी-हिन्दुस्तानी का व्यवहार जोर पकड़ता जाएगा। पश्चिम एशिया के देशों में हिन्दी-हिन्दुस्तानी में अरबी-फारसी मूल के शब्दों की अपेक्षा बहुलता रहेगी। भारत बढने पर दोनों देशों की निकटता में भी वृद्धि हो सकती है। हिन्दी-हिन्दुस्तानी के अंतर्राष्ट्रीय प्रसार में फिल्मों का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। हिन्दी फिल्मों और सुगम संगीत की लोकप्रियता पाकिस्तान और पश्चिम एशिया के देशों में निरंतर बढ़ रही है। भाषा के प्रसार में इससे अनायास सहायता मिलती है।

भारतीय संस्कृति का प्रसार किसी समय दक्षिण और दक्षिण-पूर्व एशिया में हिन्देशिया, मलेशिया, कम्बोज, हिन्द-चीन से लेकर जापान, कोरिया और मंगोलिया तक था। चीन में भी बौद्ध धर्म का प्रचार हुआ था। इस सांस्कृतिक अभियान की आधार भाषाएं संस्कृत और पालि थीं। इन देशों की भाषाओं में संस्कृत और पालि का प्रभाव आज तक मौजूद है। श्रीलंका की सिंहली भाषा उसी वर्ग की है जिसकी हिन्दी। संस्कृत और पालि के माध्यम से सिंहली और हिन्दी की निकटता है। इस प्राचीन सांस्कृतिक और भाषिक दाय को हिन्दी ही वहन कर सकती है। इन देशों में हिन्दी-हिन्दुस्तानी का अंतर्राष्ट्रीय रूप अपेक्षाकृत संस्कृतनिष्ठ होगा।

प्रवासी भारतीय दुनिया के अनेक भागों में काफी बड़ी संख्या में फैले हुए हैं। इनमें हिन्दी के अलावा अन्य भाषा-भाषी भी हैं, । पर अधिकांश में उनकी समान संप्रेषण भाषा हिन्दी बन गई है। मारिशस, फीजी, ट्रिनिडाड, गुयाना आदि भूतपूर्व ब्रिटिश उपनिवेशों में बहुत बड़ी संख्या हिन्दी क्षेत्र के भोजपुरी बोली बोलने वालों की है। अन्य बोलियों और भाषाओं के बोलने वाले भी हैं और हिन्दुओं के अलावा मुसलमान भी हैं। सामान्य संप्रेषण के लिये इन सबने हिन्दी-हिन्दुस्तानी को ही अपनाया है। अफ्रीका के कुछ देशों दक्षिण अफ्रीका, केनिया, युगांडा आदि में भी जहां गुजराती भाषियों की संख्या अधिक है हिन्दी भाषा भारतीयों के सामान्य व्यवहार में अधिक आती है। इन देशों में आर्य समाज ने हिन्दी के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। भारत में हिन्दी की पूर्व प्रतिष्ठा होने पर इन देशों के मूल निवासी भी अधिकाधिक संख्या में हिंदी को अपनायेंगे।

भारत की जनसंख्या बढ़ती जा रही है। इसके परिणाम-स्वरूप अन्य भाषाभाषियों की तरह हिन्दी-भाषियों की प्रवास भीरुता कम होती जाएगी। तमिल भाषी तो कई शताब्दियों पहले दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों में जा बसे थे। मलयालम भाषी केरलीय भी हाल में ही विदेशों में जाने लगे हैं। इधर कुछ दिनों से वे हजारों की तादाद में पश्चिम एशिया के देशों में भरते जा रहे हैं। पंजाबी भाषी दुनिया में हर जगह फल गये हैं। अमरीका के पश्चिमी तट पर केलिफोर्निया में उन्होंने बड़े-बड़े फार्म बनाये हैं। इन सब की तुलना में हिंदी भाषी शायद समुद्र तटों से बहुत दूर स्थल में सिमटे रहने के कारण और पंजाबियों की तुलना में साहसिकता और कर्मठता की दृष्टि से पिछड़े होने के कारण अधिक संतोषी और प्रवासभीरु हैं। परंतु आबादी का दबाव और बेरोजगारी जैसे उन्हें कलकत्ता और बंबई जाने के लिये विवश करती है, विदेशों की ओर भी आकृष्ट करेगी, और भविष्य में जब भारत की विभिन्न भाषाओं वाले विदेशों में बसेंगे, तब अपने सामान्य आपसी व्यवहार के लिए हिन्दी हिन्दुस्तानी का ही सहारा लेंगे। इंगलैंड में जा बसे भारतीयों और पाकिस्तानी का व्यावहारिक भाषा-सर्वेक्षण किया जाए तो कुल मिलाकर निष्कर्ष हिन्दी-हिन्दुस्तानी के पक्ष में ही निकलेगा। यह स्थिति इंगलैण्ड के अलावा यूरोप के अन्य देशों में, अमरीका में और अन्यत्र भी होगी। इस संबंध में उच्च शिक्षा प्राप्त भारतीयों, विशेष रूप से हिन्दी भाषियों का अंग्रेजी के प्रति दासभाव जैसा लगाव बहुत बड़ी बाधा है। पढ़े-लिखे, यानी अंग्रेजीदां हिन्दी भाषियों की अपनी भाषा के प्रति विशेष उदासीनता वास्तव में चित्य है।

सामान्य व्यवहार की भाषा के रूप में हिन्दी-हिन्दुस्तानी का प्रसार हिन्दी की अंतर्राष्ट्रीय भूमिका का प्रबल और मूलभूत अंग है। इस संबंध में भारत के विभिन्न भाषा क्षेत्रों में हिन्दी-हिन्दुस्तानी के व्यवहाररूपों की विविधता को ध्यान में रखते हुए अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रों में भी अंग्रेजिया हिन्दी की न तो लिपि अलग है और न इसका समर्थक रही दक्षिण भारत में आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक और केरल, पूर्व भारत के बंगाल, असम और उड़ीसा, उत्तर भारत के कश्मीर और पश्चिम भारत के पंजाब, गुजरात और महाराष्ट्र के अनेक मुस्लिम बहुत छोटे-छोटे क्षेत्रों की हिंदी, कलकतिया हिन्दी, बंबइया हिन्दी, कुछ फिल्मों में मजाक के तौर पर प्रयुक्त दक्षिणी भारतीयों की हिन्दी, पंजाबी हिन्दी, गुजराती हिन्दी, बंगाली हिन्दी आदि की तरह भिन्न-भिन्न देशों में प्रयुक्त हिन्दी-हिन्दुस्तानी में उन-उन देशों की भाषाओं का रंग आना अनिवार्य है। मानक हिंदी में भी डच, फ्रेंच,

पुर्तगाली और अरबी, फारसी-तुर्की भाषाओं के न जाने कितने शब्द और कुछ भाषिक तत्व भरे पड़े हैं। वर्तमान समय में हिन्दी के देश-व्यापी प्रसार के साथ भारतीय भाषाओं के प्रभाव से उसके रूपों में विविधता आती जा रही है। इसमें भी अधिक विविधता उसके सामान्य व्यवहार के अंतर्राष्ट्रीय प्रयोगों में भी आएगी। उसके लक्षण आज भी देखे जा सकते हैं। हिंदी की यह ऐतिहासिक उदारता बना रहेगी। अंतर्राष्ट्रीय भाषाओं में इस तरह की उदारता अंग्रेजी में सबसे अधिक है और शायद फ्रेंच में सबसे कम। जिस तरह इंगलैण्ड जैसे छोटे से देश में छेद-भेद के अनुसार भाषा का प्रयोग-भेद पाया जाता है, और जिस प्रकार अमरीका के भिन्न-भिन्न यूरोपीय भाषाओं के बोलने वालों की अमरीकी अंग्रेजी में विविधता पाई जाती है, उसी तरह भूतपूर्व अंग्रेजी साम्राज्य के अधीन देशों की अंग्रेजी में संबंधित भाषाओं का रंग लिये अंग्रेजी के तरह-तरह के रूप देखे जाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार की हिन्दी हिन्दुस्तान की भी कुछ-कुछ ऐसी ही स्थिति रहेगी। एक अंतर इस कारण अवश्य रहेगा कि अंग्रेजी का प्रसार शासन के बल पर हुआ, इसीलिये सभी देशों की अंग्रेजी को उसके स्टैंडर्ड रूप की ओर उन्मुख बनाये रखने के प्रयास किये जाते रहे। हिन्दी-हिन्दुस्तानी के विविध रूपों को हिन्दी के परिनिष्ठित रूप की ओर उन्मुख होने की उस तरह की मजबूरी कभी नहीं हो सकती। राजभाषा हिन्दी के परिनिष्ठित रूप की अतर्राष्ट्रीय मान्यता और उसकी राजनीतिक प्रतिष्ठा ही इस संबंध में नियामक अधिकरण की भूमिका निभा सकती है।

व्यावहारिक हिन्दी की एक और प्रवृत्ति गत पचास-साठ वर्षों में तेजी से बढ़ती जा रही है। वह है, अंग्रेजी शब्द ही नहीं पदबंधों तक को ज्यों का त्यों हिन्दी वाक्यों में ठूंसने की प्रवृत्ति। भाषा-व्यवहार के सभी स्तरों पर अंग्रेजी से परिचित हिन्दी भाषियों की हिन्दी हिन्दुस्तानी में मिश्रण की यह प्रवृत्ति इतनी बढ़ती जा रही है कि अक्सर क्रिया रूप, और उसमें भी केवल सहायक क्रिया के रूप, परसर्ग और शायद क्रियाविशेषण तो हिन्दी के रहते हैं; वाक्य के अन्य सभी घटक अंग्रेजी से लेकर प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी के इस रूप को उस तरह का अभी कोई नाम नहीं दिया गया जिस तरह अरबी-फारसी शब्दावली के अतिशय बोझ से लदी हिन्दी को उर्दू नाम से अलग कर लिया गया था। इसका कारण शायद यही है कि उर्दू की तरह इस अंग्रेजी हिन्दी की न तो लिपि अलग है और न इसका समर्थक कोई अलग सांस्कृतिक या धार्मिक समुदाय। परंतु भाषा प्रयोग के आधार पर समाज में वर्ग-विभाजन तो इस प्रवृत्ति के कारण बढ़ ही रहा है। आजादी के बाद अंग्रेजी का प्रभाव और उसकी आतंकपूर्ण प्रतिष्ठा घटने के बजाये बढ़ती ही गई है। इस कारण इस अस्वस्थ्य और कुंठाजनक भाषा-मिश्रण को रोकना कठिन जान पड़ता है। हिन्दी ही नहीं भारत की सभी भाषायें इस रोग की शिकार हो रही हैं। कोई देश-व्यापी जन-आंदोलन ही इस प्रवृत्ति को निरुत्साहित कर सकता है। हिन्दी में अंग्रेजी का यह मिश्रण उसके अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार के रूप का सामान्य लक्षण कभी नहीं बन सकता। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अंग्रेजी की तकनीकी शब्दावली अवश्य एक सीमा तक हिन्दी के मौखिक व्यवहार मे सहायक होगी। बल्कि उच्च शिक्षा प्राप्त विभिन्न व्यावसायिक वर्गों के परस्परसंवाद की अंतर्राष्ट्रीय हिन्दी में निश्चय ही मुख्य रूपों से अंग्रेजी और सामान्य रूप से अन्य यूरोपीय भाषाओं की तकनीकी शब्दावली का प्रयोग अधिक सुविधाजनक और प्रायः अनिवार्य होगा।

सामान्य व्यवहार की हिन्दी-हिन्दुस्तानी विविध रूपों की स्थिति देश में प्रचलित उसके विविध रूपों के समान स्टैंडर्ड हिंदी से नीचे के स्तर की होगी। उच्च तर की हिन्दी अंतर्राष्ट्रीय प्रयोग के दो मुख्य संदर्भ हैं और अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी पर विचार करते समय प्रायः उन्हीं पर अधिक ध्यान जाता है। पहला संदर्भ शैक्षणिक प्रयोगों का है और दूसरा राजनीतिक मान्यता का। शैक्षिणिक संदर्भ में शिक्षा और उसके विभिन्न स्तर और ज्ञान-विज्ञान संबंधी विविध विद्वत कार्य आते हैं। भाषा की वास्तविक प्रतिष्ठा मुख्य रूप से इस पर निभर होती है। राजनीतिक संदर्भ के अंतर्गत वह सब अंतर्राष्ट्रीय कार्य आता है जिसका संबंध विविभन्न देशों के साथ कूटनीतिक संपर्क और वाणिज्य-व्यवसाय से है। राष्ट्र-संघ और उसके अंतर्गत विभिन्न राजनीतिक, शैक्षिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संगठन भी इसी से संबंधित हैं। भाषा की अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार की यह सर्वोच्च स्थिति है और शैक्षणिक मान्यता बहुत कुछ उस पर निर्भर होती है।

शैक्षणिक दृष्टि से हिन्दी के अंतर्राष्ट्रीय प्रसार की कई स्थितियां हैं। उन देशों में, जहां भारतमूल के निवासी अधिक संख्या में हैं, जैसे, फ़ीजी, मारिशस, ट्रिनिडाड, सुरीनाम, गुयाना, वहां प्रवासी भारतीयों के बीच हिन्दी सीखने-सिखाने की औपचारिक व्यवस्था काफी अर्से से चल रही है। दक्षिण अफ्रीका जैसे देशों में भी जहां भारतीय आबादियां एक साथ बसी हुई हैं, यह व्यवस्था पाई जाती है। अधिकतर यह कार्य स्वैच्छिक, संस्थाओं द्वारा होता है, पर कहीं-कहीं शासन द्वारा भी सहायता और मान्यता प्राप्त हुई है। परंतु यह शिक्षण शिक्षा के उच्च स्तर पर नहीं है, क्योंकि हिन्दी की उच्च शिक्षा प्राप्त करने से किसी प्रकार की उन्नति की आशा नहीं की जा सकती। इसे हिन्दी के शैक्षणिक व्यवहार का एक सीमित अंग ही कह सकते हैं, क्योंकि इसका उपयोग वही करते हैं जो हिन्दी को अपनी भाषा मानते हैं। जब इन देशों के मूल निवासी भी इसका लाभ उठाने लगेंगे। तभी इसे वास्तविक अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार कहा जा सकेगा। वर्तमान रूप में इसे हिंदी की भावी अंतर्राष्ट्रीय भूमिका का एक प्रबल साधन अवश्य कहा जा सकता है, क्योंकि इसका असर हिन्दी-हिन्दुस्तानी के सामान्य व्यवहार पर पड़ता है और उससे गैर-हिन्दी भाषी मूल निवासी भी हिन्दी को अपनाने की ओर उन्मुख होते हैं। हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था के साथ-साथ अन्य शैक्षणिक कार्य, साहित्यिक

क्रियाकलाप, सामयिक साहित्य, साहित्यिक सांस्कृतिक संस्थाएं, प्रकाशन कार्य आदि के द्वारा भी हिन्दी के लिये अनुकूल वातावरण बनता है और उसकी अंष्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा की पृष्ठभूमि तैयार होती है। हम आशा कर सकते हैं कि भविष्य में इन देशों में हिन्दी को राजनीतिक मान्यता मिलेगी और शासन की सहभाषा के रूप में उसका प्रयोग होने लगेगा। अभी केवल फीजी के संविधान में संसद् में भाषण देने के लिये हिन्दुतानी की छूट मिली है। उच्च शिक्षा की लालसा पूरी करने के लिये इन देशों के नवयुवक अच्छी संख्या में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग और राष्ट्रभाषा समिति वर्धा की परीक्षाओं में बैठते हैं।

शैक्षणिक हिन्दी का वास्तविक अंतर्राष्ट्रीय प्रसार यूरोप अमरीका और एशिया के कुछ देशों में हुआ है। पश्चिमी और पूर्वी यूरोप में मिला कर कम से कम एक दर्जन देशों में तीन दर्जन विश्वविद्यालयों और संस्थानों में हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था है। कनाडा और संयुक्त राज्य अमरीका में लगभग चार दर्जन विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन और रूसी में हिन्दी की अनेक कृतियों के अनुवाद हुए हैं। इन भाषाओं में हिन्दी के द्विभाषी कोश, व्याकरण, इतिहास और समीक्षा संबंधी महत्वपूर्ण शोधपरक और परिचयात्मक प्रकाशन भी हुए हैं। प्राच्य शिक्षा और भारतीय विद्या सम्मेलनों में हिंदी और उर्दू को भी स्थान मिलने लगा। एशिया में नेपाल ही ऐसा देश है जहां हिन्दी को उच्चतम शिक्षा तक स्थान मिला है। त्रिभुवन विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग की प्रतिष्ठा है। श्रीलंका के कोलम्बो विश्वविद्यालय में भी इस तरह की व्यवस्था हुई है। जापान में भी कम से कम आधे दर्जन विश्वविद्यालयों और संस्थानों में हिन्दी पाठ्यक्रम चलते हैं, जिन कईमें में उच्च शिक्षा की व्यवस्था है। विदेशों के अनेक विश्वविद्यालयों और संस्थानों में हिन्दी-उर्दू के सम्मिलित विभाग हैं। कुछ देशों में हिन्दी की पत्र-पत्रिकायें भी मुद्रित या हस्तलिखित रूप में प्रकाशित होती हैं। परंतु रूस और पूर्वी योरोप के अन्य देशों को छोड़ सभी पश्चिमी देशों में हिंदी शिक्षण या तो दक्षिण-पूर्व एशिया संबंधी अध्ययनों या भाषाविज्ञान विभागों के एक अंग के रूप में होता है। उसका स्तर कुछ अपवादों को छोड़कर उच्च और प्रतिष्ठाजनक नहीं है। निश्चय ही हिन्दी को उन्नत देशों की भाषाओं के समान आदर नहीं मिला है। चीनी और अरबी भाषाओं को भी अंतर्राष्ट्रीय शैक्षणिक स्थिति हिंदी से बेहतर है। जब तक शैक्षणिक, प्रशासनिक और राजनीतिक दृष्टि से स्वयं देश में अंग्रेजी का स्थान हिन्दी से ऊंचा रहेगा, तब तक विदेशों में शैक्षणिक प्रतिष्ठा में हिन्दी नीचे बनी रहेगी। अभी तो यही आशा की जा सकती है कि हिन्दी भाषा और साहित्य स्वयं अपने बल पर, अर्थात समृद्धि और गौरव अर्जित करके सम्मान प्राप्त करता जाएगा। यही वास्तव में स्थाई प्रतिष्ठा का मूल आधार है।

अंतर्राष्ट्रीय भूमि का अंतिम लक्ष्य हिन्दी के विश्वव्यापी राजनीतिक और कूटनीतिक व्यवहार और राष्ट्र की वास्तविक मान्य भाषा के रूप में विदेशों द्वारा उसे स्वीकार किया जाना है। राष्ट्रसंघ की अंग्रेजी, रूसी, फ्रेंच, स्पेनिश, चीनी और अरबी भाषाओं के साथ उसे सातवीं भाषा के रूप में मान्यता मिलना, उसी व्यवहार का तर्कसम्मत प्रतिफल हो सकता है। परंतु उपर्युक्त छह भाषाओं में अंतिम दो चीनी और अरबी का राष्ट्रसंघ के कार्यों में अपेक्षाकृत कम प्रयोग होता है। प्रधानता केवल पहली तीन अंग्रेजी, रूसी और फ्रेंच की है। कहना न होगा इसका कारण राजनीतिक, आर्थिक, औद्योगिक और सामरिक शक्ति ही है। प्रथम विश्वयुद्ध के पहले फ्रेंच और जर्मन का जो महत्व था वह बाद में नहीं रहा। अंग्रेजी को फ्रेंच के बराबर का दर्जा मिल गया और जर्मनी की पराजय जर्मनी भाषा के राजनीतिक पराभव का कारण बन गई। द्वितीय विश्व युद्ध में फिर पराजित होकर जर्मनी के दो खंडों में विभाजित होने पर जर्मन भाषा विश्व के राजनीतिक मंच से विदा हो गई। इसके विपरीत अंग्रेजी ने फ्रेंच को भी पीछे ढकेलकर विश्वभाषाओं में पहला स्थान प्राप्त कर लिया। इसका कारण अमरीका का राजनीतिक प्रभुत्व है, यद्यपि अंग्रेजी पीछे खिसकती जा रही है। द्वितीय विश्वयुद्ध के पहले दुनिया के भाषा-मानचित्र पर रूसी का महत्व नहीं था, पर द्वितीय युद्ध के विजेताओं में अमरीका के साथ रूस का बराबरी का स्थान हो गया और रूसी भाषा भी दुनिया की दो महान भाषाओं में गिनी जाने लगी। फ्रेंच भाषा की महत्ता बनाये रखने के अनेक कारण हैं। फ्रेंच की अपनी भाषिक विशेषतायें विशेष रूप से उसकी अर्थभ्रम से रहित अपेक्षाकृत सुनिश्चित अभिव्यक्ति-क्षमता उसकी अंतर्राष्ट्रीय उपयोगिता को कायम रखने का बहुत बड़ा कारण है। साथ ही राजनीतिक दृष्टि से यूरोप में फ्रांस का महत्व अद्वितीय रहा है। आधुनिक काल में उसका गौरवपूर्ण इतिहास जर्मनी की विश्वविजय की महत्वाकांक्षा की पूर्ति में उसके द्वारा उपस्थित की गई बाधाएं और अदम्य साहस के साथ जर्मनी का मुकाबला करते रहने की उसकी संकल्प-शक्ति आदि अनेक कारणों से फ्रांस की राजनीतिक प्रतिष्ठा स्थिर बनी रही। उसकी भाषा की प्रतिष्ठा के पीछे इन राजनीतिक घटकों का बहुत बड़ा हाथ है। स्पेनिश भाषा की मान्यता के पीछे जो ऐतिहासिक कारण हैं उनमें दक्षिण अमरीका के अनेक देशों में उसके एकाकी प्रभुत्व का सबसे अधिक महत्व है। द्वितीय विश्वयुद्ध में जापान के विरुद्ध चीन के अमरीका-रूस के मित्र-पक्ष में रहकर विजयी होने से चीन का राजनीतिक महत्व बढ़ने के साथ चीनी भाषा को भी महत्व मिला। साथ ही भौगोलिक विस्तार और जनसंख्या की दृष्टि से भी चीन का पहला स्थान रहा है। अरबी भाषा अपने प्राचीन गौरव के बावजूद सदियों तक दबी रही, क्योंकि आधुनिक काल में अरब देशों की राजनीतिक स्थिति दुर्बल और पराधीनतापूर्ण थी। पर तेल भंडारों के धन से अरबों के भाग्य पलट गये और

अचानक उनका महत्व बढ़ गया। धन के जोर से ही अरबी भाषा राष्ट्रसंघ की छठी अधिकृत भाषा हो गई।

भाषाओं की सर्वोच्च अंतर्राष्ट्रीय मान्यता की उपरिलिखित परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में भारत और उसकी राजभाषा-राष्ट्रभाषा हिन्दी को देखने पर दोनों के अंतर्राष्ट्रीय मान और महत्व का मूल्यांकन आसानी से किया जा सकता है। स्वतंत्रता-प्राप्ति के पहले ही भारत ने दुनिया की बड़ी शक्तियों का ध्यान आकर्षित कर लिया था। भारतीय राजनेताओं में महात्मा गांधी और जवाहरलाल नेहरू के नाम विशेष रूप से विश्व विख्यात होने लगे थे। ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध उसका राजनीतिक, आर्थिक स्वाधीनता का संघर्ष विश्व के इतिहास में अद्वितीय था। आजादी के बाद उसकी राजनीतिक सुस्थिरता, वैज्ञानिक और औद्योगिक प्रगति, विश्व की परस्पर संघर्षशील शक्तियों के राजनीतिक सामरिक प्रभावों से मुक्त उसकी स्वतंत्र विदेश नीति और एशिया और हिन्द महासागर के देशों में उसकी भौगोलिक स्थिति आदि अनेक कारण हैं, जिनसे अंतर्राष्ट्रीय जगत में भारत का सम्मान ऊंचा हुआ। क्षेत्रीय विस्तार और जनसंख्या की दृष्टि से दुनिया में वह दूसरे स्थान पर है। लोकतांत्रिक व्यवस्था वाला वह सबसे बड़ा देश है। नवस्वतंत्रता प्राप्त विकासशील देशों को गुटनिरपेक्ष विदेश नीति के आधार पर संगठित करने और उनके साथ मिल कर सामूहिक रूप में विश्वशांति, समता, बंधुत्व, मानवता और आर्थिक न्याय का प्रबल आंदोलन चलाने में उसकी शानदार भूमिका रही है। विश्व की राजनीति में उसकी बात का वजन है। ऐसे महान देश की भाषा का आदर होना अवश्यंभावी है। इस प्रतिष्ठा के कारण स्वतंत्र भारत की संविधान स्वीकृत राजभाषा हिन्दी का सम्मान भी अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में बढ़ा है। यह सम्मान कहीं अधिक बढ़ गया होता, अगर हिन्दी को पूरे तौर पर राजभाषा का दायित्व निभाने का अवसर मिल जाता। राजकीय कार्यों में अंग्रेजी का साम्राज्य अब भी कायम है। विदेश नीति और कूटनीति संबंधी सभी कार्य अंग्रेजी में होते हैं। भारतीय दूतावासों में अंग्रेजी ही चलती है। हिन्दी का प्रयोग केवल औपचारिक प्रतीक रूप में होता है। परंतु यह आशा निराधार नहीं है कि हिंदी अंग्रेजी के द्वारा अपहृत अपना पद अवश्य प्राप्त कर लेगी। जब कभी ऐसा हो सकेगा हिन्दी विश्वविद्यालयों के मंच पर ऊंचा स्थान पाएगी और तब वह दिन दूर न रहेगा जब राष्ट्रसंघ में उसका वही स्थान होगा जो अंग्रेजी, रूसी और फ्रेंच को प्राप्त है। चीनी और अरबी की तुलना में एशिया के देशों में उसका प्रसार और सम्मान अधिक होगा। इसका संकेत उसके सरल हिन्दी-उर्दू के मूलरूप हिन्दुस्तानी के संपूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप और उसके पास-पड़ोस के देशों में व्यापक प्रचलन से मिलता है। इसकी अपरिचित संभावनाओं का उल्लेख पीछे किया गया है। परंतु भारत को अपनी भाषानीति के निर्धारण, नियोजन और राजकीय हिन्दी के स्वरूप पर व्यावहारिक और प्रगतिशील दृष्टिकोण से सतत विचार और पुनर्विचार करते रहना जरूरी है।

यह बारंबार समझते रहने और स्मरण रखने की बात है कि हिन्दी गत आठ सौ वर्ष से देशव्यापी संपर्क भाषा राष्ट्रभाषा के पथ पर अग्रसर होती रही है। औपचारिक राजकीय मान्यता भी उसे मिली और यह मार्के की बात है कि इसे मान्यता दूर दक्षिण के मुसलमानी राज्यों में मध्ययुग में ही मिल गई थी। लगभग तीन सौ वर्ष तक बहमनी सल्तनत में वह इस पद पर आसीन रही। लिपि अवश्य उसकी देवनागरी नहीं थी और उसका नाम दकनी या दक्खिनी हिन्दी था। परन्तु उसी भाषा का उत्तर भारतीय आधुनिक रूप सामान्य सम्पर्क भाषा की तरह कमोबेश देशभर में प्रचलित रहा। इसी ऐतिहासिक अनिवार्यता के कारण उसे राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, केशवचंद्र सेन, महात्मा गांधी और अनेक गैर-हिन्दी क्षेत्र के सामाजिक नेताओं ने अखिल भारतीय भाषा के रूप में पहचाना। आगे चलकर वह स्वाधीनता संग्राम की मुख्य माध्यम भाषा बनी और अंत में स्वतंत्र भारत की राजभाषा चुनी गई। हिन्दी उसका प्राचीनतर नाम है, जो मध्ययुग में उसके अधिक प्रचलित नाम हिन्दुई या हिन्दवी जितना ही पुराना है। फारसी-अरबी की शब्दावली और उसकी साहित्यिक-सांस्कृतिक परंपरा के अधिक मिश्रण से हिन्दी की जो शैली अठारहवीं सदी में अलग उभरकर आई, उसका नाम उर्दू हो गया। लिपि की भिन्नता के कारण भाषा के दो रूपों का अलगाव अधिक स्पष्ट और स्थायी जैसा हो गया। परंतु दोनों के मूल में भाषा का जो एक ही सामान्य रूप विद्यमान है, उसे हिन्दुस्तानी नाम देना स्वाभाविक है। पूरे हिन्दुस्तान में वही प्रचलित है। उसके द्वारा हिन्दी का भारत की विभिन्न भाषाओं विशेषकर उर्दू के साथ सम्मिलन सहज हो जाता है। साथ ही वह भारत और पाकिस्तान के बीच भावनात्मक एकता स्थापित करने का साधन भी है। संविधान की 351 वीं धारा में हिन्दी के विकास के लिये दिये गये निर्देश में हिन्दुस्तानी शैली का उल्लेख भारत की मिलीजुली सामाजिक संस्कृति के संदर्भ में किया जाना महत्वपूर्ण है। हिन्दुस्तानी उस संस्कृति की वाहक, संरक्षक और उन्नायक है। उसकी ग्रहणशीलता उसे एशिया की अनेक भाषाओं से अपनी भाषा-संपदा बढ़ाते हुए बड़े विस्तार में ग्राह्य बनने में सहायक होती रहेगी।

परंतु हिन्दुस्तानी कोई अलग भाषा नहीं है। इसी कारण संविधान की अष्टम अनुसूची में उसे नहीं दिखाया गया। हिन्दुस्तानी एक भावना है। देश के विभाजन को उस भावना द्वारा बचाने के उद्देश्य से ही उस पर अधिक जोर दिया गया था और भावनात्मक उद्देश्य से ही संविधान में हिन्दी के स्थान पर राजभाषा हिन्दुस्तानी नाम से अंकित कराने के प्रयास किये गये थे। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी इस भावना के प्रेरणा स्रोत थे परंतु उसे पूर्ण भाषा के रूप में विकसित

करना संभव नहीं था। हिन्दी और भारत की सभी विकासशील भाषाओं का संस्कृत के साथ ऐसा स्वाभाविक संबंध है कि उसे तोड़ने का प्रयास करना भाषा-प्रवाह के स्रोत पर ही बांध बनाने के समान है। संस्कृत का मुख्य उत्तराधिकार हिन्दी को ही मिला है। महात्मा गांधी की हिन्दुस्तानी भावना को भाषा रूप देने के उद्देश्य से संस्कृत की तत्सम शब्दावली को अरबी-फारसी की शब्दावली के साथ बराबरी का संबंध जोड़ते हुए हिन्दी से दूर रखने के जो प्रयास किये गये उसकी परिणति हास्यास्पद ही रही। आधुनिक युग में हिंदी के नए पथ पर चलने के शुरू में 1800 के आसपास मुंशी इंशा अल्ला खां ने 'हिन्दवी छुट किसी और बोली का पुट' न आने देकर अरबी, फारसी, संस्कृत और ब्रजभाषा आदि के प्रभावों से मुक्त भाषा गढ़ने का जो प्रयोग 'उदयभान चरित' में किया था वह भी विफल रहा था। इसके बाद बीसवीं सदी के दूसरे दशक में संस्कृत की घनघोर तत्समप्रधान शैली में रचित 'प्रियप्रवास' के प्रसिद्ध कवि पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय ने 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' 'चौखे चौपदे' और 'चुभते चौपदे' लिखकर इसी प्रकार के जो नमूने पेश किये उन्हें भी गंभीरता से नहीं लिया गया। भाषा की जिमनास्टिक कभी सफल नहीं हो सकती।

भाषा को उसकी परम्परा से काटा नहीं जा सकता। हिन्दी ने अपभ्रंश की गोद से उठकर चलना शुरू करते ही संस्कृत की संचित संपदा से पोषण पाना आरंभ कर दिया था। मध्ययुग के संपूर्ण साहित्य में कबीर से लेकर पद्माकर तक संस्कृत की शब्द-संपत्ति का जो प्रयोग हुआ, उसके बगैर साहित्य की रचना और भाषा का विकास हो ही नहीं सकता था। अरबी-फारसी के प्रभाव से भी उसने बहुत लाभ उठाया। परन्तु किसी भाषा के विकास में स्वयं उसकी ऐतिहासिक परंपरा और आगत विदेशी प्रभावों की बराबरी नहीं हो सकती। अरबी-फारसी के अतिशय प्रभाव ग्रहण करने का परिणाम भाषा-विभाजन और उर्दू नाम से एक नई भाषा के उदय में हुआ। जिस तरह मध्ययुग के पुनरोदय और नव-जागरण को प्रभावशाली वाणी देने के लिये संस्कृत का आश्रय आवश्यक था, उसी प्रकार उन्नीसवीं-बीसवीं सदी के आधुनिक नव-जागरण की अभिव्यक्ति के लिये वही अक्षय कोष काम आया। स्वतंत्र भारत की अनेकविध मागों की पूर्ति भी उसी स्रोत से हो सकती है। यही अनुभव करते हुए संविधान की 351 वीं धारा में हिंदी के विकास के लिये मुख्य रूप से संस्कृत से लाभ उठाने का निर्देश किया गया है। इस अनिवार्यता की उपेक्षा नहीं की जा सकती। साथ ही, यह भी सहज अनिवार्यता है कि संपूर्ण देश की नई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हिंदी सभी सहभाषाओं के संपर्क सहयोग से लाभ उठाए। परंतु अपने विकासक्रम में सहजभाव से संस्कृत के स्रोत और अन्य भाषाओं के सहचारजन्य प्रभावों का उपयोग करते हुए हिन्दी को अपनी आत्मा-अस्मिता या निजता को सुरक्षित रखना जरूरी है।

हिन्दी की निजता को सबसे बड़ा खतरा अंग्रेजी के अत्यधिक दबाव से पैदा हुआ है। अंग्रेजी की अनुवाद-भाषा के रूप में उसके प्रयोग में संस्कृत की शब्दावली का बोझ लदता जा रहा है। इस क्रम में उसके सामान्य जन से कट जाने का भी खतरा है। अपनी बोलियों से भी वह अलग होती चली जा रही है। इसीलिये यह जरूरी है कि उसे अपने सरल सहज रूप में विकास करने दिया जाए। उसे अपने आधारभूत सामान्य भाषारूप से, जिसका उल्लेख संविधान में हिन्दुतानी शैली नाम से किया गया है, लगाव बनाए रखना जरूरी है। तकनीकी और पारिभाषिक शब्दावली के प्रयोग के अलावा अनावश्यक संस्कृत तत्समता से भाषा को बोझिल न बनाकर अगर उसे जहां तक संभव हो सरल, सहज रूप में हिन्दी-हिन्दुस्तानी के नजदीक रखा जाए तो वह उर्दू का भी बहुत सा साहित्य आत्मसात कर सकती है। इससे देश में हिन्दी-उर्दू के वर्तमान भाषा-विभाजन से उत्पन्न तनाव को दूर किया जा सकेगा। यह भी संभव है कि पाकिस्तान के साथ भाषा-संपर्क स्थापित हो जाए और भविष्य में भारत और पाकिस्तान इस उपमहाद्वीप की दो प्रधान भाषाओं हिन्दी और उर्दू की अंतर्राष्ट्रीय मान्यता के लिए मिलकर प्रयास करें। कम से कम तीन और राष्ट्र नेपाल, फीजी और मारिशस इस प्रयास में शामिल हो सकते हैं। □□□

मैं चाहता हूं कि भारत की राजभाषा हिन्दी तेरह कोहनूरों का किरीट धारण कर भारतीय रंगमंच पर अवतीर्ण हो और मैं उसके इस रूप को इन्हीं आंखों से इसी जीवन में देख सकूं।

—ओडोलेन स्मेकल

अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ में हिन्दी

—प्रो० सिद्धेश्वर प्रसाद

भाषा और साहित्य की समृद्धि तथा भाषाभाषियों की संख्या आदि सभी दृष्टियों से हिन्दी संसार की विशिष्ट एवं कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण भाषाओं में एक है। पिछले करीब हजार वर्षों से जब राजभाषा और राष्ट्रभाषा के रूप में संस्कृत का प्रचलन कम हो गया, हिन्दी राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा, दोनों रूपों में भारत तथा आस-पास के कुछ देशों में व्यवहृत होती रही है। लेकिन स्वराज्य की प्राप्ति के बाद हिन्दी केवल भारत की राष्ट्रभाषा ही नहीं रह गई, बल्कि जब इसे संविधान में भारत की राजभाषा के रूप में भी स्वीकृत किया गया तो स्वभावतः ऐसा माना जाने लगा कि इसे देर-सवेर संयुक्त राष्ट्र संघ एवं संसार की अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं-संस्थानों में भी स्थान मिलेगा और अंतर्राष्ट्रीय संपर्क की भाषा के रूप में इसे भी धीरे-धीरे स्वतः मान्यता प्राप्त होगी। लेकिन जिन कारणों से भारत को संयुक्त राष्ट्र संघ में या विशेष रूप से संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद् में स्थायी या विशेष महत्व नहीं प्राप्त हो सका, करीब-करीब उन्हीं कारणों से भारत की राजभाषा हिन्दी को भी वह स्थान नहीं प्राप्त हो सका।

इसमें संदेह नहीं कि सन् 1947 की तुलना में आज कई दृष्टियों से स्थिति बदल गई है। जहां तक आंतरिक स्थिति की बात है, सबसे बड़ी बात यह हुई कि आज देश में राष्ट्रीयता की वैसी ज्वलंत भावना नहीं है जैसी भावना के बिना भारत जैसे देश की राजभाषा ही नहीं बल्कि अन्य आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं का भी समाधान संभव नहीं है। आज अक्सर राष्ट्रीयता जैसी मूल्यों की बात को भावुकता की बात कह कर टाल देना एक फैशन-सा हो गया है। परन्तु क्या यह वास्तविकता नहीं है कि बगैर भावना के मानव जीवन बंजर हो जाता है और उसका जीवन पशु-तुल्य, क्योंकि सभी मन्यताओं और आदर्शों का मूल संबंध भावना से ही है। अतः राष्ट्रीयता की भावना के बगर हमारी अनेक समस्याओं का न तो समुचित निदान संभव है और न उसका समाधान।

एक ओर यह तो ठीक है कि अंग्रेजी राज की तुलना में आज कई बातों में भारत सरकार के राजकाज में हिन्दी का भारत संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग बढ़ा है, परन्तु दूसरी ओर यह बात भी उतनी ही सही है कि स्वराज्य की प्राप्ति के बाद अंग्रेजी और अंग्रेजियत का दबदबा भी उतनी ही तेजी से बढ़ा है तथा आज सारे देश में छोटे-छोटे कस्बों में भी अंग्रेजी माध्यम के विद्यालय खुलते जा रहे हैं। यह इस बात का द्योतक है कि हमारी राष्ट्रीयता की भावना मंद पड़ गई है और हम भाषा जैसी राष्ट्रीय महत्व की बात पर आज राष्ट्रीय दृष्टि से विचार नहीं कर पा रहे हैं।

संविधान में स्वीकार किया गया था कि 26 जनवरी, 1965 के बाद हिन्दी भारत सरकार की राजभाषा होगी। लेकिन संविधान की इस मान्यता के साथ 15 वर्षों की अवधि में राजकाज की भाषा के रूप में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाने की जो बात थी, सरकार ने न केवल करीब-करीब इसकी उपेक्षा की बल्कि अंग्रेजी के समर्थकों की इस भावना को भी ठेस पहुंचाने में हिचकती रही है कि सन् 1965 के बाद देश में अंग्रेजी नहीं रहेगी, इसीलिए न केवल देश के भीतर सरकारी कामकाज में बल्कि देश के बाहर के संपर्क में भी हिन्दी के व्यवहार को जो अधिकाधिक स्थान दिया जाना चाहिए था न तो उसके लिए कोई तैयारी की गई और न उस ओर कोई ध्यान ही दिया गया।

अतः स्वभावतः ऐसी स्थिति बन गई है कि यदि हम भारत सरकार का सरकारी कामकाज हिन्दी के माध्यम से करना चाहें तो भावनात्मक स्तर पर तो अनेक कठिनाइयों का सामना करना ही पड़ेगा, साथ ही व्यावहारिक स्तर पर भी कुछ कठिनाइयां सामने आ जायेंगी। इस दृष्टि से सबसे बड़ी कठिनाई यह है हिन्दी को राजकाज की दृष्टि से संविधान के लागू होते ही जो तैयारी की जानी चाहिए उसकी ओर एक दम ध्यान नहीं दिया गया। इसका परिणाम यह हुआ है कि इस दृष्टि से जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण काम था शिक्षा-दीक्षा के माध्यम के रूप में हिन्दी एवं अन्य सभी भारतीय भाषाओं को माध्यम के रूप में स्वीकार किया जाएगा उसकी ओर कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए। उच्च शिक्षा के स्वरूप, गठन और नीति के संबंध में विचार करने के लिए डा० राधाकृष्णन की अध्यक्षता में जिस शिक्षा आयोग का गठन किया गया था उस आयोग के अंग्रेजी-समर्थकों एवं भारतीय भाषा विरोधी रूप के कारण उस आयोग की सिफारिशों में भारतीय भाषाओं के विकास की ओर न केवल कोई ध्यान नहीं दिया गया बल्कि उसके लिए रास्ते में अनेक कठिनाइयां खड़ी कर दी गई, इसका परिणाम यह हुआ कि राष्ट्र ने औद्योगिक विकास की राष्ट्रीय नीति तो तय की, परन्तु शिक्षा और सांस्कृतिक विकास की कोई राष्ट्रीय नीति आज तक तय नहीं की जा सकी। इसका अर्थ यह हुआ कि आज भी हमारे सामने यह स्पष्ट नहीं है कि हम भारत में किस प्रकार की समाज व्यवस्था कायम करना चाहते हैं।

भाषा का प्रश्न राजनीतिक नहीं बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक प्रश्न है। जहां तक भाषा के राजनीतिक पक्ष की बात है,

उसका समाधान तो उसी रोज हो गया जिस रोज भारत स्वतंत्र हो गया और भाषा के सामाजिक और सांस्कृतिक पक्ष की दृष्टि तो भारत के निवासियों ने अपनी राष्ट्रभाषा और संपर्क भाषा की समस्या का समाधान अत्यन्त सहज और स्वाभाविक गति से उसी रोज ढूंढ़ लिया था जिस रोज संस्कृत, पालि, प्राकृत और अपभ्रंश के स्थान पर धीरे-धीरे सारे देश में हिन्दी को ही देश भर के तीर्थ-यात्री, व्यवसायी और पर्यटक संपर्क भाषा के रूप में काम में लाने लगे थे। इतना ही नहीं अंग्रेजी राज्य काल में भी भारत की न केवल हिन्दी-भाषा रियासतें बल्कि अनेक अहिन्दी भाषी रियासतों में भी न केवल राजकाज बल्कि संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी का प्रचलन था। अफसोस की बात यह कि स्वराज्य की प्राप्ति के बाद इन देशी रियासतों के क्षेत्रों में भी न केवल हिन्दी का प्रचलन बन्द कर दिया गया बल्कि उसके स्थान पर अंग्रेजी का ही एकछत्र राज्य हो गया।

हिन्दी फारसी या अंग्रेजी की तरह न तो विदेशी भाषा है और न संस्कृत की तरह देवभाषा। अतः संस्कृत, फारसी या अंग्रेजी की तरह राजभाषा के रूप में प्रयुक्त होने के बाद भी इसका जन-भाषा का स्वरूप सदा बना रहेगा। यही हिन्दी की सबसे बड़ी शक्ति भी है और सीमा भी। आरंभ से आज तक जिन अहिन्दी भाषियों ने हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में समर्थन किया उनका ऐसा करने का कारण यह था कि हिन्दी इस देश की सबसे बड़ी जन-समूह की भाषा थी और शेष भारत में भी यह समझी-बोली जाती थी। पर आज हिन्दी की इसी शक्ति को हिन्दी के विरोधी और अंग्रेजी के समर्थक यह कह कर हिन्दी के विरोध में अपने ब्रह्मास्त्र के रूप में काम में लाते हैं कि चूंकि हिन्दी जन-समूह विशेष की मातृभाषा है, अतः इसके राजभाषा होने से उन लोगों को विशेष सुविधायें प्राप्त हो जाती हैं। वे लोग यह भूल जाते हैं कि तमिल, बंगला, तेलुगु, कन्नड़ आदि भारत की उन सभी क्षत्रीय भाषाओं की अपने क्षेत्रों में राष्ट्रभाषा के रूप में मान्यता का आधार उनकी अपने-अपने क्षेत्र की जन-भाषा ही होनी है। अतः यह स्पष्ट है कि हिन्दी के विरोध में प्रयोग किया जाने वाला यह तर्क दोधारी तलवार की तरह है और वस्तुतः किसी भी जनतन्त्र में यह ऐसा बचकाना तर्क है जिसका प्रयोग जनतन्त्र की जड़ पर ही कुठाराघात करता है।

नागपुर में हुए प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन में सर्वसम्मति से यह प्रस्ताव स्वीकृत किया गया था कि संयुक्त राष्ट्रसंघ में हिन्दी को मान्यता प्रदान कराने के लिए पूरा प्रयत्न किया जाए। लेकिन अब तक इस दृष्टि से कोई ठोस प्रयास नहीं किया गया है। यह ठीक है कि तत्कालीन विदेश मंत्री श्री अटलबिहारी बाजपेयी ने अपना एक भाषण हिन्दी में दिया था, परंतु उन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को मान्यता प्रदान करावाने के लिए सरकारी स्तर पर कोई ठोस कदम नहीं उठाया था। इसी प्रकार से वर्तमान विदेश मंत्री श्री पी० वी० नरसिंहराव ने भले ही संयुक्त राष्ट्र संघ में अपने भाषण का आरंभ हिन्दी में किया हो लेकिन इसके लिए सरकारी तौर पर आज भी ठोस कदम नहीं उठाया गया है। इसके विपरीत दूसरी ओर स्थिति यह है कि आज भारत के बाहर संसार के करीब सौ विश्वविद्यालयों में हिंदी सिखाई-पढ़ाई जा रही है। जिनमें से अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पर शोध का भी महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है। इससे यह तो असंदिग्ध है कि विश्व की एक समर्थ और समृद्ध भाषा के रूप में हिन्दी की मान्यता बढ़ती जा रही है। परंतु दूसरी ओर इस सच्चाई से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं में हिन्दी को स्थान दिलाने के लिए जो प्रयास किया जाना चाहिए वह आज तक नहीं किया जा सका और इसके लिए भारत में जो तैयारी की जानी चाहिए उसकी ओर भी नहीं के बराबर ध्यान दिया गया है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ या इस प्रकार की अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं एवं संस्थानों में हिन्दी का प्रयोग आरंभ करने के लिए न केवल भारत सरकार को उसके आर्थिक व्यय को वहन करना होगा बल्कि उसके साथ ही इस कार्य के लिए उससे बड़ी संख्या में दुभाषिए और अनुवादकों को भी उपलब्ध करना होगा। लेकिन अभी तक इसके लिए भारत में कोई कार्य नहीं शुरू किया जा सका है। यह ठीक है कि भारत में हिन्दी के साथ अंग्रेजी जानने वाले दुभाषिए और अनुवादक हजारों की संख्या में हैं, परन्तु संयुक्त राष्ट्र संघ की फ्रेंच, रूसी, चीनी, स्पेनी और अरबी जैसी अन्य मान्यता प्राप्त भाषाओं के लिए आवश्यक संख्या में योग्य और प्रशिक्षित दुभाषियों एवं अनुवादकों का जो अभाव है उसके कारण अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार की दृष्टि से हिन्दी के प्रयोग में कठिनाई जो आने वाली है उसके समाधान का मार्ग भारत को ही ढूंढ़ना होगा।

इसी पृष्ठभूमि और इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर प्रथम एवं द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को मान्यता दिलाने के साथ-साथ विश्व हिन्दी विद्यापीठ की स्थापना की बात को भी सर्वसम्मत प्रस्ताव के रूप में स्वीकृत किया गया था। द्वितीय भाषा के रूप में हिन्दी सिखाने के लिए विश्व हिन्दी विद्यापीठ के रूप में वर्धा में एक विश्व हिन्दी संस्था की स्थापना की जा चुकी है। लेकिन अभी तक इसे केन्द्रीय सरकार की स्वीकृति प्राप्त नहीं हो सकी है। परंतु संयुक्त राष्ट्र संघ में हिन्दी को व्यवहार में लाए जाने के लिए इतना ही काफी नहीं है। इसीलिए दिल्ली में विश्व हिन्दी विद्यापीठ के एक केन्द्र की स्थापना की योजना केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के सामने प्रस्तुत की गई है। जिसके अनुसार इस केन्द्र में हिन्दी के माध्यम से संयुक्त राष्ट्र संघ की मान्यता प्राप्त एवं विश्व की अन्य प्रमुख भाषाओं के लिए दुभाषिए एवं अनुवादक तैयार करना, ऐसे कार्यों के लिए संगणकों जैसे आधुनिक वैज्ञानिक यंत्रों और साधनों का प्रयोग करना, हिन्दी के एक संदर्भ पुस्तकालय की स्थापना करना तथा हिन्दी में एक ऐसी त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन करना जिसके माध्यम से भाषा और साहित्य के क्षेत्र में संसार की अन्य भाषाओं में होने वाले महत्वपूर्ण कार्यों का हिन्दी के पाठकों को पता चल सके और हिन्दी में हो रहे महत्वपूर्ण कार्यों का भारत के बाहर के लोगों का पता चल सके। इस विद्यापीठ की स्थापना से भारत की राजकाज की भाषा के रूप में पूरी तरह से व्यवहार में लाए जाने के मार्ग में हिन्दी की जो स्वाभाविक कठिनाईयां प्राप्त होती हैं उन्हें

दूर करने के लिए ठोस कदम भी उठाए जा सकगें। अभी अंग्रेजी के माध्यम से हमारा शेष जगत से संपर्क रहा है। लेकिन यह न केवल अपर्याप्त है बल्कि हमारे लिए अनेक प्रकार के कष्टों का कारण भी रहा है। अत: हमें संसार के भी राष्ट्रों से उनकी भाषा के माध्यम से संपर्क स्थापित करने के लिए ठोस कदम उठाना होगा। विश्व हिन्दी विद्यापीठ के माध्यम से ऐसा करना संभव हो सकेगा।

मारिशस, फ़िज़ी, सूरीनाम आदि संसार के अनेक देशों में काफी बड़ी संख्या में बसे भारतीय हिन्दी के माध्यम से अपनी शिक्षा दीक्षा प्राप्त करना चाहते हैं। लेकिन अभी भारत में कोई भी ऐसा विश्वविद्यालय नहीं है जो उनकी ऐसी शिक्षण संस्थाओं को मान्यता प्रदान कर सके या ऐसे सांस्कृतिक केन्द्रों के साथ निरंतर संपर्क बनाए रख सके। विश्व हिन्दी विद्यापीठ इन दोनों कार्यों को कर सकेगा। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि शेष जगत के साथ जीवंत सांस्कृतिक संबंध जोड़ने की दृष्टि से ये सभी बातें कितनी अधिक महत्व रखती हैं।

लेकिन यह सब केवल तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के आयोजन को सफल बना देने से नहीं हो जाने वाला है। आयोजन की वास्तविक सफलता तो इस बात पर निर्भर करती है कि यह सम्मेलन भारत की अंग्रेजी और अंग्रेजी परस्त मानसिकता को बदलने में कितनी दूर तक सफल होता है। इसीलिए वैसे यह सम्मेलन कहने भर को ही तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन है, परन्तु वास्तव में यह सभी भारतीय भाषाओं का सभी भारतीय भाषाओं के लिए किया जा रहा सम्मेलन है। जब तक तमिलनाडु में तमिल को, बंगाल में बंगला को, महाराष्ट्र में मराठी को और इसी प्रकार से देश के सभी राज्यों में अपनी-अपनी भाषाओं को शिक्षा दीक्षा और राजभाषा की भाषा के रूप में प्रयुक्त नहीं किया जाता है तब तक अंग्रेजी और अंग्रेजियत का भूत लोगों के सिर पर सवार रहेगा और भारतीय भाषाओं के विकास का राजमार्ग प्रशस्त नहीं हो पाएगा।

अत: मूल प्रश्न भारत की मानसिकता को बदलने का है। भारत की मानसिकता में बदलाव लाकर ही महात्मा गांधी ने इस देश से अंग्रेजों के भय के भूत को भगा दिया और इस देश के करोड़ों मूक, निरीह और असहाय लोग जब अपने पैरों पर उठ खड़े हुए तो अंग्रेजी राज्य का सितारा सदा के लिए डूब गया। इसके लिए राष्ट्रीयता की जिस भावना को प्रज्वलित करने की जरूरत पड़ी थी आज पुन: उस बुझती भावना को प्रबल बनाने की नितांत आवश्यकता है क्योंकि इसके बगैर हर महान् राष्ट्रीय प्रश्न के समाधान के मार्ग में बौने लोग छोटे-छोटे स्थानीय प्रश्नों के रोड़े अटकाते रहेंगे और भारत के विकास के महान् रथ को जिस वेग से आगे बढ़ना चाहिए उसमें अपेक्षित गति नहीं आ पाएगी।

सांस्कृतिक दासता की जड़ राजनीतिक दासता की जड़ से भी अधिक गहरी होती है और इसके सूक्ष्म को पहचान पाना अत्यंत कठिन होता है। लेकिन जिस प्रकार से आर्थिक स्वतंत्रता के बिना राजनैतिक स्वतंत्रता निरर्थक होती है उसी प्रकार से सांस्कृतिक स्वतंत्रता के बिना राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता भी प्राणहीन होती है। सांस्कृतिक मूल्य ही सामाजिक जीवन को वह आधार प्रदान करते हैं जिस पर राजनीतिक और आर्थिक ढांचा खड़ा किया जाता है। अत: यदि सांस्कृतिक नींव कमजोर रहे तो स्वभावत: सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक ढांचा भी कमजोर होगा। जब स्वराज्य-प्राप्ति के लिए आंदोलन चल रहा था तो उस अवधि में महात्मा गांधी जब तब इस मूलभूत बात की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट करते रहते थे स्वामी दयानंद, रवींद्रनाथ ठाकुर, लोकमान्य तिलक और श्री अरविंद ने तो बारबार कहा था कि हम स्वराज्य के साथ-साथ उन मूल्यों के लिए लड़ रहे हैं जिन्हें अंग्रेजी राज्य ने करीब-करीब समाप्त सा कर दिया है। पश्चिमी सभ्यता के स्वरूप की आलोचना करते समय जब महात्मा गांधी उसकी महाजनी सभ्यता कह कर तिरस्कार करते थे तो उसके पीछे भी मूल बात मूल्यों की ही होती थी। यहां मैं भाषा के संदर्भ में इन बातों का स्मरण इसलिए करा रहा हूं कि आज यह बात भुला दी गई है कि भारत की राजभाषा का सवाल एक ओर मानसिकता का सवाल है और दूसरी ओर वह हमारे राष्ट्रीय जीवन के उन बुनियादी मूल्यों से जुड़ा हुआ जिनके बगैर स्वतंत्रता अपनी गरिमा खो देती है।

जन-जीवन से जुड़ी होने के कारण हिन्दी लोकतंत्र के उन बुनियादी मूल्यों से भी जुड़ी हुई है जिनके बिना लोकतंत्र में प्राण का संचार नहीं हो सकता। लोकतांत्रिक पद्धति राजकाज का कोई ढांचा मात्र नहीं है जहां पर समय पर चुनाव करा दिया जाए और फिर राजकाज चलता रहे। लोकतंत्र तो लोकतांत्रिक तरीकों से उन समस्याओं का समाधान खोज निकालता है जिनका लोक जीवन से गहरा संबंध हुआ करता है। अत: चुनाव के अवसर पर तो लोक भाषा का प्रयोग किया जाए और पांच साल के लिए उसे भुला दिया जाए तो यह न केवल अलोकतांत्रिक नीति है बल्कि ऐसे मूल संकट को भी निमंत्रण देती है जिसके कारण अंत में लोकतंत्र के पूरे ढांचे पर भी खतरे की आशंका बन सकती है। इसलिए पंचायत से लेकर अंतर्राष्ट्रीय संदर्भ के हिन्दी के प्रयोगों के सभी पक्षों पर विचार करते समय मूल बात यह है कि लोकतंत्र के बुनियादी मूल्यों में हमारी श्रद्धा कितनी गहरी है। जिस भाषा में कबीर, सूर, जायसी, तुलसी, रहीम, मीरा जयशंकर प्रसाद और प्रेमचंद जैसे लोक-विश्रुत साहित्यकारों ने अपनी अनुभूतियों को व्यक्त किया उस भाषा के माध्यम से संसार का सारा काम चलाया जा सकता है। पर यह तभी संभव है जब इसके लिए हम संकल्प ले लें और पंचायत स्तर से लेकर संयुक्त राष्ट्रसंघ

(शेष पृष्ठ 56 पर

नेपाल में हिन्दी और हिन्दी साहित्य

श्री सूर्यनाथ गोप

भारत के उत्तर में लगभग 500 मील की लम्बाई में पूरब से पश्चिम तक फैला नेपाल जहां अपनी नैसर्गिक सुषमा और संपदा के लिए एशिया का स्विटजरलैंड कहा जा सकता है, वहीं अपने शौर्य एवं वीरता तथा सांस्कृतिक चेतना के लिए हिमालय की गोद में पला यह राष्ट्र हिमालय की ही तरह एशिया का सजग प्रहरी भी कहा जा सकता है। इस राष्ट्र ने अपनी सजगता का परिचय बारहवीं शताब्दी से ही देना शुरू कर दिया था, जब भारत पर पश्चिम से लगातार आक्रमणों का नया दौर आरंभ हुआ था। तब से लेकर भारत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना तक अनेक हिन्दू राजाओं जैसे हरिसिंह देव, भारत में अंग्रेजी उपनिवेश के विरुद्ध लडने वालों, जैसे तात्यां टोपे, बेगम हजरत महल आदि प्रमुख व्यक्तियों का शरणस्थल भी यह देश रहा है।

इस देश में अनेक छोटे-बड़े राजा थे जो आपस में लड़ते रहते थे। भावी अनिष्टों की कल्पना तथा भारत में लगातार हिन्दू राज्यों की पराजय से शिक्षा लेकर वर्तमान शाहवंशीय शासकों में प्रथम तथा दूरदर्शी नरेश पृथ्वीनारायण शाहदेव ने आज के नेपाल का एकीकरण किया था। यह एक सुखद आश्चर्य की बात है कि जिस महाराजा पृथ्वीनारायण शाह ने नेपाल को एक सूत्र में बांधा वह नाथ-संप्रदाय के उन्नायक हिन्दी के सुपरिचित कवि, उत्तर भारत में हिन्दू संस्कृति एवं धर्म के महान रक्षक योगी गोरखनाथ के बड़े भक्त ही नही, वरन् स्वयं हिन्दी के अच्छे कवि भी थे। उनके भजन अभी भी रेडियो नेपाल से प्रायः सुनाई पड़ते हैं। उदाहरण के लिए, उनका एक भजन यहां प्रस्तुत है:

बाबा गोरखनाथ सेवक सुष दाये, भजहुं तो मन लाये।
बाबा चेला चतुर मछिन्द्रनाथ को, अधबधु रूप बनाये॥
शिव में अंश शिवासन कावे, सिद्धि माहा बनि आये॥1॥
बाबा।

सिंधिनाद जटाकुवरि, तुम्बी बगल दबायै॥
समथन बांध बघम्बर बैठे, तिनिहि लोक बरदाये॥ 2॥
बाबा॥

मुन्द्रा कान में अति सोभिते, गेरूवा वस्त्र लगाये।
गलेमाल कद्राच्छे सैली, तन में भसम चढ़ाये॥ 3॥
बाबा॥

अगम कथा गोरखनाथ की महिमा पार न पाये॥
नरभूपाल साह जिउको नन्दन पृथ्वीनारायण गाये॥ 4॥
बाबा गोरखनाथ सेवक सुख दाये, भजहुं तो मन भाये॥

हिन्दी का एक विशाल क्षेत्र नेपाल

अनुसंधान एवं अध्ययन ही नही बल्कि अन्य भी कई दृष्टियों से नेपाल हिन्दी का एक ऐसा विशाल क्षेत्र है, जिससे हिन्दी जगत अब तक लगभग अपरिचित-सा रहा है। यहां के हिन्दी साहित्य का थोड़ा परिचय सर्वप्रथम महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने दिया, जब उन्होंने विद्यापति की कीर्तिलता एवं कुछ पदों को वहां से ढूंढ निकाला था। राहुल सांकृत्यायन ने भी उन व्यक्तियों की थोड़ी-बहुत चर्चा की है जिन्होंने वहां हिन्दी के भंडार में योगदान दिया है। उनमें राजगुरु हेमराज शर्मा उल्लेखनीय हैं। सच कहा जाय तो नाथ संप्रदायी योगियों से ले कर जोसमनी संतों तक, मल्लकालीन राजाओं से लेकर शाहवंशीय नरेशों एवं राजकुल के अनेक सम्मानित व्यक्तियों, सदियों से तिब्बत और भारत के साथ समान रूप से व्यापार करने वाली वहां की विशिष्ट नेवार जाति से लेकर पर्वतीय प्रदेश में रहने वाले विद्वान ब्राह्मण वर्ग और वहां के शूरवीर श्रेष्ठ क्षत्रीय वर्ग तथा सेना आदि में काम करने वाली अन्य कई जातियों ने हिन्दी की साहित्य-धारा और भाषायी प्रवाह को वहां सदा गतिशील रखा। यह ठीक है कि हिन्दी की इस विकासधारा के साथ-साथ उनकी अपनी मातृभाषा, खासकर नेपाली और नेवारी भी विकसित होती गई है। परंतु विकास ने हिन्दी के साथ उनके संबंध को और गहरा बनाया है। इसके पीछे संस्कृति और धर्म आदि की वह समान धुरी काम कर रही है जिससे दोनों ही देशों के साहित्यिक चक्र बराबर जुड़े रहे हैं। यही कारण है कि नेपाल उस संस्कृति धर्म, और साहित्य की रक्षा में भारत का सदा से हाथ बंटाता रहा है जिसे विदेशी आक्रमणकारी तलवार और साजिश के बल पर नष्ट करने में लगे रहे। नेपाल के संग्रहालय, सरकारी व निजी पुस्तकालयों तथा व्यक्तियों के पास सुरक्षित अनेक हस्तलिखित और प्रकाशित सामग्री इस बात का उदाहरण प्रस्तुत करती हैं।

नेपाल में हिन्दी का व्यवहार किन-किन स्तरों पर

यों देखा जाए तो डेढ़ करोड़ की आबादी वाले इस देश में लगभग पचहत्तर प्रतिशत लोग हिन्दी को किसी न किसी रूप में प्रयोग करते हैं। बाकी आबादी में उन निरे अशिक्षित हिमालय की ऊपरी या सुदूर उत्तरी सीमा पर रहने वाले तिब्बती या उनके मिश्रित नस्ल के लोगों को ले सकते हैं जिनका कोई संपर्क निचले भाग या तलहटी के लोगों से नहीं हो पाता। परंतु ऐसे लोग भी सामान्य व्यवहार की हिन्दी को समझ जरूर लेते हैं, क्योंकि तम्बाकू या अन्य कई चीजों के हिन्दी भाषी व्यापारी वहां भी पहुंचते रहते हैं। वास्तव में नेपाल की तराई और पहाड़ के लोगों के बीच आपसी आदान-प्रदान और संपर्क ने वहां पहाड़ी क्षेत्रों में हिन्दी को और भी सुलभ और ग्राह्य बनाया। इस संपर्क से नेपाली भाषा का भी बहुत विकास हुआ है और नेपाली के इस विकास के पीछे हिन्दी का मुख्य रूप से हाथ रहा है। हिन्दी और उसकी बोलियां जहां तराई के लोगों को आसानी से नेपाली के निकट ले गई वहाँ पहाड़ के लोगों के बीच सुगम और लोकप्रिय भी होती गईं। इसके साथ वहीं पहाड़ों में चलने वाली नेपाली की समानांतर अन्य कई भाषाएं जैसे गुरुङ, मगर, लेप्चा, तामाङु, डोटेली, शेर्पाली, नेवारी आदि अनेक भाषाओं के बीच नेपाली को तेजी से फलने-फूलने और राष्ट्रभाषा होने का अवसर भी हिन्दी के कारण मिला। यदि नेपाली भाषा की प्रवृतियां हिन्दी से संबद्ध नहीं होती, उसकी शैलियों से अगर वह जुड़ी नहीं होतीं तो आज नेपाली भाषा वहां की राष्ट्रभाषा कहलाने का अवसर संभवत: नहीं पा सकती। क्योंकि नेपाली जैसी समृद्ध प्राचीन और लोकप्रिय भाषा पहले से ही डटी थी। फिर वह तो काठमांडू उपत्यका के सभी राज्यों की भाषा भी कभी रह चुकी थी। पर चूंकि नेपाली (जिसका पुराना नाम खसकुरा, पर्वते या गोरखा भाषा है) हिन्दी की उत्तर-पश्चिमी धारा की पहाड़ी-राजस्थानी बोलियों से विकसित हुई थी इसलिए उसमें हिन्दी को वे सभी मूल प्रवृतियां ज्यों की त्यों आज तक बनी हुई हैं। फलत: वह नेपाल के पहाड़ों में चलने वाली मकर, तामाङु, लेप्चा, डोटेली, शेर्पाली, नेवारी आदि कई विकसित एवं समृद्ध भाषाओं को पीछे धकेल कर आसानी से राष्ट्रभाषा के स्तर तक पहुंच गई।

नेपाल में हिन्दी का व्यवहार मुख्यतया तीन रूपों में होता है। प्रथम तो तराई के लगभग अस्सी-पचासी लाख लोगों की वह पहली भाषा है। अर्थात भारत के उत्तर प्रदेश और बिहार की सीमा से लगे आबादी की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण नेपाल के इस तराई-क्षेत्र में हिन्दी उसी रूप में प्रथम भाषा है जिस रूप में बिहार और उत्तर प्रदेश में द्वितीयत: हिन्दी वहां पहाड़ों एवं पहाड़ी नगरों में निर्वाह करने वाले उन बहुसंख्यक लोगों की द्वितीय और संपर्क भाषा है, जिनकी मातृभाषा नेपाली है। इस प्रकार उस देश की आबादी के लगभग नब्बे प्रतिशत लोगों की हिन्दी प्रथम और द्वितीय एवं संपर्क भाषा है। सच तो यह है कि हिन्दी के इस व्यापक प्रयोग ने ही उसे सर्वप्रथम 1950-60 के दशक, और फिर बाद के दशकों में कुछ राजनीतिक पेचीदगी में जकड़ दिया और राष्ट्रभाषा के प्रश्न पर नेपाली के साथ-साथ हिन्दी को भी द्वितीय राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किए जाने की मांग जोर पकड़ने लगी। नेपाल-तराई-कांग्रेस तथा उसके प्रमुख नेता बेदानंद झा ने तो इसे ही अपनी पार्टी का मूल मुद्दा बनाया और हिन्दी को संवैधानिक स्तर प्रदान करने का हर संभव प्रयास जारी रखा। उधर नेपाली कांग्रेस के कई प्रमुख नेता मातृका प्रसाद कोईराला, सूर्यप्रसाद उपाध्याय, रामनारायण मिश्र तथा प्रजा परिषद के भद्रकाल मिश्र आदि महत्वपूर्ण व्यक्तियों ने भी हिन्दी को विधान में द्वितीय राष्ट्रभाषा का दर्जा देने की मांग की। नेपाली कांग्रेस सरकार के तत्कालीन प्रधान मंत्री बी० पी० कोईराला तो हमेशा हिन्दी से संबद्ध ही नहीं रहे वरन् उसके अच्छे लेखक भी थे। उस समय विधान में हिन्दी को उपर्युक्त द्वितीय स्थान देने का निर्णय लगभग हो चुका था। हिन्दी को संवैधानिक स्तर तो वहां नहीं मिल सका, लेकिन जनस्तर पर वह उसी रूप में विकसित होती रही, भले ही बाद के सरकारी आंकड़ों में हिन्दीभाषियों की संख्या चाहे जितनी कम करके दिखाने की कोशिश होती रही है।

हिन्दी का व्यवहार नेपाल में कब से ?

नेपाल में हिन्दी के व्यवहार का प्राचीनतम रूप शिला-लेखों एवं उपलब्ध हस्तलिखित सामग्रियों से अनुमान किया जा सकता है। पश्चिम नेपाल की दांग घाटी में प्राप्त आज से लगभग 650 वर्ष पूर्व के शिलालेख में दांग का तत्कालीन राजा रत्नसेन जो बाद में योगी बन गया था, उसकी एक 'दंगीशरण कथा' नामक रचना भी मिलती है। यह कृति नेपाल में हिन्दी के व्यापक प्रयोग और गहरी जड़ को पुष्ट करती है। यह रचना साहित्यिक दृष्टि से तो महत्वपूर्ण है ही हिन्दी की भाषिक विकास-प्रक्रिया को समझने की दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। हिन्दी साहित्य का जो इतिहास आज तक लिखा गया है। वह भारत के हिन्दी साहित्य का ही इतिहास है। वास्तव में भारत से बाहर हिन्दी की जो धारायें, चलती रही हैं, अब भी इतिहासकारों की दृष्टि से ओझल है। उनकी ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। मेरे विचार से तो नेपाल की हिन्दी और उसके साहित्य का एक अलग ही बड़ा इतिहास तैयार हो सकता है। पाल्पा के नेसेनवंशीय नरेशों तथा पूरब में मोरंग और अन्य कई राज्यों की तत्कालीन नरेशों ने तो हिन्दी को अपनी राजभाषा ही बनाया था। कृष्णशाह, मुकुंदसेन आदि नरेशों के सभी पत्र और हुक्मनामा हिन्दी में ही मिलते हैं। जिससे हिन्दी की तत्कालीन स्थिति का आसानी से अनुमान हो जाता है। काठमाँडू उपत्यका के मल्ल राजाओं में से अनेक ने हिन्दी में रचनाएं की। उनके हिन्दी-प्रेम का कारण भी वहां हिन्दी का व्यापक प्रयोग और प्रचार ही कहा जा सकता है। इस प्रकार हिन्दी वहां कम से कम सात वर्ष पूर्व से ही बहुसंख्यक लोग की प्रथम और द्वितीय भाषा के रूप में चलती आई है।

नेपाल-भारत के बीच सांस्कृतिक-धार्मिक संबंध और हिन्दी की भूमिका

बारहवीं शताब्दी में भारत पर मुस्लिम आक्रमणों का सिलसिला आरंभ होने से पहले तक, हिमालय के दक्षिणी भूभाग में एक ही संस्कृति थी। मुस्लिम संस्कृति ने भारतीय समाज और राज्य व्यवस्था को काफी प्रभावित किया है। परंतु नेपाल पर इसी कारण बहुत कम प्रभाव पड़ा।

अपनी राष्ट्रभाषा 'नेपाली' के विकास के साथ-साथ नेपाल ने संस्कृत शिक्षा पर भी काफी जोर दे रखा है। दूसरी ओर अनेक संत-साधुओं तथा विद्वानों का अकसर भारत में आगमन होता रहता है और उनके प्रवचन आदि हिन्दी में होने के कारण वहां के लोग उसे आसानी से ग्रहण कर लेते हैं। उधर नेपाल के लोग भी प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में खासकर उत्तरभारत के तीर्थस्थल काशी, प्रयाग, हरिद्वार आते ही रहते हैं, जहां हिन्दी उन्हें आसानी से एक दूसरे से जोड़ने का काम करती रही है। बिहार और उत्तर-प्रदेश के लोगों और नेपाल के लोगों का आपस में वैवाहिक संबंध भी बहुत पहले से चलता आ रहा है और स्वाभाविक रूप से हिन्दी एक दूसरे के बीच आदान-प्रदान का माध्यम बनती रही है। फिर उत्तर भारत के व्यापारियों और उद्योगपतियों तथा नेपाल के व्यापारियों के बीच आपसी लेन-देन भी प्रारंभ से ही चलता आया है। नेपाल और भारत के ऐसे सामाजिक, व्यापारिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक संबंध में हिन्दी की प्रमुख भूमिका ही नहीं वरन् वह आज तक भी एक दूसरे को समीप लाने में एकमात्र सशक्त माध्यम रही है।

नेपाल के लिये हिन्दी की उपादेयता

नेपाल में हिन्दी जिनकी वह प्रथम या द्वितीय भाषा नहीं है, उन सबों के लिए भी उतनी उपयोगी है। हिन्दी का अच्छा ज्ञान नेपाली के अच्छे ज्ञान में स्वाभाविक रूप से सहयोगी होता है। इसलिए यह उन लोगों के लिए भी सरल पड़ती है जिनकी मातृभाषा नेपाली नहीं है। हिन्दी सीख लेने के बाद नेपाली सीखना और भी आसान हो जाता है। खासकर उत्तरी सीमा पर रहने वाले तिब्बती मूल के लोगों ने हिन्दी के माध्यम से नेपाली सीखी है। यह कोई भी व्यक्ति उनसे पहली बार ही बातचीत करके समझ सकता है।

हिन्दी में तकनीकी और ज्ञान-विज्ञान की पुस्तकों का जिस तेजी से प्रकाशन हो रहा है उसने नेपाली पाठकों को विज्ञान की अधुनातन प्रवृत्तियों से जोड़ने में बड़ी मदद की है। इसके कई कारण हैं। जैसे, अंग्रेजी में प्रकाशित पुस्तकों की अपेक्षा हिन्दी माध्यम से पढ़ना उन्हें सरल पडता है और वे आसानी से समझ लेते हैं। दूसरी बात नेपाल के शिक्षाविदों की आंतरिक इच्छा है कि नेपाली भाषा का विकास हो। इस मामले में वहां के शिक्षाविदों और सरकार की राष्ट्रभाषा के प्रति काफी दिलचस्पी है। नेपाली को अंग्रेजी की इस मार से बचाने में हिन्दी की तकनीकी ज्ञान-विज्ञान तथा अन्य विषयों से संबंधित पाठ्य पुस्तकें बड़ी सहायता कर रही हैं। नेपाली से आए हुए पाठक तथा अध्येता हिन्दी की इन पुस्तकों के आधार पर ही नेपाली माध्यम की परीक्षाओं में बैठते हैं। यहां तक कि उच्च शिक्षा में भी वहां अंग्रेजी माध्यम से परीक्षा देने वालों की संख्या नगण्य-सी है।

नेपाल का हिन्दी साहित्य :

नेपाल में उपलब्ध हिन्दी साहित्य की अनेक हस्तलिखित प्रतियां मिलती हैं। प्राचीन साहित्यकारों में नाथपंथी एवं विद्यापति की रचनाओं से लेकर विगत शताब्दी तक की कई रचनाओं की हस्तलिखित प्रतियां स्थान-स्थान पर देखने को मिलती है। कुछ वर्षों पहले की खोजों से उद्घाटित प्रणामी साहित्य का मूलग्रंथ 'कुलजमस्वरूप' की भी दो हस्तलिखित प्रतियां वहां सुरक्षित हैं। वहां के अनेक मल्लकालीन राजाओं की हिन्दी रचनाएँ भी उपलब्ध होती हैं। मल्ल राजाओं का समय आज से दो सौ वर्ष पूर्व से लेकर छः सौ वर्ष पूर्व से भी अधिक तक ठहरता है। जगतज्योतिमल्ल और जयस्थितिमल्ल के हिन्दी भजन तथा नाटक तो अत्यंत उत्कृष्ट हैं। इसी काल के एक मानवीर कछिपति नाम के व्यक्ति का लिखा हिन्दी नाटक 'श्रीकृष्णचरित्र प्याख' नेपाल के तत्कालीन हिन्दी साहित्य का सुंदर नमूना है। मल्लकाल के नाटकों की एक और विशेषता यह है कि उनके सारे संवाद तो हिन्दी में हैं, पर स्थान-स्थान पर संकेत-निर्देश नेवारी भाषा में हैं, जो मल्ल राजाओं की राजभाषा थी। आज भी काठमांडू उपत्यका की मूल भाषा नेवारी ही है। इसका पुराना तथा प्रचलित नाम 'नेपाल भाषा' है। मल्लकाल में हिन्दी नाटकों तथा मंच की खूब उन्नति हुई। उस समय काठमांडू उपत्यका के विभिन्न स्थानों पर बनाए गए 'दबली' (ईंट और पत्थर का बना खुला पक्का रंगमंच) आज भी ज्यों के त्यों हैं। जिन पर अब या तो मुहल्ले के बच्चे दिनभर उछलकूद करते रहते हैं। या परचून की दुकानें सजती हैं। उस समय उन 'दबली' पर दिखाये जाने वाले अधिकांश नाटक हिन्दी के ही हुआ करते थे। उन्नत रंगमंच के कारण ही संभवतः उस समय सर्वाधिक नाटक रचे गए।

इधर शाहवंशीय नरेशों में पृथ्वीवीर विक्रम के समय की कई रचनाएँ मिलती हैं। राजा राजेन्द्र विक्रम शाह तो स्वयं हिन्दी में अच्छी कविताएँ किया करते थे, जिनमें से कई उपलब्ध भी हो चुकी हैं। विषय की दृष्टि से मूलतया नेपाल में ही रचित हिन्दी साहित्य का आयाम बहुत बड़ा है। और यदि संख्या की दृष्टि से देखा जाए तो विभिन्न विषयों पर वहां रचित हिन्दी ग्रंथों की संख्या एक हजार से भी ऊपर हो जाने का अनुमान है। इनमें से अधिकतर अप्रकाशित हैं, और न इनकी कोई सुव्यवस्थित सूची तैयार की जा सकी है। नेपाली साहित्य की कई महान हस्तियां

प्राचीन एवं समसामायिक, जैसे आशुकवि शंभुप्रसाद दुंगेल मोतीराम भट्ट, लेखनाथ पौड़याल, गिरीशबल्लभ जोशी, रघुनाथ भाट, उदयानंद अर्ज्याल से लेकर आधुनिक कथाकार उपन्यासकार भवानी भिक्षु (श्री भिक्षू तो मूलत: हिन्दी भाषी और हिन्दी लेखक ही थे), सरदार रुद्राज पँडिय, लक्ष्मीप्रसाद देवकोटा, सूर्यविक्रम ज्ञवाली, हृदयचंद्रसिंह प्रधान, सिद्धिचरण श्रेष्ठ, केदारमान व्यथित आदि वरिष्ठ नेपाली साहित्यकारों की भी कई हिन्दी रचनाएँ मिलती हैं। शुभ्रप्रसाद ने देवकीनँदन खत्री के 'चँद्रकांता' और 'चन्द्रकांता सँतति' से प्रभावित होकर हिन्दी में 'प्रेमकांता' आठ भागों में तथा प्रेमकांता सँतति' उपन्यास बारह भागों में लिखा जो प्रकाशित हैं। उनका एक 'वत्सराज' नामक अप्रकाशित नाटक भी उपलब्ध हुआ है। इसके अतिरिक्त एक अन्य नाटक जिसमें उर्दू-मिश्रित भाषा का प्रयोग है, प्राप्त हुआ है। उसी प्रकार गिरीशवल्लभ जोशी का भी 'गिरीशवाणी' नाम का एक वृहद उपन्यास तथा अन्य कई रचनाएँ उपलब्ध हुई हैं, परँतु वे सबकी सब अप्रकाशित हैं। आधुनिक लेखकों में जिन विशिष्ट नेपाली साहित्यकारों की उल्लेखनीय हिन्दी रचनाए हैं उनमें मोहनराज शर्मा, डा० ध्रुवचँद्र गौतम, चेतन कार्की, दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ 'उपेंद्र', धूस्वां सायमि आदि का नाम प्रमुख है।

इस रूप से सिर्फ हिन्दी में लिखने वालों में श्री बुन्नीलाल एक ऐसे लेखक हैं जिनकी रचनाओं में नेपाल के पूर्वांचल के जीवन का सुंदर चित्रण पाया जाता है। इनकी कुछ रचनाएँ ही प्रकाशित हैं तथा एक उत्कृष्ट उपन्यास 'नयन कहर दरियाव' प्रकाशनाधीन है। बुन्नीलाल नेपाल में फणीश्वरनाथ रेणु और नागार्जुन की याद दिलाते हैं। इनकी शली पाठक को बांध लेती है। इनके अतिरिक्त तारिणी प्रसाद यादव, केदार मानँधर आदि की भी काफी सशक्त रचनाएँ हैं, पर इन दोनों की सभी रचनाएँ अभी अप्रकाशित हैं। एक सूर्यदास मानँधर (सुकुबाबा) हुए जिनका समय लगभग 200 वर्ष पहले माना जाता है। उनकी भी कई हस्तलिखित हिन्दी रचनाएँ उपलब्ध हैं। ऐसे अनेक लेखक और अनेक कृतियों का उल्लेख अभी बाकी है जिनके सँबँध में इस लेख में लिख पाना सँभव नहीं। वास्तव में नेपाल में हिन्दी की साहित्यिक गतिविधि काफी उत्साहवर्धक होते हुए भी वहां के हिन्दी साहित्य एवँ साहित्यिकारों की अनेक गँभीर समस्याओं को भारत की हिन्दी सँस्थाएँ तथा वहां की सरकार थोड़ा ध्यान देकर हल कर सकती है। कुछ समस्याएँ उल्लेखनीय है:

(क) अप्रकाशित हिन्दी ग्रंथों के प्रकाशन।

(ख) प्राचीन एवँ मध्यकाल में रचित हिन्दी ग्रंथों की खोज तथा उसके सम्यक सँरक्षण की व्यवस्था।

(ग) वर्तमान समय में लिखनेवाले लेखकों को सयम समय पर प्रोत्साहन।

इन सब समस्याओं को ध्यान में रखते हुए वर्धा के विश्व हिन्दी विद्यापीठ से सँबद्ध एक विश्व हिन्दी अकादमी की स्थापना होनी चाहिए जो विश्व में, भारत के अतिरिक्त अन्य देशों की हिन्दी भाषा और साहित्य के प्रति इन उपर्युक्त दायित्वों को सँभालें। वैसे इतना हो जाने भर से ही विश्व में हिन्दी की समस्याओं का अँत नहीं हो जाएगा। पर यह एक शुभ शुरुआत होगी जो खासकर नेपाल जैसे भारत के अत्यँत निकट पड़ोसी देश--हिन्दी साहित्य की दृष्टि से तो कहीं अधिक महत्वपूर्ण और निकटतम देश के साथ सांस्कृतिक तथा परापूर्व से आ रहे धार्मिक आदि संबंधों को और भी मजबूत बनाएगी।

"मैं चाहता हूं कि हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा बने किन्तु मैं यह भी कामना करता हूं कि वह हिन्दी वालों की भी भाषा बने। भविष्य में मैं आशा करता हूं कि जब मैं आपसे बात करूं तब आप मुझ से अंग्रेजी में बात न करें, यही हमारा सम्मान होगा।"

--विश्व हिन्दी सम्मेलन के मंच से
--श्री फिन थीसेन (डेनमार्क के प्रतिनिधि)

अमरीका में हिन्दी

—डा० रीन शोमर

अमरीका में हिन्दी की स्थिति का प्रश्न तीन भागों में बांटा जा सकता है। (1) अमरीका के विश्वविद्यालयों में हिन्दी के विधिवत् अध्ययन की क्या स्थिति है तथा हिन्दी के विद्वान किस तरह का शोधकार्य कर रहे हैं, (2) आम जनता में भारतीय संस्कृति तथा भाषाओं के बारे में क्या धारणा है, और (3) अमरीका में बसे हुए प्रवासी भारतीय लोगों में हिन्दी की क्या स्थिति तथा उसके प्रति क्या दृष्टिकोण है।

अमरीकी विश्वविद्यालयों में हिन्दी

अमरीका में भी यूरोप की तरह भारतीय भाषाओं का अध्ययन संस्कृत से शुरू हुआ। द्वितीय महायुद्ध तक, विश्वविद्यालयों में आधुनिक भारतीय भाषाओं का अध्ययन नहीं होता था। विश्वविद्यालयों के बाहर ईसाई धर्म प्रचारकों का थोड़ा बहुत काम हुआ और उन लोगों ने सब से पहले हिन्दी सीखने की कोशिश की तथा पाठ्य-पुस्तकें तैयार कीं। उसके बाद, द्वितीय महायुद्ध में, जब मित्र राष्ट्रों की फौजें सारी दुनिया में फैल गई थीं तथा विदेशी भाषाओं के व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता थी, अमरीकी सरकार की ओर से भाषा-वैज्ञानिकों द्वारा विभिन्न भाषाओं के सरल पाठ्यक्रम तैयार किए गए। इस सिलसिले में हिन्दी में भी कुछ काम हुआ।

हिन्दी का विधिवत् अध्ययन तो भारत की स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद शुरू हुआ, जब भारत को दुनिया के स्वाधीन तथा लोकतांत्रिक देशों में महत्वपूर्ण स्थान मिला तथा अमरीका और भारत के बीच हर तरह के नए संबंध स्थापित होने लगे। अमरीका के प्रबुद्ध वर्ग में नव स्वतन्त्र भारत के प्रति बहुत सहानुभूति थी और भारत के आर्थिक विकास के लिए बहुत आकांक्षाएं तथा शुभ कामनाएं।

इस सन्दर्भ में विश्वविद्यालयों में समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र आदि के विद्वानों ने अपनी दृष्टि भारत की आधुनिक स्थिति तथा समस्याओं पर रखकर शोधकार्य करना आरम्भ किया। इनकी मदद करने के लिए सरकार तथा स्वतन्त्र संस्थाओं ने आर्थिक सहायता देना शुरू किया। चुने हुए विश्वविद्यालयों में अध्ययन-केन्द्र बना दिए गए, जहां भारत और भारत के पड़ौसी देशों पर शोधकार्य के लिए हर तरह की सुविधाएं प्राप्त की गईं—विशेषकर पुस्तकों तथा अन्य शोध सामग्री के भंडार। आजकल 13 ऐसे केन्द्र हैं, जिनमें शिकागो, कैलिफोर्निया, विस्कान्सिन, कोलम्बिया, पेंसिलेवेनिया, वाशिंगटन, टेक्सस तथा विर्जिनिया विश्वविद्यालय मुख्य हैं। इसके अलावा, भारत सम्बन्धी अध्ययन की कुछ न कुछ सुविधाएं 100 और विश्वविद्यालयों तथा कालेजों में मिलती हैं।

सब मुख्य केन्द्रों की शिक्षा में, तथा अनेक और जगहों में, भाषाओं का अध्ययन महत्वपूर्ण है। शुरू से ही हिन्दी तथा भारत की अन्य भाषाएं सिखाई गईं। भारत से आए हुए कुछ विद्वानों ने, जिनकी मातृभाषा हिन्दी थी, तथा अमरीकी भाषा-वैज्ञानिकों ने मिलकर पाठ्यपुस्तकें तथा पाठ्यक्रम बनाना तथा हिंदी के अनेक पहलुओं का अध्ययन करना शुरू किया। विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने के लिए छात्रवृत्तियों का आयोजन भी किया गया, जो कि आजकल भी 13 मुख्य विश्वविद्यालयों में प्राप्य हैं। राष्ट्रभाषा होने के कारण हिन्दी को सब से अधिक महत्व का स्थान दिया गया, और संख्या में पढ़ने वाले तथा पढ़ाने वाले सबसे अधिक हैं।

जिस समय अध्ययन केन्द्र बन रहे थे, उसी समय अच्छे स्तर के भारत-सम्बन्धी ग्रंथागार बनाने के लिए एक और योजना बनाई गई। अमरीकन कांग्रेस के कानून पी० एल० 480 के आधार पर अमरीका ने भारत को कुछ साल तक गेहूं बेच दिया था। ऋण चुकाने के लिए अनेक योजनाएं बन गईं। इनमें से एक यह भी थी जिससे भारत में मुख्य भारतीय भाषाओं में तथा अंग्रेजी में छपी हुई पुस्तकें हर साल अमरीकी विश्वविद्यालयों में पहुंचती हैं। उस योजना की सहायता से कई बहुत अच्छे ग्रंथागार बन गए हैं, जिन में हिन्दी तथा अन्य विषयों के लिए अध्ययन की बहुत अच्छी सामग्री मिलती है। मुख्य केन्द्रों के पुस्तकालयों में हिन्दी की ही 8000 से 24000 पुस्तकें मिलती हैं।

पी० एल० 480 के रुपयों की सहयता से एक योजना बन गई, जिससे अमरीकी विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों को तथा विद्वानों को (चाहे अमरीकी हों या किसी और देश के हों) भारत आने के लिए छात्रवृत्तियां मिलती हैं। उस योजना के सहारे पिछले 30 वर्षों में बहुत से विद्वानों ने भारत आकर भाषा सीखी तथा शोध-कार्य किया है। इसके कारण अमरीका तथा भारत के विद्वानों में आदान-प्रदान हो पाया और शोध बहुत आगे बढ़ पाया। भारत के विषय में अमरीका में हर साल बहुत से शोध प्रबंध तथा पुस्तकें निकलती हैं, जो वहां की जनता तथा सरकार को भारत के बारे में असली जानकारी देने की कोशिश करती हैं।

हिन्दी के विषय में किस तरह का शोधकार्य अब तक हुआ और अभी हो रहा है? उत्तर देना थोड़ा कठिन है, क्योंकि हरेक

व्यक्ति अपनी रुचि के अनुसार अपना शोधकार्य करता है, किसी खास सामूहिक कार्यक्रम को लेकर नहीं। परंतु हम यह देख सकते हैं कि पिछले 25 वर्षों में, हालांकि हर तरह के विषयों पर काम हुआ है, शोध की प्रवृत्तियों के विभिन्न स्तर विद्यमान हैं।

शुरू में हिन्दी को मुख्यतः बोलचाल की भाषा के तौर पर पढ़ाया जाता था। उसको अन्य विषयों में शोध करने के लिए एक उपाय समझा जाता था। पढ़ाने वालों का काम था कि समाज-शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि के विद्यार्थियों को भारत में लोगों से हिन्दी में बात करने के लिए तैयार कर दिया जाए। उस सिलसिले में बहुत-सी प्रारम्भिक पाठ्य-पुस्तकें तैयार की गईं क्योंकि पढ़ाने वाले मुख्यतः भाषाविज्ञान के विद्वान थे।

उसके बाद, जब भाषा की जानकारी की नींव दृढ़ हो गई तो विद्वानों में एक नई रुचि उत्पन्न हुई साहित्य का अध्ययन करने की। शुरू में खड़ी बोली साहित्य का अध्ययन किया गया था। अनुवाद के द्वारा आधुनिक हिन्दी साहित्य की कुछ महत्वपूर्ण कृतियां अमरीकी जनता के सामने लाई गईं। आगे बढ़कर कुछ विद्वानों का ध्यान मध्यकालीन ब्रज, अवधी आदि साहित्य की ओर गया और इस क्षेत्र में भी काफी काम हुआ। पिछले 4–5 सालों में, लोक-साहित्य तथा हिन्दी की लोकप्रिय क्षेत्रीय बोलियों पर भी पर्याप्त काम होने लगा है।

अतः हम यह देख सकते हैं कि पिछले 25 वर्षों में अमरीकी विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन का एक विशेष विकास क्रम हुआ। शुरू में हिन्दी को केवल व्यावहारिक रूप से आधुनिक संपर्क भाषा के रूप में देखा जाता था। अब उसकी समृद्ध तथा विविध साहित्य परम्पराओं का अध्ययन विधिवत् ढंग से किया जाने लगा है।

अमरीकी जनता में हिन्दी के प्रति जागरूकता

लगभग 1965 तक, अमरीकी जनता में हिन्दी भाषा के बारे में बहुत कम जानकारी थी। क्योंकि भारत में अंग्रेजी चलती है तथा जो थोड़े-बहुत भारतीय लोग अमरीका आते थे सब अंग्रेजी जानते थे। इसलिए यह भ्रम फैल गया था कि अंग्रेजी ही भारत की राष्ट्रभाषा है। अभी भी अधिकांश लोगों की यही धारणा है।

पिछले 20 वर्षों में तो स्थिति थोड़ी-सी बदल गई है। इसके दो कारण हैं। एक तो यह कि भारत से बहुत अधिक लोग अमरीका पहुंच गए हैं, और संख्या की वजह से उनकी अपनी भाषाओं का अधिक प्रयोग है। इसके बारे में आगे चलकर चर्चा की जाएगी। दूसरा कारण यह है कि अमरीकी लोगों की ओर से भारत की संस्कृति के अनेक पहलुओं के प्रति आकर्षण होने लगा है। कुछ लोगों में इस समय आध्यात्मिकता के प्रति झुकाव है। भौतिक विकास तथा व्यक्तिगत सफलता के उद्देश्यों से परे हटकर वे जीवन का मूल अर्थ जानना चाहते हैं और दार्शनिकों की तरह प्रश्न पूछते हैं। इस सिलसिले में भारत की अध्यात्म-परम्परा की ओर आकर्षित होना स्वाभाविक है। बहुत-से लोग, विशेषकर युवा लोग भारत के अध्यात्म-गुरुओं के चरणों में बैठने के लिए, भारत आते हैं और भारत के गुरु-संत-स्वामी अमरीका में भी पहुंचते हैं। क्योंकि अमरीका में जैसे कि भारत में, धर्म के पालन तथा प्रचार की पूर्ण स्वतन्त्रता है, उन गुरु-संत-स्वामियों का संदेश बहुत दूर तक फैल गया है। आजकल ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्होंने भारत के अध्यात्म-गुरुओं के बारे में नहीं सुना हो और कुछ ऐसे शब्द भी हैं (जैसे गुरु, योग, आश्रम, धर्म, कर्म) जो वहां की बोलचाल की भाषा में प्रचलित हो गए हैं।

उस आध्यात्मिक झुकाव के कारण भारत की ओर प्रवृत्त होकर बहुत से लोग यह भी चाहते हैं कि जिस देश की आध्यात्मिक परम्पराओं को वे सीख रहे हैं उसकी भाषाएं भी सीख लें। इस तरह हिन्दी, संस्कृत आदि की कक्षाओं में विद्यार्थियों का एक नया वर्ग पहुंच गया है।

अध्यात्म के अलावा, भारतीय शास्त्रीय संगीत, चित्रकला, मूर्तिकला इत्यादि सांस्कृतिक परम्पराओं में भी कुछ लोगों का झुकाव है। भारतीय डिजाइन लोगों को पसन्द हैं। चित्रकला तथा मूर्तिकला भी वहां बहुत बिकती है, और हस्तकला का भी काफी निर्यात होता है। कुछ अमरीकन चित्रकार भारतीय बिम्बों तथा प्रतीकों से भी प्रभावित हैं और इनका प्रयोग अपनी कला में करते हैं। भारतीय शास्त्रीय संगीत में तो आजकल अमरीका में सबसे अधिक रुचि है। भारत के संगीतकार बड़ी संख्या में अमरीका पहुंचते हैं और श्रोतागण उनको बड़ी रुचि से सुनते हैं। वहां के बहुत से संगीतकार भारतीय शास्त्रीय संगीत का अध्ययन भी करते हैं तथा भारत में अध्ययन के लिए पहुंचते हैं। उन लोगों में भी भाषा सीखने की इच्छा स्वाभाविक है, और ऐसे लोग भी हिन्दी की कक्षाओं में पहुंचते हैं।

इन सब परिस्थितियों के कारण हिन्दी के बारे में जो ज्ञान पहले था, वह अब कम होने लगा है।

अमरीका के भारतीय और हिन्दी

आजकल अमरीका में प्रवासी भारतीयों की संख्या बहुत बढ़ गई है। यहां तक कि सरकार उनको अब एक सरकारी अल्प-संख्यक समुदाय मानने लगी है। 1965 से पहले, भारतीय अमरीका में बहुत कम थे तथा इधर-उधर बिखरे हुए थे, जिसके कारण उनकी संस्कृति कम विद्यमान थी। अब भारतीय सब क्षेत्रों में उपस्थित हैं और वे अमरीकन समाज का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। संख्या अधिक होने के कारण, भारतीय लोग स्वयं अपनी संस्कृति सुरक्षित करने तथा बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं।

आजकल, विशेषकर न्यूयार्क या लॉस ऐंजल्स जैसे बड़े शहरों में, साड़ियों को या पगड़ियों को देखकर किसी को आश्चर्य नहीं है, और भारतीय नाम-उपनाम भी कोई आश्चर्य का विषय नहीं हैं। विभिन्न शहरों में कुछ ऐसे पड़ौस होने लगे हैं जिनमें बहुत-से भारतीय रहते हैं और हर तरह के रेस्टोरां तथा दुकानें हैं। कुछ जगहों में हिन्दी फिल्में दिखाई जाती हैं तथा रेडियो के दो-एक हिन्दी प्रोग्राम भी होते हैं। बहुत-से सांस्कृतिक कार्यक्रम, धार्मिक उत्सव आदि होने लगे हैं। मुख्य त्यौहार बड़े धूम-धाम से मनाए

जाते हैं। मन्दिर-मस्जिद-गुरुद्वारा भी इधर-उधर बनने लगे हैं। राष्ट्रीय स्तर पर अनेक बड़े-बड़े कार्यक्रम भी हुए हैं।

प्रवासी भारतीय लोगों में इस नए सांस्कृतिक उमंग के दो रूप हैं। एक तो ऐसी संस्थाएं तथा कार्यक्रम जिनमें भारत के प्रदेशों के लोग किसी उद्देश्य से मिलते हैं (जैसे 15 अगस्त को मनाने के लिए या समसामयिक समस्याओं पर विचार-विमर्श करने के लिए)। ऐसे अवसरों पर ज्यादातर अंग्रेजी बोली जाती है। दूसरी ओर, संस्थाएं या सांस्कृतिक कार्य हैं जिनका आधार भारत के विभिन्न प्रादेशिक, या क्षेत्रीय सँस्कृतियां हैं। उन्हीं में मातृभाषा का प्रयोग (चाहे हिन्दी हो या कोई अन्य भाषा) अधिक किया जाता है, और क्षेत्रीय परम्पराओं (जैसे लोकगीत, कविता आदि का पालन किया जाता है।

परिवारों में मातृभाषा का पालन तब किया जाता है जब बूढ़े लोग भी हों, जिनको अंग्रेजी कम आती है। अन्यथा, भारतीय बच्चे अंग्रेजी ही बोलते हैं। लेकिन पिछले 5–6 वर्षों से, ये लड़के-लड़कियां विश्वविद्यालयों में पहुंचने लगे हैं। वहां हर विद्यार्थी को अकसर अपनी रुचि के अनुसार विदेशी भाषा का दो वर्ष तक अध्ययन करना पड़ता है। जहां हिन्दी या कोई और भारतीय भाषा सिखाई जाती है, भारतीय लड़के-लड़कियां उसी को सीखना पसन्द करते हैं।

निष्कर्ष

अमरीका में हिन्दी का अध्ययन निजी रुचि की बात है। सरकार तथा स्वतन्त्र संस्थाएं अध्यापन कार्यक्रमों में कुछ मदद करती हैं, परन्तु अध्यापन की दिशा असंख्य पढ़ने-पढ़ाने वालों की व्यक्तिगत प्रेरणा तथा उद्देश्यों से विकसित हुई है। अतः हिन्दी साहित्य में विशेष रुचि लेने वाले साहित्य के विद्वान भाषा विज्ञान के विद्वान, समाजशास्त्र आदि के विद्वान आधुनिक भारत की प्रगति तथा समस्याओं पर शोध कार्य कर रहे हैं। भारतीय संगीत तथा अन्य कलाओं में रुचि लेने वाले साधारण लोग तथा कलाकार, अध्यात्म की ओर प्रवृत्त लोग जो किसी भारतीय धर्म-साधना के अनुयायी हैं, पर्यटक लोग जो भारत में घूमना चाहते हैं और ऐसे व्यक्ति जिनमें से किसी भारतीय के व्यक्तिगत सम्पर्क में आने के बाद भाषा सीखने की इच्छा उत्पन्न हुई, तथा प्रवासी भारतीय लड़के-लड़कियां जो अमरीका में पैदा होने के कारण अपनी मातृ-भाषा तथा राष्ट्र भाषा अच्छी तरह से नहीं जानते हैं, हिन्दी का अध्ययन करने लगे हैं। अमरीकी विद्वानों में हिन्दी का अध्ययन व्यापक होता जा रहा है, जिससे वे भारतीय विद्वानों के साथ स्थायी सम्बन्ध बनाए रख सकें। आम जनता में भारतीय लोगों तथा भारतीय संस्कृति के बारे में अधिक जानकारी होने के कारण हिन्दी के बारे में भी कुछ जानकारी होने लगी है। अन्त में प्रवासी भारतीयों में अपनी सँस्कृति तथा भाषा के पालन के लिए भी एक नया उत्साह उत्पन्न हो रहा है। □□□

(पृष्ठ 49 का शेषांश)

तक हिन्दी के प्रयोग को भारतीय राष्ट्रीयता की कसौटी मानकर चलें।

महात्मा गांधी ने जब यह कहा था कि राष्ट्रभाषा के बगैर राष्ट्र गूंगा है तो उन्होंने भारतीयों के हृदय की मूक भावना को ही वाणी प्रदान की थी। अतः एक राष्ट्र के लिए राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगीत की तरह राष्ट्रभाषा भी अनिवार्य है और जिस प्रकार से राष्ट्रगीत एवं राष्ट्रध्वज को संपूर्ण राष्ट्र गौरव का स्थान प्रदान करता है उसी प्रकार से राष्ट्र-भाषा को भी गौरव का स्थान देना ही होगा। आश्चर्य की बात तो यह है कि जब राष्ट्र की बात आती है संविधान के बड़े-बड़े पंडित तक हिन्दी के नाम पर नाक-भौं सिकोड़ने लगते हैं और राष्ट्रभाषा के संबंध में संविधान में जो बात कही गई उसे सर्वथा अनदेखा कर जाते हैं। यह उनकी दासता और मानसिकता का परिणाम है जो उन्हें भारतीय जन-जीवन से अपने को अलग रख कर अपनी विशेषता बनाए रखने की विषाक्त प्रेरणा प्रदान करता है।

जैसा कि कहा जा चुका है, भाषा का प्रश्न राजनीतिक नहीं है बल्कि सांस्कृतिक एवं सामाजिक है। अतः जब हम अंग्रेजी और अंग्रेजियत की मानसिकता और दासता से उभरकर भारत की स्वतंत्र सांस्कृतिक, सामाजिक सत्ता की खोज की ओर उन्मुख होंगे तभी हमें हिन्दी एवं भारतीय भाषाओं के गौरव का बोध होगा। साहित्य के विद्यार्थी इस बात को जानते हैं कि जब श्रीमती सरोजिनी नायडू ने अंग्रेजी के रोमांटिक कवियों के अनुकरण पर कविताएं लिखीं तो उन्हें कवयित्री के रूप में कोई अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त नहीं हुई। लेकिन जब रवींद्रनाथ ठाकुर ने उपनिषदों और संतों की परम्परा में गीतांजलि की रचना की तो नोबेल पुरस्कार के रूप में उन्हें अंतर्राष्ट्रीय मान्यता प्राप्त हुई। आश्चर्य और दुख की बात यह है कि आज इस ऐतिहासिक तथ्य को भुला दिया गया है और नकल की आंधी में हम बहते जा रहे हैं। संसार भारत को भारत के रूप में देखना चाहता है, न कि इंग्लैंड, अमेरिका, रूस, चीन, अरब या किसी अन्य देश की फूहड़ नकल के रूप में। यह तभी संभव है जब एक भारतीय के रूप में हमें अपनी राष्ट्रीय अस्मिता का बोध होगा और उसकी पहचान यह होगी कि हम हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं को अपने रोजमर्रा के व्यवहार, शिक्षा-दीक्षा के माध्यम एवं भारतीय तथा अंतर्राष्ट्रीय कामकाज की भाषा के रूप में हिन्दी का सहज भाव से कितनी सफलता-पूर्वक प्रयोग करते हैं। जिस रोज भारत एक राष्ट्र के रूप में ऐसा करने का संकल्प ले लेगा उस रोज भारत के सांस्कृतिक और सामाजिक विकास के मार्ग की सारी मानसिक बाधाएं दूर हो जाएंगी और उसका वह तेज पुनः प्रकट होगा जिसकी संसार सदैव से प्रतीक्षा कर रहा है। यह काम किसी ग्रह से आने वाला कोई प्राणी नहीं करेगा बल्कि इसे हम भारतीयों को ही करना होगा। □□□

लीपज़िग विश्वविद्यालय में हिन्दी

—डॉ० (श्रीमती) मार्गेट गात्स्लाफ

19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से लीपज़िग विश्वविद्यालय प्राच्य विद्या को प्रोत्साहन देता आ रहा है और इस क्षेत्र में बड़ा ही सटीक अनुसंधान कार्य करता आ रहा है। उदाहरण के लिए हर्मन ब्रॉक हॉस (1806–1887), अर्नेस्ट विंडिश (1844 1919), जनहेन्स हर्टल (1872–1955) और फ्रीडरिच वेलर (1889–1980) जैसे विद्वानों ने लिपिज़िग विश्वविद्यालय में काम किया और इसे प्राच्य विद्या का विश्वविख्यात केन्द्र बनाने में सहायता दी। विश्व के सर्वाधिक विख्यात प्राच्य विद्या विशेषज्ञ मैक्समूलर ने अपने प्रोफेसर हर्मन ब्रॉक हॉस के साथ लीपज़िग विश्वविद्यालय में 1841 में अपना अध्ययन आरम्भ किया और यहीं पर उन्होंने अपने व्यापक ज्ञान का भंडार अर्जित किया और इसके बाद वे अपने अध्ययन को जारी रखने के लिए 1844 में पैरिस और उसके बाद बर्नाफ चले गए।

हर्मन ब्रॉ हॉस को उनकी पत्रिका जेटाशिफ्टि देर हयूशेन मार्गेन हैंडीशेन गेसल शेफ्ट (जर्नल ऑफ जर्मन ओरियण्टल सोसायटी) के प्रकाशन के कारण बड़ी ख्याति मिली। उन्होंने देवनागरी वर्णमाला का लैटिन लिप्यांकन किया जो आज भी प्रयोग लाया जाता है। अर्नेस्ट विंडिश विशेषत: तुलनात्मक भाषा विज्ञान के क्षेत्र में सक्रिय रहे और उन्होंने वैदिकोत्तर साहित्य पर कार्य किया। जॉहेन्स हर्टल भारतीय परियों की कहानियों के संग्रह हितोपदेश और पंचतंत्र से सम्बन्धित कार्यों के कारण प्रसिद्ध हुए। हर्टल ऐसे पहले व्यक्ति थे, जो आधुनिक भारतीय भाषाओं को जानते थे और इनमें भी वे सबसे अधिक गुजराती जानते थे और साथ ही हिन्दी और उर्दू जानते थे। फ्रीडरिच वेलर का स्थान बुद्ध धर्म पर सर्वाधिक सक्षम विशेषज्ञों में आता है और उन्होंने इस क्षेत्र में अपने मौलिक और तुलनात्मक कार्य के कारण बड़ी ख्याति अर्जित की। उन्होंने ही लीपज़िग विश्वविद्यालय में हिन्दी पढ़ाने का श्रीगणेश किया। इस कार्य में इन्हें प्रसिद्ध भारतीय विद्वान शांति भिक्षु शास्त्री ने सहायता की। शास्त्री जी ने लीपज़िग विश्वविद्यालय में 1956-1958 तक कार्य किया और हिन्दी भाषा में विद्यार्थियों को सबसे पहले प्रशिक्षण दिया। इन्होंने "रेबबुनेन देस ठाकुर" (ठाकुर का कुआं लीपज़िग 1962) नामक भारतीय लघु कहानियों के एक खण्ड का सम्पादन किया।

1960 के बाद लीपज़िग कार्लमार्क्स विश्वविद्यालय (1955 में यह नाम पड़ा) में युवा विद्वानों ने बुर्जुआ जर्मन प्राच्य विद्या की प्रगतिवादी परम्पराओं को जारी रखते हुए आधुनिक समय की अपेक्षाओं को पूरा करने की दिशा में सक्रिय रूप से कार्य किया। यह नवीन मार्गदर्शन इस जानकारी पर आधारित है कि जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य के भारतीय गणराज्य के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के लिए यह आवश्यक है कि जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य को सभी समस्याओं की व्यापक जानकारी हो जिससे पारस्परिक सम्बन्ध दोनों देशों के लिए अधिक से अधिक लाभकारी हो। अत पुराने भारतीय भाषाविज्ञान के क्षेत्र में पारस्परिक अनुसंधान कार्य करने के अलावा भारत के आधुनिक और समसामयिक इतिहास भारतीय भूगोल और उनके अर्थशास्त्र एवं आधुनिक भारतीय भाषाओं और उनके साहित्य विशेषत: हिन्दी और उर्दू के साहित्य क्षेत्र में अनुसंधान कार्य करने की दिशा में विशेष प्रयास किए गए।

1961 में मार्गेट गात्स्लाफ हेलसिंग (जन्म 1934) लीपज़िग में कार्लमार्क्स विश्वविद्यालय में हिन्दी के क्षेत्र में सक्रिय हुई। इन्होंने सोवियत संघ में लेनिनग्राद और मास्को विश्वविद्यालयों में प्राच्य विद्या का अध्ययन किया। 1962–64 तक इन्होंने दिल्ली विश्वविद्यालय में पोस्ट-डिप्लोमा का अध्ययन पूरा किया। बाद में शब्दकोश सम्बन्धी कार्य के लिए भारत गईं। उनके मार्ग-निर्देशन में 1973 तक बहुत से छात्रों को हिन्दी का शिक्षण दिया गया। उसके बाद कार्य विभाजन सम्बन्धी नए निर्णयों के अनुसार प्राच्य विद्या के उच्च स्कूल शिक्षा के छात्रों को बर्लिन स्थित हंबोल्ड विश्वविद्यालय में मुख्यतया प्राच्य विद्या की शिक्षा दी जाती है।

मा० गात्स्लाफ हेलसिंग ने पहले लीपज़िग विश्वविद्यालय में हिन्दी व्याकरण और भारत में भाषायी स्थिति पर अनुसंधान कार्य किया। उन्होंने इस क्षेत्र में जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य और भारत की वैज्ञानिक पत्रिकाओं में बहुत से लेख और निबन्ध लिखे। 1966 में "आधुनिक साहित्य हिन्दी में 'हुआ' संयुक्त कृदंत के प्रकार्य" पर शोध प्रबन्ध लिखकर पी-एच० डी० की उपाधि प्राप्त की और 1978 में "स्वतन्त्र भारत में हिन्दी के प्रकार्यात्मक विकास की प्रवृत्तियां और समस्याएं" पर प्रारम्भिक शोध-प्रबंध लिखकर कार्लमार्क्स विश्वविद्यालय से डी० एस-सी० की उपाधि प्राप्त की।

उन्हें कई बार अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय सम्मेलनों और संगोष्ठियों में अपने वैज्ञानिक कार्य के परिणामों और हिन्दी की कतिपय समस्याओं तथा भारत की भाषायी स्थिति के बारे में अपने दृष्टिकोण को अभिव्यक्त करने का अवसर मिला। उन्होंने भी अन्य विद्वानों के साथ 1975 में भारत में नागपुर में हुए प्रथम

विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लिया और 1976 में मारिशस में मोका में हुए द्वितीय विश्व हिन्दी सम्मेलन में भाग लिया। 1981 में उन्होंने "प्रेमचन्द और भारतीय उपन्यास की भारतीयता" पर हुए अन्तराष्ट्रीय संगोष्ठी में भाग लिया जिसका आयोजन नई दिल्ली की साहित्य अकादमी ने किया था। वह नई दिल्ली में लल्लनप्रसाद व्यास द्वारा संपादित 'विश्व हिन्दी दर्शन' नामक भारतीय पत्रिका की परामर्शदात्री समिति की भी सदस्य हैं।

इसके अतिरिक्त जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य के हिन्दी विद्वान अध्यापन-सामग्री के संपादन का प्रयास करते रहे हैं। इस प्रयास में उन्हें लीपज़िग स्थित पुराने प्रकाशन गृह "बेब वेरलाग एनीक्लोपेडी" का जिसे पहले ओटो हैरेसोविज के नाम से जाना जाता था सहयोग प्राप्त होता रहा है। इस प्रकाशन गृह ने पहले ही 1945 में हिन्दुस्तानी भाषा पर एक पाठ्यपुस्तक प्रकाशित की थी, जिसका संकलन ओटो स्पाइज ने किया। हिन्दी पर इस प्रकाशन गृह द्वारा संपादित निम्नलिखित अध्यापन-सामग्री उपलब्ध है :

— 29 वीं शताब्दी के हिन्दी गद्य की उद्धरणिका, दगमर अंसादी द्वारा संशोधित तथा संपादित लीपज़िग 1967, पृष्ठ 221;

— हिन्दी व्याकरण गाइड, लेखिका : मागेट गात्स्लाफ हेलसिग लीपज़िग 1967, 1978, 1983, पृष्ठ 197;

— हिन्दी-जर्मन कोश, लेखक : एरिका क्लेम, लीपज़िग, 1971, पृष्ठ 418 (लगभग 12 हजार संदर्भ शब्द);

— जर्मन–हिन्दी कोश, लेखक : मार्गेट गात्स्लाफ हेलसिग, लीपज़िग, 1977, 1982, पृष्ठ 646 (लगभग 16 हजार संदर्भ शब्द);

— जर्मन-हिन्दी वार्तालाप पुस्तक ले० दगमर मारकोपा अंसारी तथा एम० अहमद अंसारी, लीपज़िग, 1081, पृष्ठ 266;

नवीनतम प्रकाशन जॉर्गज ए० जो ग्राफ द्वारा लिखित "दक्षिण एशिया की भाषाएं" नामक भाषायी सर्वेक्षण का रूसी भाषा से जर्मन भाषा में किए गए अनुवाद का प्रकाशन है जो 1982 में लीपज़िगसेस प्रकाशित हुआ और जिसमें 167 पृष्ठ हैं। इसका अनुवाद एरिका क्लेम ने किया है।

1963-1968 तक इरेने विटिग जाहरा (जन्म 1927) ने लीपज़िग कार्लमार्क्स विश्वविद्यालय में आधुनिक हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में काम किया। उनके विशेष अध्ययन का विषय सुमित्रानंदन पंत का गीति काव्य था और इस पर ही उन्होंने शोधप्रबन्ध लिखा तथा 1967 में पी० एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। एम० गात्स्लाफ में हेलसिग ने आधुनिक हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में भी काम किया। अब तक उन्होंने यशपाल, प्रेमचन्द, कृशन चन्दर और कुल भूषण की कुछ लघु कहानियों का हिन्दी से जर्मन में अनुवाद किया जो जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य की पत्रिकाओं में प्रकाशित हुआ। इसके अतिरिक्त उन्होंने प्रेमचन्द का "निर्मला" (लीपज़िग, 1976), भीष्म साहनी का "बसन्ती" (प्रकाशनाधीन) और "मारिशस की भारतीय लोक कथाएं" (लीपज़िग, 1979) का भी हिन्दी से जर्मन भाषा में अनुवाद किया। ये तीनों पुस्तकें फिलिप रेक्लेम जून, प्रकाशन गृह ने प्रकाशित की हैं।

1973 में एक नए प्रयत्न का सूत्रपात हुआ, जो प्राच्य विद्या के विकास में एक महत्वपूर्ण मोड़ है। जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य और भारत के बीच सांस्कृतिक आदान-प्रदान कार्यक्रम के अन्तर्गत बर्लिन स्थित हंबोल्ट विश्वविद्यालय और नई दिल्ली स्थित केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए, जिसमें पारस्परिक सहयोग से एक ऐसे कोश के संकलन की व्यवस्था है जिसमें (हंबोल्ट विश्वविद्यालय के दायित्व के अधीन) "हिन्दी–जर्मन" और (केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के दायित्व के अधीन) "जर्मन–हिन्दी" के खण्ड होंगे। इन खंडों में लगभग 45 हजार संदर्भ शब्द होंगे। इन खण्डों का कार्य जल्दी ही पूरा हो जाएगा। यह कोश परियोजना अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का ही नहीं, अपितु राष्ट्रीय सहयोग का भी एक अच्छा उदाहरण है। हम्बोल्ट विश्वविद्यालय, लीपज़िग कार्लमार्क्स विश्वविद्यालय लीपज़िग स्थित एनजीक्लोपेडिया प्रकाशन-गृह से हिन्दी के विद्वान शामिल किए गए हैं।

इस प्रकार कार्लमार्क्स विश्वविद्यालय के प्राच्य विद्या विशेषज्ञ भारत में ही नहीं अपितु विश्व भर में एक महत्वपूर्ण भाषा के रूप में हिन्दी के अध्ययन एवं प्रचार के कार्य में संलग्न हैं और इस प्रकार वे जर्मन लोकतांत्रिक गणराज्य और भारतीय गणराज्य के बीच मैत्रीपूर्ण संबंधों को और सुदृढ़ बनाने की दृष्टि से सहायता कर रहे हैं।

हिन्दी एक ऐसी भाषा है, जिसके द्वारा हम विश्व के एक बड़े जनसमुदाय से भावात्मक रूप से जुड़े हुए हैं।

—दयानन्द लाल वसंतराम
(मारीशस के एक मंत्री)

जर्मनी संघीय गणराज्य में हिन्दी

--डॉ० लोठार लुत्से

इस समय जर्मनी संघीय गणराज्य के विश्वविद्यालयों में हिन्दी तथा दक्षिणी एशिया को अन्य आधुनिक भाषाओं और साहित्य का मुख्य विषय के रूप में अध्ययन किया जा रहा है। यह अध्ययन पी० एच० डी० की उपाधि तक केवल हीडलवर्ग विश्वविद्यालय के साउथ एशिया इंस्टीट्यूट में ही किया जा सकता है। इसमें कोई गर्व की बात नहीं है। इसके विपरीत यह भी कहा जा सकता है कि यह स्थिति एक ऐसे देश के लिए निश्चय ही सन्तोषजनक नहीं है जो परम्परा से भारतीय उपमहाद्वीप के साथ पूरी तरह प्रतिबद्ध रहा है। फिर भी ऐसी शुरूआत की गई है कि इससे वर्तमान स्थिति में इस देश में रचनात्मक आत्मआलोचना की प्रवृत्ति में आधुनिक प्राच्यविद्या की समस्याओं और सम्भावनाओं का परीक्षण करने की आवश्यकता है। कलासिक जर्मन प्राच्यविद्या की व्यापक एवं उपयुक्त परम्परा रही है। अन्य बातों के साथ आधुनिक प्राच्यविद्या का अब तक विकास समान रूप से होता रहा है और अभी भी अपभ्रंश का रूप जो उज्जवल सांस्कृतिक अतीत और विकृत वर्तमान के बीच तुलना करने से उभरा है, उनसे हिन्दी और अन्य आधुनिक दक्षिण एशियाई भाषाओं और साहित्य के बारे में हमारे दृष्टिकोण को अधिकांश रूप से निर्धारित किया है।

हिन्दी और अन्य दक्षिण एशियाई भाषाओं के सन्दर्भ में 'आधुनिक' उस विकास की ओर संकेत करता है जो 19वीं शताब्दी के पहले 25 वर्षों में प्रारम्भ हुआ था। अर्थात् यह वह समय था जब पश्चिमी चिन्तन और लेखन, विशेषकर अंग्रेजी का प्रभाव बंगाल के माध्यम से काफी पड़ा था। इस प्रकार भारतीय सांस्कृतिक इतिहास का एक युग था जो भारतीय कलाकारों और बुद्धिजीवियों के प्रयास से पश्चिमी संस्कृति के साथ जुड़ा हुआ था और जिसमें अंधानुकरण से लेकर आलोचनात्मक अस्वीकरण या सर्जनात्मक ग्रहणशीलता की बात भी थी। यह संघर्ष अभी भी धीमे-धीमे चल रहा है। इस प्रसंग में हिन्दी और अन्य आधुनिक दक्षिण एशियाई भाषाओं और साहित्यों का अध्ययन एक प्रकार से मिश्रित संस्कृति या सांस्कृतिक मिश्रण के भाषायी और साहित्यिक पक्षों का अध्ययन होगा। संस्कृति में जो ह्रास हुआ है और सांस्कृतिक निर्दोषता की जो काल्पनिक अवस्था विलीन हो गई, इस पर शोक प्रकट करना तथा इस संघर्ष को अभारतीय या पश्चिमीकृत रूप कहना विकास का अत्यन्त सरलीकरण है। इसके लिए हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि इसका जिम्मेदार पश्चिम है जिसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। इसके लिए हम में से कुछ लोग क्षुब्ध भी हैं। उससे हिन्दी और अन्य दक्षिण एशियाई भाषाओं के उन असंख्य प्रयोक्ताओं के साथ बहुत बड़ा अन्याय होगा कि जो अभी भी कितने उपनिवेशी अतीत के प्रभाव को समाप्त करने में प्रयत्नशील हैं और जो अपनी भाषा और साहित्य की (चाहे वह मौखिक हो या लिखित) बढ़ती हुई सफलता के लिए प्रयत्नशील हैं।

हिन्दी और अन्य आधुनिक दक्षिण एशियाई भाषाओं और साहित्य के विद्यार्थियों के लिए यह समझना इससे अधिक शैक्षिक रुचि का काम है और इस संघर्ष को समझना शैक्षिक दृष्टि से और अच्छा है। ऐसा समझने से हिन्दी और अन्य आधुनिक दक्षिण एशियाई भाषाओं को समझने में सहायता मिलेगी। यदि मुख्यतः उन भाषाओं और साहित्यों का अध्ययन करने का निर्णय सांस्कृतिक दृष्टि से उत्प्रेरित हो तो यह उत्प्रेरणा मानवीय भावनाओं से जुड़ी हुई है।

इस क्षेत्र में जिन देशों की तुलना की जा रही है, उनसे हटकर पहले की उपनिवेशवादी शक्तियां तथा संयुक्त राज्य अमरीका या पूर्वी यूरोपीय देश, जिसमें जर्मन जनवादी गणराज्य भी शामिल है--आगे है। इसके आगे होने के कारण वस्तुतः शिक्षा को कम महत्व देना है। जर्मन संघ गणराज्य के पास कभी भी निश्चित कार्य-शैली या स्पष्ट राजनीतिक उत्प्रेरणा नहीं रही जो दूसरे देशों में कुछ न कुछ मिलती है। हिन्दी तथा अन्य आधुनिक दक्षिण एशियाई भाषाओं के जिस अध्ययन को सरकार ने बड़े पैमाने पर निर्दिष्ट किया है उसके विकास के लिए वह उत्तरदायी है। चूंकि अब भारत और पश्चिमी जर्मनी में विकासशील (अर्थात सहायता प्राप्त करने वाले देश) तथा सहायता देने वाले औद्योगिक देश की क्रमशः भ्रामक भूमिका निभानी शुरू की है, इसलिए उनके आपसी सम्बन्धों ने उस परम्परागत सरलता को खो दिया है, जो प्रथमतः और अन्ततः आपसी सांस्कृतिक सद्भाव पर आधारित था। यही कारण है कि हमारे इस राजनीतिक या शैक्षिक परिवेश में जब कोई विद्यार्थी हिन्दी या किसी अन्य दक्षिण एशियाई भाषा और साहित्य (क्लासिकी हो या आधुनिक) के अध्ययन का यदि व्यक्तिगत रूप से निर्णय लेता है तो उसे बिना किसी सरकारी प्रोत्साहन के मदद ही नहीं मिलती। इतना ही नहीं उसे अभी भी इससे कोई विशेष रोजगार भी मिलने की सम्भावना नहीं है। वस्तुतः प्राच्यविदों को अभी

भी क्षेत्रीय विशेषज्ञों के रूप में सरकार द्वारा मान्यता मिलना शेष है ।

वस्तुतः इस देश में अन्य विषयों के साथ-साथ क्लासिकी प्राच्यविद्या के विद्यार्थी की अपेक्षा आधुनिक प्राच्यविद् भारतीय दूसरे दक्षिण एशियाई देशों के व्यक्तियों और अधिकारियों से प्रोत्साहन तथा समर्थन मिलने पर कार्य कर पाएगा । ऐसा होना निश्चित रूप में उसके ऊंचे हौसले के लिए घातक है । अगर आंगल-भारतीय कथा-साहित्य का कोई लब्ध-प्रतिष्ठित भारतीय लेखक और बुद्धिजीवी उससे कहता है (जैसा कि इस देश में कुछ वर्षों पूर्व हुआ था) कि उसे इस पिछड़ी भाषा तथा साहित्य के अध्ययन पर अपना समय नष्ट नहीं करना चाहिए या वे ये कहें कि जो कुछ भी आधुनिक भारतीय साहित्य में है, वह अंग्रेजी में लिखा जा चुका है ।

वस्तुतः अपने पूरे इतिहास में हिन्दी साहित्य शायद ही कभी इतना समृद्ध और जीवंत नजर आया हो, जितना वह आज है । यही कारण है कि कोई भी विद्यार्थी जो किसी कठिन भाषा को सीखने की चुनौती स्वीकार करता है, वह हिन्दी जैसी कठिन भाषा की ओर आसानी से प्रवृत्त हो सकता है । हालांकि हिन्दी लेखन में दो मुख्य प्रवृत्तियां दिखाई पड़ी हैं, पहली तो यह कि साहित्यिक भाषा आम जनता की भाषा के निकट आई है । अगर उसे राजनीतिक शब्दावली में कहें तो यह होगा कि साहित्यिक भाषा का लोकतन्त्रीकरण हुआ है, जिसके कारण ज्यादा से ज्यादा पाठक अथवा श्रोता साहित्य में अपनी भूमिका निभा सकते हैं (ठीक वैसे ही जैसे राजनीति खेल रहे हों) दूसरी विशेषता है साहित्य का भाषायी स्थानीकरण (लिंग्विस्टिक लोकलाइजेशन) विशेष रूप से न केवल खड़ी बोली में वरन् लिखित व्याख्यात्मक गद्य के क्षेत्र में 'अनेकता में एकता' का सिद्धांत स्पष्ट रूप से प्रतिध्वनित होता है और यह वह सिद्धांत है, जिस पर भारत जैसे विस्तृत और विभिन्नता से भरे देश का भविष्य निश्चित तौर पर निर्भर करता है । □□□

भविष्य में हिन्दी आने वाली नवीन चेतना की सांस्कृतिक भाषा होगी, ऐसा मेरा विश्वास है । अंग्रेजी में बौद्धिक सक्रियता और बौद्धिक आलोचना के तत्व हैं, पर सांस्कृतिक अर्थ में वह अन्तर्राष्ट्रीय नहीं है । हिन्दी में जो ध्वनि-संगीत है, जो शांति की सूक्ष्म झंकार परिव्याप्त हैं, जो पवित्रता है, वे बेजोड़ हैं । भावी मनुष्यत्व के तत्वों से हिन्दी परिपूर्ण होगी । भविष्य में संस्कृति का जो नवीन संचारण होगा, उसे हिन्दी अपने में समाहित करेगी । आने वाले युग की संस्कृति में जिन गुणों का समावेश होगा, वे गंभीर, व्यापक और उच्च स्तर के होंगे । नवीन संस्कृति को व्यक्त करने के लिए भाषा झरने की तरह फूट निकलेगी, भाव उमड़-उमड़ कर आएंगे । हिन्दी भाषा का सौन्दर्य ही कुछ विलक्षण है । मुझे विश्वास है कि एक दिन आएगा जब हिन्दी विश्व की सांस्कृतिक भाषा होगी ।

—सुमित्रानन्दन पन्त

सूरीनाम देश और हिन्दी

--श्री सूर्यप्रसाद बीरे

सूरीनाम दक्षिण अमरीका के उत्तर में स्थित एक देश है जिसकी राजधानी पारामारिबो है। पारामारिबो का मतलब है फूलों का शहर। कहा जाता है कि यह नाम भिलनियों (रेड इंडियन) द्वारा दिया गया है। इन लोगों की परम्परा भारतीय मानी जाती है, जिसके कारण उनकी भाषा के कुछ शब्द संस्कृत भाषा के शब्दों से मिलते-जुलते हैं। उदाहरण के रूप में "मातापिका"। यह एक प्राकृतिक सुन्दर स्थान है जहां बहुत से लोग अपनी छुट्टियां व्यतीत करते हैं। यदि इस शब्द के वर्ण को बदल दिया जाये तो शब्द मूल भारतीय देवनागरी शब्द बन जाता है "माता पिता"। इस तरह से पारामारिबो के सम्बन्ध में कहा जाता है कि यह "परम ब्रह्म" का अपभ्रंश है।

सूरीनाम शब्द के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि "सूरीनाम" नाम की भिलनियों (रेड इण्डियन) का यहां समूह था जिसके कारण सूरीनाम नाम पड़ा। इस शब्द की संस्कृत शब्द "सूरीनाम" से तुलना की जाये तो दो अक्षरों के हेर-फेर से वह "विद्वानों का देश" हो जाता है। इस तरह से देखा जाये तो सुरीनाम के स्थानों आदि आदि नामों के संबंध में इतिहासकारों एवं शोधकर्ताओं आदि के लिये खोज तथा शोध को एक सुन्दर अवसर है। कुछ लोगों का कहना है कि भिलनी लोग सूरीनाम के प्राचीन देशवासी या रेड इण्डियन या भिलनी भारत के पहाड़ी क्षेत्रों के आदिवासी हैं। यह बात कहां तक सही है, केवल जांच-पड़ताल से इसे अच्छी तरह से जाना जा सकता है। सूरीनाम देश की सीमा चारों ओर से प्रकृति से घिरी हुई है। उत्तर में अटलांटिक महासागर है। दक्षिण में आकाराई और तुमुकहुमुक पहाड़ हैं जो सूरीनाम को ब्राजील देश से अलग करते हैं। पूरब में मारोवईनें नदी बहती है जिससे सूरीनाम और फ्रेंच गयाना विभाजित होते हैं। पश्चिम में कोरासाइन नदी है जो हमें (ब्रिटिश) गयाना से अलग करती है। सूरीनाम देश का क्षेत्रफल हालैंड देश से पांच गुना बड़ा है। कुछ वर्षों तक यह देश ब्रिटिश राज का उपनिवेश था। किन्तु "नई गाइनेई" को सूरीनाम में हालैंड ने बदल लिया। उस समय नई गाइनेई हालैंड का उपनिवेश था। हालांकि ब्रिटिश राज यहां बहुत दिन तक शासन न पाया, फिर भी उनका प्रभाव काफी बना रहा। इसीलिये नीग्रो की भाषा स्रानांग तोंगो में 80 प्रतिशत शब्द अंग्रेजी भाषा के हैं। यहां की यातायात व्यवस्था इंगलैंड की तरह है।

सूरीनाम देश की जलवायु उष्ण वलयिक है। मुख्य रूप से वर्षा होती है। सूरीनाम देश की दो तिहाई मिट्टी पहाड़ी मिट्टी है। एक तिहाई उपजाऊ मिट्टी है। इस देश को कृषि प्रधान देश कहा जाता है। निकेरी इलाका में अधिकांशतः चावल (धान) की खेती होती है। इस देश का प्रमुख व्यवसाय खेती है

सूरीनाम में हिन्दी का प्रयोग

सूरीनाम में रहने वाले भारतीय प्रायः उत्तर भारत से आये हुए हैं और विशेष रूप से उत्तर प्रदेश और बिहार प्रदेश के निवासी है। यहां की प्रमुख भाषायें हिन्दी, उर्दू, पंजाबी, बंगाली, गुजराती और मराठी हैं। ये सभी भाषायें योरोपीय भाषा वर्ग की है। हिन्दी को पांच प्रमुख भागों में विभाजित किया जाता है पहाड़ी, राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी और बिहारी। इन भाषा क्षेत्रों में कई बोलियां हैं। सूरीनाम में हिन्दुस्तानी प्रवासी लोग मुख्य रूप से भोजपुरी और अवधी बोली बोलते थे। इन बोलियों के अतिरिक्त अधिकांश भारतीय मूल के लोग जो सूरीनाम में बस गये थे उत्तर भारत की सार्वजनिक सम्पर्क भाषा खड़ी बोली भी जानते थे। खड़ी बोली के अलावा उर्दू का भी प्रयोग होता था।

वास्तव में भारतीय प्रवासियों के आपसी सम्पर्क के कारण उनकी सभी भाषायें मिश्रित होकर विशिष्ट प्रचलित-हिन्दी बोली जाती है। साहित्य और अध्यापन के प्रभाव से हिन्दुस्तानी या उर्दू (मुस्लिम) और सामान्य उच्च हिन्दी (हिन्दू) ज्यादातर मानक भाषा का रूप धारण करने लगी। वर्तमान समय में इस भाषा का प्रयोग भाषण-पत्र, सूचना आदि में शुद्ध हिन्दुस्तानी या सरल उच्च हिन्दी के रूप में होता है। बोलचाल की भाषा में स्थानीय भाषाओं का भी प्रभाव आ गया है। गयाना पड़ौसी देश से पश्चिमी प्रांत निकेरी में अंग्रेजी का प्रभाव भी पड़ा है। इसी में एक बोली स्रानांग तोंगो है जिसे नीग्रो इंगलिश भी कहा जाता है। वास्तव में अधिकांश भारतवंशी होने के कारण उनकी बोल चाल की भाषा सूरीनाम की धरती पर विकसित हुई है। जिसे "सरनामी" हिन्दी कहा जाता है और अब वह केवल सरनामी से जानी जाती है। हिन्दी के अलावा बहुत से भारतवंशी स्रानांग तोंगो भी बोलते हैं। विशेष रूप से पुरुष वर्ग और युवा वर्ग हिन्दी के अतिरिक्त यह भाषा अच्छी तरह से बोलते हैं। परिवार में युवा वर्ग प्रायः सरनामी का भी प्रयोग करता है।

पारामारिबो राजधानी में भारतवंशियों द्वारा हिन्दी के अतिरिक्त इस भाषा का अधिक प्रयोग किया जाता है। कुछ ऐसे परिवार है जहां हिन्दी समझी नहीं जाती ये। परिवार बहुत समय पहले से ही पारामारिबो में बसे हुए हैं। अब कई भारतवंशी हिन्दी सीखने की कोशिश कर रहे हैं।

देश और निवासी

यहां दुनिया की करीब सभी जातियां रह रही हैं—अमरेंधन (रेड-इण्डियन या भिलनी), नीग्रो, हिन्दुस्तानी, जावी (इण्डोनेशियन), बुश-नीग्रो, चीनी, लिबानिश (यहूदी) परिवार, यूरोपियन आदि। 1980 की जनगणना के अनुसार 39 प्रतिशत हिन्दुस्तानी, 35 प्रतिशत नीग्रो, 18 प्रतिशत इण्डोनेशियन, शेष 8 प्रतिशत अन्य जातियां हैं। इस प्रकार सूरीनाम देश केरिबियन क्षेत्र में सब से विषमरूपी समाज है। कई जातियों के साथ साथ यहां कई संस्कृतियां और कई भाषायें भी हैं। इसकी कुल आबादी लगभग चार लाख है इस चार लाख में जो भाषायें बोली जाती हैं वे हैं—डच, स्रानांग, तोंगो, हिन्दी (सरनामी हिन्दी), उर्दू जावी, चीनी, अंग्रेजी, बुशनीग्रो की कई भाषायें, रेड-इण्डियन की कई भाषायें आदि। संसार में शायद कोई ऐसा देश हो जहां इतनी आबादी में इतनी सारी भाषायें बोली जाती हों।

भारतवंशी समाज

आज से यदि 110 वर्षों के भारतवंशियों के इतिहास पर प्रकाश डाला जाये तो यही पता चलता है कि हमारे पूर्वजों ने यहां की जमीन को आबाद किया, भमि पर खेती की और सूरीनाम में शांति तथा प्रगति के साथ अपना जीवन आरम्भ किया। इसी तरह से अफ्रीका तथा एशिया के अन्य आप्रवासियों ने भी इस देश की उन्नति और विकास में योगदान दिया।

सन् 1873 ई० में भारतवंशी पूर्वजों ने सूरीनाम देश में अपना प्रथम पग रखा। प्रथम जहाज जो आया था वह था "लालारुख" जिसमें 410 लोग थे। समुद्र के रास्ते से आने के कारण 11 लोगों की मृत्यु हो गई थी। कुल लोग जो प्रथम बार थे 399 इस जहाज "लालारुख" ने 4 जून 1873 को सूरीनाम नदी में प्रवेश किया था और 5 जून को हमारे पूर्वजों ने अपना पैर इस देश की धरती पर रखा। अनेक कठिनाइयों और संकटों के बीच अपने पूर्वजों ने आज भी धर्म, संस्कृति, भाषा आदि को सुरक्षित रखा है, इतिहास बताता है कि सन् 1873 से सन् 1928 ई० तक प्रायः 56 वर्षों तक किसी न किसी रूप में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था सरकारी विद्यालयों तथा स्वैच्छिक संस्थाओं में निरन्तर चलती रही, किन्तु सन् 1929 से अब तक प्रायः 55 वर्षों में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन का कार्य सरकारी विद्यालयों में बन्द हो गया और केवल स्वैच्छिक संस्थाओं के द्वारा ही कुछ काम होता है।

प्राचीन हिन्दी साहित्य

यद्यपि कई पूर्वज पढ़ना लिखना जानते थे किन्तु उनकी लिखी पुस्तकों का प्रकाशन नहीं हो सका। उस समय सुरीनाम देश में हिन्दी मुद्रण की कोई व्यवस्था नहीं थी। हमें कई पांडुलिपियां देखने को मिलीं जिनमें न तो आदि के पृष्ठ मिले और न ही अन्त के। इस तरह से कई पांडुलिपियाँ नष्ट हो गई हैं। एक ही पूवज की दो पुस्तकें छपी हैं मुंशी रहमान खान : ज्ञान प्रकाश। सन् 1954 इस पुस्तक में मुंशी रहमान खान स्वयं अपने बारे में लिखते हैं:—

दोहा—

कमिश्नरी इलाहाबाद में जिला हमीरपुर नाम।
बिवांर थाना है मेरा मुकाम भरखरी ग्राम ॥ 1

सिद्धि निद्धि वसु भूमि की वर्ष ईस्वी पाय।
मास शतु तिथि तेरहवीं—डच गैयाना* आय ॥ 2

गिरमिट काटी पाँच वर्ष की कोठी रूस्तुम लोस्त।
सर्दार रहेऊं वहं बीस वर्ष लो नीचे मनयर होर्स्त ॥ 3

अग्नि व्योम इक खंड भुई ईस्वी आय।
मास वर्ग तिथि तेरहवीं गिरमिट बीती भाय ॥ 4

खेत का नम्बर चार हैं देइक फेल्त मम ग्राम।
सुरिनाम देश में वास है रहमानखान निजनाम ॥ 5

लेतरकेन्दख** स्वर्ण पद दीन्ह क्वीन युलियान।
अजरू अमर दम्पति हरहैं प्रेन्स देंय भगवान ॥ 6

स्वर्ण पदक दूजो दियो मिल संत्तुल जमात।
यह बरकत है दान की की विद्या खैरात ॥ 7

इति वर्ग ग्रह सूर्य की है ईस्वी वर्ष।
मास भूमि तिथि रूद्र को पूरण कीन्ह सहर्ष ॥ 8

"इति ज्ञान प्रकाशसमद्रि" पृष्ठ 25–26

इसी में रहमान खान का एक नोट दिया हुआ है और उसमें लिखते हैं इन दोनों उपाधियों का वृत्तांत मेरी बनाई दोहा शिक्षावली नामक पुस्तक में पढ़िये। जो सन् 1953 ई० में छप चुकी है।

मुंशी रहमान खान अपनी दूसरी पुस्तक दोहा शिक्षावली पृष्ठ 4 में लिखते हैं:—

दोनों उपाधियों के जलसों का बयान

हार्दिक कोटिशः धन्यवाद है उस सर्वशक्तिमान सर्वव्यापी सर्वप्रिय जगदाधार परम-प्रिय पिता परमात्मा को,

*वर्तमान सूरीनाम देश

**डच शब्द (साहित्यकार)

कि जिसने अपनी प्रभुता से सारी सृष्टि को उत्पन्न करके अपनी प्रभुताई दिखलाई, दिखला रहा है और दिखलावेगा । कि जिस दीनानाथ की परम कृपालुता से आज मुझे मेरे परम प्यारे आंख के सितारे राज्य के दुलारे, श्रीयुत् महामान्य, महोदय गवर्नर क्लाशश जी साहब बहादुर के कमलस्वरूपी चरणों के दर्शन प्राप्त हुए, कि जिसको पाकर मैं अपने को अहोभाग्य समझता हूं और मेरी सर्व मनोकामनाएं पूर्ण हुई और नेत्र तृप्त हुए ।

आमीन । आमीन ।। रव्वुल आलमीन ।।।

दोहा– बिस्मिमल्लह कहिकर प्रथम सुमिर पाक रब नाम ।
लघु कविता सेवक कहे छोड़ मोह मद काम ।।[1]

निज प्यारे श्री लार्ड को करूं प्रणाम कर जोर ।
ईश क्वीन का यश कहूं सुनहि आप सिरमौर ।।[2]

क्षमियों लेख भुल हो आप गरीब निवाज ।
कृपा दृष्टि नित राखियों तुम रक्षक महाराज ।।[3]

प्रथम जहाज के सम्बन्ध में मुंशी रहमान खान अपनी दोहा शिक्षावली में पद्य के रूप में इस प्रकार वर्णन करते हैं। (पृष्ठ 16 ;)

(सूरीनाम – डच गैयाना में भारतवासियों की अवाई)

दोहा – गुण बासर सिधि अवनि की वर्ष ईस्वी जान ।
मास शास्त्र तिथी तत्व को यहाँ आयो जलयान ।।[2]

चौपाई

यही वर्ष तारीख महीना । पहुंच्चे आय शहर परमारी ।।[2]
प्रथम जहाज यही यहं आइयो। भारतवासी लाय बसायो ।।[3]
दुइ जाति भारत से आये । हिन्दु मुसलमान कहलाये ।।[4]
रही प्रीति दोनहुं में भारी। जस दुई बन्धु एक महतारी ।।[5]

सब बिधि भूपति कीन्ह भलाई ।
दुख अरू विपत्ति में भयो सहाई ।।[6]

हिलामिल कर निशिवासर रहते ।
नहिं अनभल कोई किसी का करते ।।[7]

बाढ़ी अस दोनहुं में प्रीति। मिल गये दाल भात की रीति ।।[8]
खान पियन सब सायहंवै । नहीं बिध्न कोई कारज होवै ।।[9]
सब विधि करें सत्य व्यवहारा। जस पद होय करें सत्कारा ।।[10]

इस तरह से केवल मुंशी रहमान खान की रचनायें हमें प्राचीन साहित्य के रूप में प्राप्त होती हैं । और जो साहित्य पूर्वजों के सम्बन्ध में उपलब्ध है वह ईसाई मिशनरी श्री डा० सी० सी० जे० एम० द क्लेरक द्वारा डच भाषा में विवेचन किया है।

1. दें इमिखासी डेंर हिन्दोस्तानन एँन सूरीनाम
(अर्थ : सूरीनाम में हिन्दुस्तानियों का अप्रवास)

इसी ईसाई मिशनरी ने एक दूसरी पुस्तक भारतवंशियों के धर्म और उनकी रीति रिवाज अपने शोध प्रबन्ध के रूप में लिखी है।

(1951) डच का नाम इस प्रकार है:

'कल्सॅस ऍन रितुवैंल फान हॅंत ओतदौक्स हिन्देस्म" अंग्रेजी भाषा में जहां तक मेरी जानकारी है केवल दो प्रमुख ग्रंथ हैं, जिनमें पूर्वजों के धरोहर के बारे में वर्णन मिलता है। प्रथम है डा० जे० डी० स्पैकमान्न, जिन्होंने सूरीनाम में भारतियों के विवाह और रिश्ते-नाते के सम्बन्ध में अंग्रेजी में लिखा है : Marriage and kinship among the Indians in Suriname. दूसरे हैं डा० उर्षबुध आर्य जिन्होंने भारतियों के लोक-गीत पर अंग्रेजी में अपना शोध प्रबन्ध लिखा है : Ritual Songs and folks songs of the Indians in Suriname. (1968) भारतीय मुल के शिरोमणि डा० ज्ञान हंसदेव अधीन ने 1953 में हिन्दी डच शब्दकोश का संग्रह किया, जिसके प्रकाशक है "विद्या पुस्तक सदन, पारमारीबो ।" स्वर्गीय श्री एम० ए० गुलजार ने भी 1966 में डच के माध्यम से हिन्दुस्तानियों की भाषा को सीखने की एक पाठ्यक्रम का निर्माण किया। आप डच भाषा अध्यापक, भारतवंशियों की भाषाओं के प्रसिद्ध अनुवादक रहे हैं । सूरीनाम की धरती पर विकसित भारतवंशियों की बोलचाल की भाषा "सरनामी" (हिन्दी) पर डा० ज्ञान हंसदेव अधीन जी की रोमन लिपि में सरनामी हिन्दुस्तानी की वर्तनी का प्रस्ताव किया था, जिसका प्रकाशन 1964 में पारामारीबों में हुआ था। इस प्रकार सूरीनाम में हिन्दी अपना स्थान बनाये हुए हैं। □□□

सरकारी कामकाज में सरल और बोलचाल
की हिन्दी का प्रयोग किया जाना चाहिए ।

हिन्दी और महिला जगत्: एक विकास यात्रा

—डॉ० ऊषा बाला

हिन्दी साहित्य के आरम्भिक काल में (सं० 1050 से 1375 तक) जिसे हम संक्रांति काल, बीर गाथा-काल अथवा चारण-काल द्वारा संबोधित करते हैं, नारी के जीवन में संकीर्णता का समावेश हो चुका था। यह वह काल था जब भारत पर मुगलों के आक्रमण तथा पारस्परिक वैमनस्य ने राजनीतिक शक्ति को क्षीण कर दिया था। जिस समय चारण-काल का कवि राज-दरबार में अपने आश्रयदाता में वीरत्व का संचार कर युद्ध-क्षेत्र के लिये ललकारता था उस समय रानी के मनोरंजनार्थ उसकी परिचारिकाएं भी काव्य-रस में डूबी प्रेम-स्निग्ध कविताओं द्वारा उनका मनोरंजन करती थीं। उस समय का अधिकांश काव्य वीर-काव्य के रूप में रचा गया था, जिनके रचयिता मुख्य रूप से चारण कहलाते थे। परन्तु इतिहास में हमें कुछ चारणियों का उल्लेख भी मिलता है जिनमें 'भीमा चारणी', 'पद्मा चारणी', 'ठकुरानी काकरेची', 'नाथी', 'बिरजूवाई' तथा 'चम्पादेवी' विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यद्यपि उसकी भाषा मुख्य रूप से डिंगल है और साहित्यिक दृष्टि से जिसका विशेष महत्व नहीं है, फिर भी नारी द्वारा रचित ये आरम्भिक कवितायें ऐतिहासिक दृष्टि से अपना विशेष महत्व रखती हैं।

हिन्दी साहित्य के भक्ति-काल तक (सं० 1375 से 1700 तक) मुगलों की सत्ता भारत में पूर्ण रूप से दृढ़ हो चुकी थी। नैराश्यमय जीवन की सफलता केवल ईश्वरभक्ति से ही संभव थी। इस युग में भक्ति की दो धारायें निर्गुण और सगुण प्रवाहित हो चुकी थीं। नारी की सामाजिक स्थिति मात्र कामनाओं की तृप्ति एवं राजप्रासादों की शोभा तक ही सीमित थी। बाल-विवाह, सती-प्रथा आदि सामाजिक अभिशापों से ग्रसित नारी की स्थिति और भी भयंकर बन गई थी। फलस्वरूप नारी हृदय की नैसर्गिक अनुभूतियां, बाधाओं को चीरती हुई कविताओं में सहज ही अभिव्यंजित होती गयी। निर्गुण मत की अमर कवियित्रियों में पद्मावती, सुरसरी, पार्वती, दयाबाई, सहजोबाई तथा मुक्ताबाई के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

परन्तु कृष्ण की लीला सगुण उपासना नारी प्रवृत्ति के अधिक अनुकूल सिद्ध हुई। उसने भगवान के बाल, किशोर, तथा युवा रूप को अपनी भावनाओं के अधिक निकट पाया और आत्मीयता का अनुभव किया। इस युग की सगुण-उपासना की अमर कवयित्रियों में उदयपुर के महाराणा कुमार भोजराज की पत्नी राजरानी मीराबाई का नाम कौन नहीं जानता। इनके द्वारा रचित चार ग्रंथ 'नरसी जी का मायरा' 'गीत गोविन्द टीका', 'राग गोविन्द' तथा 'राग सोरठ के पद, हिन्दी साहित्य की अमूल्य निधि हैं। इनके अतिरिक्त गंगाबाई, महारानी सुन्दर कुंवरिबाई, वृषभान कुंवरि, छत्र कुंवरिबाई तथा चन्द्र सरती आदि का नाम भी कृष्ण-काव्य धारा से जुड़ा है।

रीतिकाल (1700 से 1900 तक) में मुगल बादशाहों का वैभव विलासिता की पराकाष्ठा पर पहुंच गया था। कविता ने भी एक नया मोड़ लिया और वह वीर-रस को त्याग शृंगार-रस की ओर उन्मुख हो गई। इस काल के अधिकांश कवि राज्याश्रित थे। इस समय काव्य में दो प्रवृत्तियां थीं—एक तो आचार्यत्व और दूसरी शृंगारिकता। प्रथम तो नारी मनोवृत्ति के अनुकूल न थी, परन्तु द्वितीय उसके जीवन का अंग थी। रूपमती बेगम, शेख रंगरेजन तथा प्रवीणराय पातुर का योगदान विशेष सराहनीय है। प्रारम्भिक काल से रीतिकाल तक हिन्दी साहित्य में नारी के योगदान के महत्व को अस्वीकार करना उसके प्रति न्याय नहीं होगा। उसके काव्य में अनुभूति की मार्किता और तन्मयता है, उसके व्यक्तिगत जीवन की सुख-दुख की स्थितियां, उसके हृदय को अवश्य प्रभावित करती रही हैं। विरह का रुदन, मिलन की आकुलता, ममता और मंगल-कामना का यही रूप प्रायः सर्वत्र लक्षित होता है।

भारतेंदु-युग में नारी की स्थिति को सुधारने का पुण्य कार्य एक ओर अनेक देश-व्यापी आन्दोलनों के द्वारा हो रहा था तो दूसरी ओर कवि अपनी देशभक्ति की रचनाओं द्वारा स्वतन्त्रता का संचार कर रहे थे। राजरानी बुंदेल बाला, सरस्वती देवी तथा ज्वाला देवी ने खड़ी बोली में काव्य-रचना का अपने कौशल पर परिचय दिया। परन्तु इनके साथ-साथ ओरछा महाराज प्रतापसिंह देव बहादुर की पुत्री राजकुमारी जुगलप्रिया, महाराज मानसिंह की रानी प्रतापकुंवरि बाई, राजा गिरिजाबक्श सिंह की रानी निधि रानी, रत्नकुंवरि बीबी—जिनके राजा शिव प्रसाद सितारे हिंद पौत्र थे, सरस्वती देवी, राम प्रिया, चन्द्रकला बाई आदि राम और कृष्ण भक्ति की परंपरा से जुड़ी रही।

सन् 1915-20 के बीच छायावाद का जन्म एक क्रांति के साथ हुआ। इसमें व्यक्तिवाद की प्रधानता, प्रकृति का मानवीकरण तथा नारी सौंदर्य एवं प्रेम का सूक्ष्म चित्रण था। महादेवी वर्मा, सुमित्रा कुमारी सिन्हा, विद्यावती कोकिल

तथा तारा पांडे इस काल की प्रमुख कवयित्रियां हैं। इसी काल में कुछ प्रगतिवादी कवयित्रियों ने जन्म लिया। जिनके स्वर में ओज और देशभक्ति की भावना निहित थी। सुभद्रा कुमारी चौहान जो छायावाद की सीमांत पर अपनी 'मुकुल', 'सभा के खेल' और 'त्रिधारा' नामक कविता संकलन के पश्चात् 44 वर्ष की आयु में इस संसार से विदा हो गई परन्तु अपना नाम अमर कर गई।

वैसे तो मानव सृष्टि के आरम्भ के साथ कहानी का जन्म माना जाता है। सभी देशों में कहानी के दो रूप मिलते हैं—मौखिक और साहित्यिक। मौखिक कहानियों की जन्मदात्री प्रायः नारी ही रही है। जन्म से बालक के मन की जिज्ञासा एवं कुतूहल की प्रवृत्ति पायी जाती है। मां, दादी और नानी के वात्सल्य आंचल में बालक की जिज्ञासा की सन्तुष्टि होती है। परियों, राजा-रानियों, चन्दा-मामा, तोता-मैना की कहानियों का निर्माण उसने इसीलिये किया, क्योंकि बालक के चरित्र निर्माण और बौद्धिक विकास का दायित्व नारी पर ही होता है। नारी ने जो मौखिक कहानियों के रूप में साहित्य में योगदान दिया वह आज एक साहित्य की धरोहर बन गया है।

1857 की क्रांति के अनन्तर नारी-उत्थान और जागृति का कार्य तेजी से आरम्भ हुआ। ऐसे समय में शताब्दियों पश्चात् नारी ने अपने अन्दर बौद्धिक चेतना और जागृति का अनुभव किया। आर्य समाज के रंगमंच पर कार्य करने वाली अनेक महिलाओं ने उपदेशात्मक एवं प्रचारात्मक साहित्य की रचना की।

सन् 1922-23 में चांद, माधुरी, सरस्वती आदि में अनेक कहानी लेखिकाओं की कहानियां छपी। इस प्रकार स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी कथा-साहित्य में नारी द्वारा अनूदित तथा मौलिक कहानियों के रूप में परिवार तथा समाज में नारी जीवन के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डाला गया। जिन पर गांधीवाद, मार्क्सवाद तथा फ्रॉयड की मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति का प्रभाव स्पष्ट है।

उन्नीसवीं से बीसवीं शताब्दी का इतिहास एक क्रांतिकारी युग का इतिहास है। पाश्चात्य सभ्यता-संस्कृति आदि ने भारतीय जन-जीवन में आमूल परिवर्तन कर दिया था। इसका मूल केन्द्र नारी थी। नारी जागरण की गूंज ने उसे अपना स्वत्व समझने पर बाध्य किया। उसने अपनी काव्य रचनाओं के द्वारा एक ओर देशभक्ति का महामंत्र फूंका और दूसरी ओर उद्बोधन के गीत गाये। राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में उसने सक्रिय सहयोग दिया। नारी जागृति का कार्य सब ओर से हो रहा था। उसमें विद्रोह की भावना प्रबल हो रही थी। गांधी जी के नेतृत्व में आरम्भ असहयोग आन्दोलन में भाग लेने वाली स्त्रियां सम्मुख आने लगीं। सुभद्रा कुमारी चौहान और महादेवी वर्मा के नाम इस सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय हैं। जिन्होंने सामाजिक जागरण के गीत गाये, नारी को उद्बोधन दिया तथा मातृत्व की चिर साध की पूर्ति के लिये वात्सल्य भाव से ओत-प्रोत कविताओं की रचना की।

नारी की साहित्यिक प्रतिभा का विकास उसकी सामाजिक अवस्था पर निर्भर करता है। काव्य के समान कहानी तथा उपन्यास क्षेत्र में भी नारी का ध्यान जीवन की विविधता की ओर गया। उसने राजनीतिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, मनोवैज्ञानिक, उपदेशात्मक, हास्य-व्यंग्य प्रधान एवं पारिवारिक कहानियों की रचना की। परन्तु कौटुंबिक पृष्ठभूमि नारी को सदैव सबसे अधिक प्रिय रही है जिसमें उसे आशातीत सफलता प्राप्त हुई है।

विकास काल में कुछ उपन्यास विशेष महत्व रखते हैं। इनमें उषा देवी मित्रा का 'वचन का मोल'; कंचन लता सब्बरवाल का 'मूक प्रश्न'; लक्ष्मी देवी का 'सती पार्वती'; गिरिजा देवी का कमला कुसुम'; ताराबाई का 'भाग्य चक्र'; जगदम्बा देवी का 'हीरे की अंगूठी'; पूर्ण शशिदेवी का 'रात के बाद'; तेज रानी दीक्षित का 'हृदय का कांटा'; प्रभावती भटनागर का 'विवाह मन्दिर'; मन्नू भण्डारी का 'बन्टी'; कृष्णा सोबती का 'मित्रो मरजानी'; उषा प्रियम्बदा का 'रुकोगी नहीं राधिके'; शिवानी का 'शमशान चंपा' आदि। इनके अतिरिक्त चन्द्र किरण सौनरेक्सा, तेजरानी पाठक, रजनी पनिकर, सत्यवती मल्लिक, रामेश्वरी देवी आदि का नाम भी विशेष उल्लेखनीय है।

ज्यों-ज्यों समाज में स्त्री शिक्षा का प्रसार होता गया त्यों-त्यों नारी की साहित्यिक रुचि भी उत्तरोत्तर विकसित होती गई। श्रीमती सुभद्रा कुमारी चौहान ने काशी में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अट्ठाईसवें अधिवेशन में महिला साहित्य सम्मेलन की अध्यक्षता के पद से कहा था—'अब हमें अपनी मनोभावनाओं को अभिव्यक्ति के लिये पुरुषों की लेखनी की आवश्यकता नहीं रह गई है। स्त्री की स्वभावसिद्ध कोमलता पुरुषों के लिये यदि अप्राप्य नहीं तो दुष्प्राप्य है, ठीक वैसे ही जैसे कि पुरुष सुलभ प्रखर भावनायें स्त्रियों के लिए दुष्प्राप्य हैं।'

और आज हम देखते हैं कि साहित्य की प्रत्येक विधा में अनेक नवोदित लेखिकायें हमारे सम्मुख उभर कर आ रही ह, जिनके नामों का उल्लेख करना यहां संभव नहीं है। उनका योगदान भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। □□□

विविधा :

1. भारतीय स्टेट बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय, जयपुर द्वारा हिन्दी दिवस का आयोजन

भारतीय स्टेट बैंक की ओर से हिन्दी दिवस के अवसर पर दिनांक 14 सितम्बर 83 को खासा कोठी, जयपुर में "भारतीय भाषाओं का सेतु हिन्दी" विषय पर विचार-गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें मुख्य वक्ता के रूप में डा० महीप सिंह, संपादक "संचेतना" के अतिरिक्त डा० पांडुरंग राव, निदेशक (हिन्दी) संघ लोक सेवा आयोग तथा पं० काशीराम, निवृत्त-मान निदेशक, केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो, दिल्ली ने भाग लिया। मंच-संचालक श्री राजेन्द्र बोहरा (कार्यक्रम अधिकारी, आकाशवाणी) ने विषय-प्रवर्तन करते हुए कहा कि निहित स्वार्थों की पूर्ति हेतु भाषा एक मसला बना दिया गया है। भारतीय भाषाओं के बीच सेतु के रूप में हिन्दी सदैव से ही स्वीकार्य रही है। राजेन्द्र बोहरा के इस मत से असहमति व्यक्त करते हुए श्री प्रिय दर्शी ठाकुर ने कहा कि भाषा निश्चय ही आज राष्ट्र के सामने एक समस्या है। इस प्रश्न पर गहन विचार-विमर्श की जरूरत है। उन्होंने हिन्दी को सर्वग्राह्य बनाने के लिये संस्कृत-निष्ठ शब्दावली से परहेज करते हुए इसमें एकरूपता लाने पर बल दिया।

डा० पांडुरंग राव के अनुसार भाषा कोई मसला नहीं है—हिन्दी हमेशा से सम्पर्क भाषा रही है और रहेगी। सम्पूर्ण भारत में जनसम्पर्क की भाषा हिन्दुस्तानी प्रचलित है। देश की एकता और सुदृढ़ता के लिये सम्पर्क भाषा हिन्दी का विकास जरूरी है। उनके विचार से सम्पर्क भाषा के प्रश्न को राजभाषा या राष्ट्रभाषा के प्रश्न के साथ जोड़ना न्याय-संगत नहीं है। उनका सुझाव था कि हिन्दीप्रेम के अतिरेक में केवल नारेबाजी से काम नहीं चल सकता बल्कि इसे समृद्ध बनाने के लिये कारगर कदम उठाने होंगे। पं० काशीराम ने कहा कि हिन्दी को सम्पर्क भाषा के रूप में जन-जन की भाषा बनाने की दिशा में अन्य भारतीय भाषाओं से, यदि आवश्यकता हो तो, अंग्रेजी भाषा से शब्द ग्रहण में संकोच नहीं होना चाहिये। हिन्दी को लेकर अन्य भाषा-भाषियों के मन में उत्पन्न होने वाले सन्देहों का भी निराकरण कर पायेंगे।

मुख्य वक्ता डा० महीप सिंह की दृष्टि में भाषा की समस्या के अस्तित्व को नकारना किसी भी दृष्टि से तर्कसंगत नहीं है। भाषा का मसला एक अत्यन्त उलझाया हुआ और पेचीदा मसला है। ऐसी स्थिति में हमें खुले दिमाग से इस विषय पर विचार-मंथन करना होगा। स्वतन्त्रता-प्राप्ति के साथ ही प्रान्तीय भाषाओं को राजभाषा के रूप में मान्यता मिल जाने से हिन्दी-भाषियों द्वारा हिन्दी को एक-मात्र राजभाषा अथवा राष्ट्रभाषा घोषित किये जाने की मांग के कारण ही समस्या खड़ी हुई है। पंजाब-समस्या के साथ भी भाषा का प्रश्न जुड़ा हुआ है। ऐसी हालत में हमें खुलासा करना होगा कि भारतीय भाषाओं में हिन्दी का स्थान क्या है? दूसरी भाषाओं के साथ इसका सम्बन्ध क्या है? संविधान के अनुसार संघ की राजभाषा के रूप में हिन्दी को अंग्रजी का स्थान ले लेना चाहिये था। उन्होंने खेद व्यक्त करते हुए कहा कि हिन्दी प्रान्तों की जनता ने केवल हिन्दी को ही एकमात्र राजभाषा अथवा राष्ट्रभाषा मानते हुए त्रिभाषा फार्मूला को हृदय से स्वीकार नहीं किया। उन्होंने मातृभाषा के रूप में हिन्दी, दूसरी भाषा के रूप में अंग्रेजी तथा तीसरी भाषा के रूप में अन्य भारतीय भाषाओं में से दक्षिण भारतीय भाषाओं को न लेकर संस्कृत का पठन-पाठन किया। इससे दक्षिण भारतीयों के मन में सन्देहों ने जन्म लिया। ऐसे ही कारणों से आज देश में भाषा एक मसला बनकर रह गई है। उन्होंने स्पष्ट किया कि भाषा जैसे अहम मसले को हल करने की दिशा में सम्पर्क भाषा के रूप में ग्राह्य बनाने के लिये अति-रिक्त सूझ-बूझ का परिचय देना होगा अन्यथा यह मसला राष्ट्रीय एकता के लिये खतरा भी साबित हो सकता है। उन्होंने सुझाव दिया कि सम्पर्क-भाषा हिन्दी के प्रश्न पर उदारवादी रवैया अपनाते हुए हम ईमानदारी से त्रिभाषा फार्मूला को स्वीकार करें।

मुख्य-वक्ता के भाषणोपरान्त खुली चर्चा में प्रहलाद नारायण व्यास ने मातृभाषा के रूप में केवल हिन्दी को स्वीकारने पर बल दिया। राजस्थान सिंधी अकादमी के अध्यक्ष श्री इन्द्रसेन इसरानी ने हिन्दी को सरल बनाने की बात की। इसके अतिरिक्त जगल किशोर चतुर्वेदी, सी० एल० सिंगला तथा सवाईसिंह धमोरा ने भी चर्चा में भाग लिया।

अन्त में भारतीय स्टेट बैंक के मुख्य-क्षेत्रीय प्रबंधक श्री रमेश चन्द्र माथुर ने बैंकिंग-उद्योग में सम्पर्क भाषा हिन्दी के प्रयोग के महत्व पर प्रकाश डाला। उन्होंने गोष्ठी के ज्वलन्त विषय पर सुलझे हुए विचार व्यक्त करने के लिये सुधी विद्वानों के प्रति आभार प्रकट किया तथा श्रोताओं के प्रति धन्यवाद। कार्यक्रम के प्रारम्भ में भारतीय स्टेट बैंक, जयपुर द्वारा प्रकाशित वृत्तपत्र "सेतु" की प्रथम मुद्रित-प्रति का श्री प्रियदर्शी ठाकुर, विशिष्ट सचिव (योजना) राजस्थान सरकार ने विमोचन किया।

डा० जी० एस० बजाज
सहायक निदेशक,
हिन्दी शिक्षण योजना, जयपुर

2. आर्डनेन्स फैक्टरी अम्बाझरी में 'हिन्दी दिवस'

नागपुर 14 सितम्बर, 1983 को आर्डनेन्स फैक्टरी, अम्बाझरी में हिन्दी समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता श्री एम० के० नायर, महाप्रबन्धक जी ने की तथा प्रमुख अतिथि "नव-भारत", नागपुर के साहित्य सम्पादक श्री शिव नारायण द्विवेदी जी थे।

आरम्भ में शाल और श्रीफल से महाप्रबन्धक जी ने श्री द्विवेदी जी का सम्मान किया। महाप्रबन्धक महोदय ने अपने अध्यक्षीय भाषण में राजभाषा नीति स्पष्ट की। श्री द्विवेदी जी ने कर्मचारियों से सरकारी कार्य में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने का आग्रह किया एवं अपने अमूल्य अनुभव व सुझावों से अवगत कराया। श्री बी० बी० वर्मा, उप-महाप्रबन्धक, प्रशासन एवं अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वित समिति ने सबका स्वागत करते हुए हिन्दी के प्रगामी प्रयोग पर अपने विचार व्यक्त किए।

हिन्दी शिक्षण योजना के अन्तर्गत प्रवीण तथा प्राज्ञ परीक्षा में उत्तीर्ण हुए कर्मचारियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए। इसी तरह हिन्दी कार्यशाला में सफल घोषित कर्मचारियों को प्रमाण-पत्र वितरित किए गए।

इसके पश्चात् एक लघु काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें सर्वश्री शशिवर्धन शर्मा, अशोक कुमार सोनी, सलोम दुर्राणी, विनोद कुमार उइके, पुरुषोत्तम भोडेकर, नारायण मौर्य, श्री मोहन मिश्र परदेशी, शालिगराम घाटे, जय प्रकाश शर्मा, श्री राम बाटवे, एन० के० दत्ता, हेनरी दीप, बी० लहिरी, देशमुखकर आदि फैक्टरी कर्मचारियों ने अपनी सरस रचनाएँ पढ़ीं।

उपर्युक्त कार्यक्रम का संचालन श्री अशोक कुमार सोनी प्रभारी/राजभाषा अनुभाग ने किया। अन्त में श्री पी० एम० नायडू, हिन्दी प्राध्यापक ने धन्यवाद प्रस्ताव रखा।

—एन० के० भास्करन

सहायक कर्मशाला प्रबन्धक (प्रशासन)।

3. भारत पैट्रोलियम कार्पोरेशन लि० बम्बई में 'हिन्दी दिवस'

पिछले वर्षों की भांति इस वर्ष भी भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन लि० बम्बई के मुख्यालय में 14 सितम्बर, 1983 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार तथा सचिव, राजभाषा-विभाग गृह मंत्रालय, श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव उक्त समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे। अपने मुख्य अतिथीय भाषण में सचिव महोदय ने भारत पेट्रोलियम में हिन्दी के प्रशंसनीय प्रचार-प्रसार के लिए अध्यक्ष तथा प्रबन्ध निदेशक, श्री यू० एम० किणि की सराहना की। श्रीवास्तव जी ने इस अवसर पर भारत सरकार की राजभाषा नीति को संक्षिप्त जानकारी दी। उन्होंने बताया कि राजभाषा सम्बन्धी सर्वोच्च नीति निर्धारण सम्बन्धी समिति की अध्यक्ष देश की प्रधान मन्त्री हैं और उक्त समिति के निदेशानुसार प्रत्येक वर्ष हम राजभाषा विभाग की ओर से देश के विभिन्न राज्यों के हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए वार्षिक कार्यक्रम तैयार करते हैं। उन्होंने आग्रह किया कि उक्त कार्यक्रम को यथासम्भव भारत पेट्रोलियम में भी लागू किया जाना चाहिए। सचिव महोदय ने कार्पोरेशन के कर्मचारियों से हिन्दी का प्रशिक्षण प्राप्त करने तथा आफिस का रोज का अपना काम सरल तथा सुबोध हिन्दी में करने का प्रयत्न करने का अनुरोध किया।

हमारे अध्यक्ष प्रबन्धक तथा प्रबन्ध निदेशक, श्री यू० एम० किणि ने हिन्दी दिवस के इस समारोह का उद्घाटन किया तथा हिन्दी परीक्षाओं में पास तथा विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं में सफल कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किया। अपने संक्षिप्त उद्घाटन भाषण में अध्यक्ष तथा प्रबन्ध निदेशक महोदय ने सर्वप्रथम भारत सरकार के सचिव, श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव के प्रति आभार व्यक्त किया जिन्होंने मुख्य अतिथि के रूप में समारोह में भाग लेने का हमारा आमन्त्रण स्वीकार किया तथा आशा प्रकट की कि इसी प्रकार हमें उनका सहयोग तथा मार्गदर्शन प्राप्त होता रहेगा। कर्मचारियों को सम्बोधित करते हुए श्री किणि ने उनको अपने हिन्दी ज्ञान को बढ़ाने रहने तथा कार्यालय के कामों में उसका अधिकाधिक उपयोग करने की सलाह दी।

अन्त में कुमारी गीता विक्रम नम्बूदरी ने सचिव श्रीवास्तव जी तथा उप निदेशिका, श्रीमती एन० जे० राव को समारोह में पधारने, श्री यू० एम० किणि अध्यक्ष तथा प्रबन्ध निदेशक को उद्घाटन करने तथा श्री आर० डी० शुक्ला, हिन्दी अधिकारी, सी० ओ० को समारोह आयोजित करने तथा सभी उपस्थित विशिष्ट अतिथियों तथा सहयोगियों को समारोह में भाग लेने के लिए धन्यवाद दिया।

उक्त संक्षिप्त तथा सादगीपूर्ण समारोह की अध्यक्षता सी० ओ० राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष तथा डिप्टी जी० एम० (स्टाफ), श्री बी० यू० राणा ने की तथा विशिष्ट अतिथि के रूप में उपस्थित व्यक्तियों में डायरेक्टर (फाइनेंस) श्री आर० के० गाजरी, डिप्टी जी० एम० (एल० पी० जी०) श्री पी० एल० मेहता, डिप्टी जी० एम० (ई० डी० पी०) श्री डी० आर० कोहली, डिप्टी जी० एम०

(सेल्स), श्री ए० दास इफीसिएंसी रिसर्च मैनेजर, श्री जे० पी० कोहली, फाइनेन्शियल एकाऊन्टेंट श्री ओ० पी० माथुर, पब्लिक रिलेशन्स मैनेजर, श्रीमती आर० एफ० वजीफदार आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

—श्याम सुन्दर शर्मा
हिन्दी अधिकारी,
बम्बई।

4. बैंक आफ बड़ौदा, माण्डवी (बड़ौदा) में 'हिन्दी दिवस'

बैंक आफ बड़ौदा ने 14 सितम्बर, 1983 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन जय हिन्दी कालेज हाल, चर्चगेट बम्बई–20 में किया। इसकी अध्यक्षता श्री वाई० वी० शिवरामकृष्णम्मा, अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक, बैंक आफ बड़ौदा ने की।

इस अवसर पर हिन्दी सुलेख और हस्ताक्षर प्रदर्शनी तथा एक विचार–गोष्ठी का भी आयोजन किया गया, जिसमें डा० महावीर अधिकारी भूतपूर्व सम्पादक, नव भारत टाइम्स, डा० सी० एल० प्रभात, अध्यक्ष हिन्दी विभाग, बम्बई विश्व–विद्यालय, श्री नारायण दत्त, प्रभारी, हिन्दी फीचर सर्विस, पी० टी० आर्ध और श्रीमती सरोज चन्दोला सहायक के० हि० निर्देशिका, बम्बई दूरदर्शन आदि ने भाग लिया।

अन्त में श्रीमती कामेश्वरी शिवरामकृष्णम्मा ने पुरस्कार वितरित किए।

5. महालेखाकार, आंध्र प्रदेश के हैदराबाद कार्यालय में 'हिन्दी दिवस'

महा लेखाकार आंध्र प्रदेश (प्रथम तथा द्वितीय) के कार्यालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में दिनांक 14 सितम्बर, 1983 को अपराह्न में हिन्दी दिवस समारोह सम्पन्न हुआ।

पद्मश्री डा० सी० नारायण रेड्डी जो आंध्र प्रदेश राजभाषा आयोग के अध्यक्ष तथा तेलुगू भाषा के जाने–माने कवि हैं, प्रमुख अतिथि थे।

समारोह की अध्यक्षता श्री ए० वाई० गोविन्दराजन, आई० ए० ए० एस०, (सदस्य, लेखा परीक्षा बोर्ड एवं पदेन निदेशक वाणिज्यिक लेखा परीक्षा, हैदराबाद) ने की।

कार्यक्रम का श्रीगणेश प्रार्थना से हुआ जो कि श्री अवध–नाथ राय लेखा परीक्षक ने प्रस्तुत की। प्रार्थना के बाद श्री नरहर देव, लेखा परीक्षक (हिन्दी अनुभाग) ने सभी का स्वागत किया तथा मुख्य अतिथि डा० "सीनारे" का परिचय दिया और कार्यालय में सम्पन्न होने वाले हिन्दी कार्यकलापों का विवरण प्रस्तुत किया। कार्यालय के सदस्यों द्वारा हिन्दी में ली जा रही रुचि की प्रशंसा करते हुए उन्होंने कहा "प्रशासन तथा राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा किए जा रहे प्रयासों के अनुकूल काफी लोग हिन्दी भाषा में रुचि ले रहे हैं इसका प्रमाण यह है कि आज बहुत बड़ी संख्या में अपनी-अपनी रचनाएं लेकर कविगण इस हिन्दी काव्य गोष्ठी में भाग ले रहे हैं"। ग्यारह सदस्यों ने विभिन्न विषयों पर अपनी रचनाएं प्रस्तुत कीं।

मुख्य अतिथि महोदय के भाषण का अत्यधिक आकर्षक पहलू था हिन्दी, तेलुगू और उर्दू का मनोहारी सम्मिश्रण तथा हठपूर्वक अंग्रेजी का पल्लू पकड़े रहने वाले भारतीयों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण। व्यंजना भाव से उन्होंने कहा "भारतीय व्यक्ति का मन अंग्रेजी भाषा के परिप्रेक्ष्य में उस पिता के समान प्रतीत होता है जो कन्या की बिदाई सह नहीं सकता। भारत पर शासन करने वाले इसे गुलाम बनाए रखने वाले (दामाद) की तो इन्होंने छुट्टी कर दी पर अंग्रेजी को अंग्रेज के साथ भेजने के बजाय अपने यहां रखकर उसका पोषण कर रहे हैं।"

मुख्य अतिथि के भाषण के बाद अध्यक्ष महोदय ने कविता प्रतियोगिता का निर्णय घोषित किया।

महालेखाकार महोदय ने विविध प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए। इस बार सम्पन्न प्रतियोगिताओं की विशेषता यह रही कि "घ" वर्ग कर्मचारी से लेकर लेखाअधिकारी तक सभी संवर्गों के कर्मचारियों ने बड़े उत्साह के साथ तथा काफी बड़ी संख्या में इन प्रतियोगिताओं में भाग लिया।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री ए० वाई० गोविन्दराजन जी ने कहा कि "लगभग सभी भारतीय भाषाओं का स्रोत संस्कृत रहने के कारण तथा जो भाषाएं संस्कृत प्रधान नहीं हैं वहां भी संस्कृत का वातावरण—पढ़ाई आदि में रहने के कारण हर व्यक्ति तीन-चार भाषाएं तो आसानी से सीख सकता है।"

अध्यक्षीय भाषण के पश्चात् श्रीमती रमामुरलि आई० ए० ए० एस० वरिष्ठ उप महालेखाकार (प्रशासन) द्वारा धन्यवाद समर्पण किया गया और कार्यक्रम का समापन हुआ।

—श्रीमती रमामुरलि
आई० ए० ए० एस०,
वरिष्ठ उप महालेखाकार,
प्रशासन एवं राजभाषा अधिकारी।

6. हिन्दी भवन, जयपुर में 'हिन्दी दिवस' समारोह

राजस्थान हिन्दी विधि प्रतिष्ठान तथा अन्य हिन्दी सेवी संस्थाओं के संयुक्त तत्वावधान में "हिन्दी भवन" जयपुर में हिन्दी दिवस समारोह द्वि-दिवसीय (13 व 14–9–83) कार्यक्रम के रूप में सम्पन्न हुआ।

13 सितम्बर को श्री पूनम चन्द विश्नोई, राजस्थान विधान सभा, अध्यक्ष के सानिध्य में श्रीमती कमला, भाषा एवं शिक्षा मंत्री के कर कमलों द्वारा सायं 6 बजे "राजभाषा प्रदर्शनी" के उद्घाटन के साथ ही हिन्दी दिवस समारोह

कार्यक्रमों का शुभारम्भ हुआ । भाषा विभाग, राजस्थान, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी राजस्थान, प्रकाशन तथा पीपल्स पब्लिकेशन आदि संस्थाओं के ग्रन्थों की एक प्रदर्शनी "राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण" तथा प्रकाशनों की एक लघु झांकी थी ।

जयपुर में हिन्दी दिवस के अवसर पर आयोजित समारोह में मंच पर बांए से राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायमूर्ति श्री सुरेन्द्रनाथ भार्गव, न्यायमूर्ति श्री गुमानमल लोढ़ा, श्री पूनमचन्द विश्नोई, राजस्थान विधान सभाध्यक्ष, श्रीमती कमला, शिक्षा एवं भाषा मंत्री राजस्थान, डा० काशीनाथ शास्त्री, निदेशक भाषा विभाग और श्री रमेश चन्द्र माथुर, मुख्य क्षेत्रीय प्रबन्धक, स्टेट बैंक.

राजभाषा प्रदर्शनी के उद्घाटन के पश्चात् "राजभाषा के आयाम" विषयक एक उच्च स्तरीय विचार गोष्ठी भाषा मंत्री श्रीमती कमला की अध्यक्षता में आयोजित की गई । इस गोष्ठी में विधि, न्याय, शिक्षा, विज्ञान, प्रशासन बैंकिंग एवं अन्य क्षेत्रों में हिन्दी के प्रयोग एवं उपलब्धियों के विविध आयामों पर सम्बन्धित विषयों के प्रतिनिधि वक्ताओं ने अपने विचार रखे । इस गोष्ठी में न्यायमूर्ति श्री गुमानमल लोढ़ा, राजस्थान उच्च न्यायालय (न्याय क्षेत्र), न्यायमूर्ति श्री सुरेन्द्र नाथ भार्गव, राजस्थान उच्च न्यायालय (विधि क्षेत्र), श्री मीठा लाल मेहता, निदेशक, श्री कृष्ण कुमार भटनागर, शिक्षा एवं भाषा सचिव (प्रशासन) श्री रमेश चन्द्र माथुर, मुख्य क्षेत्रीय प्रबन्धक, भारतीय स्टेट बैंक, श्री विष्णु दत्त शर्मा एवं श्री आत्मा राम शर्मा, भाषा अधिकारी, आदि वक्ताओं ने विचार प्रस्तुत किए ।

दिनांक 14-9-83 को "हिन्दी दिवस" समारोह "भारतीय भाषाओं के राष्ट्रीय एकता के स्वर" विषयक संगोष्ठी एवं कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया ।

इस संगोष्ठी में केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ के निदेशक श्री रुद्रदेव त्रिपाठी संघ लोक सेवा आयोग के निदेशक डा० पांडु-रंग राव, हिन्दी जगत के प्रख्यात कलाकार तथा संचेतना पत्रिका के सम्पादक डा० महीपाल सिंह एवं केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के भूतपूर्व निदेशक एवं भाषाशास्त्री पं० काशीराम शर्मा आदि वक्ताओं ने भाग लिया । इस संगोष्ठी की अध्यक्षता श्री बृज सुन्दर शर्मा, वित्त मंत्री, राजस्थान तथा मुख्य अतिथि थे राजस्थान के राजस्व मंत्री श्री हीरा लाल देवपुरा ।

श्री नाथूलाल जैन, महाधिवक्ता, अध्यक्ष राजस्थान विधि हिन्दी प्रतिष्ठान, श्री कलानाथ शास्त्री, निदेशक, भाषा विभाग तथा डा० स्वर्णलता प्रांतीय संयोजक सिन्ध राष्ट्रभाषा प्रचार समिति ने अपनी-अपनी संस्थाओं की ओर से माननीय मंत्रीगणों तथा संगोष्ठी के मनीषी वक्ताओं का माल्यार्पण कर स्वागत किया। भाषा विभाग के निदेशक श्री कलानाथ शास्त्री ने उपस्थित वक्ताओं का परिचय देते हुए साहित्यिक भाषा पर प्रकाश डाला ।

संगोष्ठी के प्रथम वक्ता श्री रुद्रदेव त्रिपाठी निदेशक, संस्कृत विद्यापीठ ने अपने वक्तव्य में कहा कि संस्कृत साहित्य से राष्ट्रीय एकता के स्वर वैदिक काल से आज तक हमेशा मुखरित होते रहे हैं । इनके बाद विद्वान वक्ता दक्षिण के तेलुगु भाषी डा० पांडुरंग राव, निदेशक, संघ लोक सेवा आयोग ने अपने विचार रखते हुए बताया कि भाव व भाषा की दृष्टि से तेलुगु भाषा हिन्दी भाषा के बहुत करीब है । आपने कहा कि भावात्मक एकता के लिए यह आवश्यक है कि त्यागराज जैसे दक्षिण के कवियों के काव्यों को भी उसी स्नेह से हिन्दी क्षेत्रों में ग्रहण किया जाना चाहिए ।

डा० महीप सिंह ने गुरु ग्रन्थ साहिब के कई मार्मिक स्थलों का चित्रण कर यह बताया कि पंजाब के सन्तों ने पूर्व में सदा संकीर्णता से परे हटकर हमेशा पंजाब के दर्द के माध्यम से पूरे राष्ट्र व भारत के दर्द को महसूस किया ।

संगोष्ठी के अन्तिम वक्ता के रूप में पं० काशीराम शर्मा ने आर्य व द्रविड़ भाषाओं का विगत इतिहास बताते हुए कहा कि दक्षिण की भाषाएं वर्ण-शब्द व वाक्य तथा व्याकरण की दृष्टि से हिन्दी के अधिक निकट हैं ।

अपने अध्यक्षीय भाषण में राजस्थान के वित्त मंत्री श्री बृज सुन्दर शर्मा ने कहा कि स्वतन्त्रता के बाद से हिन्दी का विकास बहुत तेजी से हो रहा है तथा हिन्दी के उन्नत भविष्य के बारे में कोई सन्देह की गुंजाइश नहीं है ।

मुख्य अतिथि के पद से बोलते हुए श्री हीरा लाल देवपुरा राजस्व मंत्री ने कहा कि हिन्दी को अधिक व्यापक बनाने के लिए प्रादेशिक भाषा के शब्दों को ग्रहण किया जाना चाहिए ।

काव्य गोष्ठी का आयोजन

भारतीय साहित्य में राष्ट्रीयता एकता के स्वर संगोष्ठी के तुरन्त बाद में रात्रि में एक काव्य गोष्ठी का आयोजन किया गया । इसमें डा० हरिराम आचार्य, श्री श्रीकान्त मंजुल

श्री मेघराज मुकुल, श्रीकन्याण सिंह राजावत, श्री राजेश रेड्डी, श्री राजेन्द्र वोहरा, श्री शंकर निराश, श्री विश्वामित्र दाधीच, श्री वारहट, श्री प्रह्लाद व्यास, श्री निर्मल तथा श्री वेंकट बिहारी पागल जैसे जयपुर एवं अखिल भारतीय स्तर के लब्धप्रतिष्ठित कवियों ने काव्य पाठ किया।

इस संगोष्ठी का संचालन डा० हरिराम आचार्य ने किया।

—कलानाथ शास्त्री
निदेशक, भाषा विभाग,
राजस्थान, जयपुर।

7. भारतीय खनिज व धातु व्यापार निगम में 'हिन्दी दिवस' समारोह

भारतीय खनिज व धातु व्यापार निगम में हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में 7 सितम्बर, 1983 से 24 सितम्बर, 1983, तक हिन्दी सप्ताह मनाया गया। दिनांक 7, 8 व 9 सितम्बर को मुख्यालय तथा क्षेत्रीय कार्यालयों के हिन्दी प्रबन्धकों का सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें मुख्यालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों ने भी भाग लिया। सम्मेलन के तीनों दिन हिन्दी के वरिष्ठ साहित्यकारों व पत्रकारों को आमन्त्रित किया गया था। बैठक में उपस्थिति इस प्रकार थी :—

महाप्रबन्धक	श्री प्रेम किशोर गुप्त
महाप्रबन्धक	श्री प्रह्लाद भार्गव
मुख्य प्रबन्धक	श्री सुरेन्द्र तिवारी
कार्यालय प्रबन्धक (कलकत्ता)	श्री जितेन्द्र चतुर्वेदी
कार्यालय प्रबन्धक (बम्बई)	श्रीमती निर्मला त्रिपाठी
कार्यालय प्रबन्धक (विशाखापत्तनम)	श्री मुकेश चावला
कार्यालय प्रबन्धक (गोवा)	श्री ज्यूजिन पीटर्स
कार्यालय प्रबन्धक (कटक)	श्री सतीश चतुर्वेदी
कार्यालय प्रबन्धक (दिल्ली)	श्रीमती कमला महाजन
कार्यालय प्रबन्धक (मुख्यालय)	श्री नरेन्द्र चतुर्वेदी, एवं
सहायक प्रभागीय प्रबन्धक (हिन्दी) (मुख्यालय)	सुनीता बुद्धिराजा

निगम ने मुख्य आंतरिक लेखा परीक्षक श्री सीताराम भारद्वाज राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य नहीं हैं लेकिन उनके हिन्दी प्रेम से सारा कार्यालय परिचित है। हमने श्री भारद्वाज को राजभाषा सम्मेलन में भाग लेने के लिये विशेष रूप से आमंत्रित किया था।

पहले दिन के सम्मेलन की अध्यक्षता श्री प्रेम किशोर गुप्त ने की। दूसरे और तीसरे दिन के कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री सीताराम भारद्वाज ने की।

पहले दिन के मुख्य अतिथि हिन्दी के वरिष्ठ कवि श्री गिरिजा कुमार माथुर थे। दूसरे दिन "दिनमान" के सम्पादक श्री कन्हैया लाल नन्दन और तीसरे दिन सुप्रसिद्ध कवि श्री रमानाथ अवस्थी ने मुख्य अतिथि का पद ग्रहण किया।

बैठक में सभी कार्यालयों के प्रतिनिधियों ने अपने कार्यालय में राजभाषा सम्बन्धी प्रगति पर विवरण दिया। उन्होंने राजभाषा अधिनियम के अनुपालन में आने वाली कठिनाइयों के सम्बन्ध में बताया जिन पर विचार करके उनके समाधान का प्रयास किया गया।

यह निश्चय किया गया कि सभी क्षेत्रीय कार्यालयों में कम से कम वर्ष में एक बार राजभाषा संगोष्ठी तथा कार्यशाला का आयोजन किया जायेगा।

यह भी निश्चय किया गया कि निगम के सभी क्षेत्रीय कार्यालयों एवं मुख्यालयों में हिन्दी 'प्रेस्टो' साइनबोर्ड बनवाये जायेंगे जिन पर प्रति माह कुछ अंग्रेजी शब्दों को अनुवाद के साथ लगाया जायेगा जिससे कर्मचारियों की हिन्दी भाषा में रुचि बढ़े और उन्हें यह भाषा समझने में सुविधा हो।

बैठक में निश्चय किया गया कि प्रत्येक प्रभाग के प्रमुख को भी राजभाषा कार्यान्वयन समिति का सदस्य बनाया जाये जिससे उन सभी प्रभागों में राजभाषा अधिनियम के अनुपालन को सुनिश्चित किया जा सके। वे सभी सदस्य राजभाषा अधिनियम के अनुरूप अपने प्रभाग में कार्यवाही के निर्देश देंगे जिससे प्रत्येक प्रभाग में हिन्दी को प्रोत्साहन दिया जा सके और राजभाषा की संभावनाएं खोजी जा सकें।

सम्मेलन का आकर्षण था तीनों दिन मुख्य अतिथियों का वक्तव्य और क्रमशः पहले व तीसरे दिन श्री गिरिजा कुमार माथुर व श्री रमानाथ अवस्थी का काव्य पाठ।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री प्रेम किशोर गुप्ता ने कहा कि हिन्दी में अन्य भाषाओं के शब्दों को आत्मसात करने का गुण होना चाहिये। यदि अन्य भाषाओं के प्रचलित शब्द हिन्दी में सम्मिलित कर लिये जायें तो उसके प्रचार और प्रसार में सुविधा होगी। अन्त में अध्यक्ष ने मुख्य अतिथि श्री गिरिजा कुमार के प्रति आभार व्यक्त किया।

दूसरे दिन अपने भाषण में दिनमान के संपादक श्री कन्हैया लाल नन्दन ने कहा कि हिन्दी के प्रचार में असली रुकावट है अंग्रेजी प्रेम है। उन्होंने सुझाव दिया कि निगम के क्षेत्रीय कार्यालयों के पुस्तकालयों में हिन्दी के पत्र-पत्रिकाओं की संख्या बढ़ा देनी चाहिये। हिन्दी के लेखकों को आमंत्रित करना चाहिये और साहित्यिक प्रतियोगिताएं करवानी चाहियें।

अध्यक्ष पद से बोलते हुए श्री सीता राम भारद्वाज ने मुख्य अतिथि के वक्तव्य से सहमति व्यक्त की और कहा कि निगम में हिन्दी का प्रचार करने का बीड़ा यहां के वरिष्ठ अधिकारियों को उठाना होगा। उन्हें चाहिये कि वे अपने प्रभागों में कर्मचारियों को अधिक से अधिक कार्य हिन्दी में करने के लिये प्रोत्साहित करें तथा जब वे क्षेत्रीय कार्यालयों

में दौरे पर जायें तब वहां भी कर्मचारियों के मन में हिन्दी के प्रति सद्भाव उत्पन्न करने का प्रयास करें।

समारोह के तीसरे दिन मुख्य अतिथि श्री रमानाथ अवस्थी ने अपने भाषण में कहा कि इस देश की भाषा तभी पनप सकती है जब पहले हम अपने मन से स्वयं को इस देश का मनुष्य स्वीकार करें। भाषा को ऊपर से थोपा नहीं जा सकता बल्कि सद्भाव से उसे प्रचारित किया जा सकता है।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री सीता राम भारद्वाज ने अवस्थी जी का धन्यवाद किया और कहा कि वे निगम में हिन्दी के प्रचार और प्रसार का पूरा-पूरा प्रयास करेंगे।

राजभाषा सम्मेलन का समापन दिनांक 14 सितम्बर, 1983 को हिन्दी दिवस समारोह के साथ हुआ। निगम के निदेशक श्री असीम चन्द्र बोस ने उन कर्मचारियों एवं अधिकारियों को प्रमाणपत्र प्रदान किये जिन्होंने गृह मंत्रालय द्वारा आयोजित हिन्दी की परीक्षाओं में उत्तीर्णांक प्राप्त किये हैं।

—सुनीता बुद्धिराजा,
सहायक प्रभागीय प्रबन्धक
भारतीय खनिज व धातु व्यापार निगम लिमिटेड
नई दिल्ली—110002

बापू वाणी

आज की पहली और सबसे बड़ी समाज सेवा यह है कि हम अपनी देशी भाषाओं की ओर मुड़ें और हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। हमें अपनी सभी प्रादेशिक कार्रवाइयां अपनी-अपनी भाषाओं में चलानी चाहिए तथा हमारी राष्ट्रीय कार्रवाइयों की भाषा हिन्दी होनी चाहिए। जब तक हमारे स्कूल और कालेज विभिन्न देशी भाषाओं में शिक्षा देना आरम्भ नहीं करते, तब तक हमें आराम लेने का अधिकार नहीं है।

●

मैं अपने देश के बच्चों के लिए जरूरी नहीं समझता कि वे अपनी बुद्धि के विकास के लिए एक विदेशी भाषा का बोझ अपने सिर ढोएं और अपनी उगती हुई शक्तियों का ह्रास करें। आज इस अस्वाभाविक परिस्थिति का निर्माण करने वालों को जरूर गुनाहगार मानता हूं। दुनिया में और कहीं ऐसा नहीं होता, इसके कारण देश को जो नुकसान हुआ है उसकी तो हम कल्पना तक नहीं कर सकते, क्योंकि हम खुद उस सर्वनाश से घिरे हुए हैं। मैं उसकी भयंकरता का अन्दाजा लगा सकता हूं, क्योंकि मैं निरन्तर करोड़ों मूक, दलित और पीड़ित लोगों के सम्पर्क में आता रहता हूं।

विनोबा वाणी

मैंने हिन्दी का सहारा न लिया होता तो कश्मीर से कन्याकुमारी और असम से केरल के गांव-गांव में जाकर मैं भूदान-ग्राम दान का क्रान्तिपूर्ण संदेश जनता तक न पहुंचा सकता। यदि मैं मराठी भाषा का सहारा लेता तो महाराष्ट्र से बाहर और कहीं काम न बनता। इसी तरह अंग्रेजी भाषा लेकर चलता तो कुछ प्रान्तों में काम चलता, परन्तु गांव-गांव में जाकर क्रान्ति की बात अंग्रेजी द्वारा नहीं हो सकती थी। इसलिए मैं कहता हूं कि हिन्दी भाषा का मुझ पर बहुत बड़ा उपकार है, इसने मेरी बहुत बड़ी सेवा की है।

प्रत्येक प्रांतीय भाषा का अपना-अपना स्थान है। मैंने अनेक बार कहा है कि जिस प्रकार मनुष्य को देखने के लिए दो आंखों की आवश्यकता होती है, उसी तरह राष्ट्र के लिए दो भाषाओं, प्रान्तीय भाषा और राष्ट्र भाषा की आवश्यकता होती है। इसलिए हम लोगों ने दो भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य माना है। भगवान शंकर का एक तीसरा नेत्र था जिसे ज्ञान-नेत्र कहते हैं। इसी तरह हम लोगों को भी तीसरे नेत्र की जरूरत अनुभव हो तो संस्कृत भाषा का भी अध्ययन लाभकारी सिद्ध होगा और उस समय अंग्रेजी भाषा चश्मे के रूप में काम आएगी। चश्मे की जरूरत सबको नहीं पड़ती। हां कभी कुछ लोगों को उसकी जरूरत पड़ती है। बस इतना ही अंग्रेजी का स्थान है। इससे अधिक नहीं। इसलिए मैं चाहता हूं कि हिन्दी का प्रचार अच्छी तरह व्यापक रूप में होना चाहिए।

राजभाषा हिन्दी के बढ़ते चरण

1. पंजाब नेशनल बैंक, गुजरात में हिन्दी की प्रगति

व्यक्ति को अभिव्यक्त करने का माध्यम होता है वाणी या फिर भाषा। भाषा के द्वारा व्यक्ति के व्यक्तित्व में निखार आता है। जिस प्रकार व्यक्ति का व्यक्तित्व उसकी अभिव्यक्ति के माध्यम, तौर तरीके आदि पर निर्भर करता है, उसी प्रकार राष्ट्र का व्यक्तित्व उसके चिन्तन, संस्कृति और भाषा साहित्य से निखरता है। जो राष्ट्र सशक्त है, उसकी वाणी भी सशक्त और प्राञ्जल होती है। स्वतंत्र राष्ट्र की भाषा भी बिना किसी पूर्वाग्रह के स्वतंत्र और अधिक लोगों द्वारा बोली समझी और लिखी जाने वाली भाषा ही होनी चाहिए। इस प्रकार के विचार स्वतंत्रता संघर्ष से पूर्व ही राष्ट्रीय नेताओं के मन में पनप चुके थे और इसी भाव भूमि पर बोए गए बीज आगे चलकर अंकुरित हुए और संविधान के अनुच्छेद 343 में यह व्यवस्था की गई कि "संघ की राजभाषा देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी होगी। यह व्यवस्था तो संविधान के लागू होने के समय से ही थी किन्तु इसे वास्तविक धरातल मिला 26 जनवरी, 1965 से। इस बीच हिन्दी कई संक्रमणों से गुजरी और 1965 तक हिन्दी का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा विनिर्दिष्ट कार्यों के लिए ही किया जाता रहा। सन् 1967 में संशोधित राजभाषा अधिनियम पारित हुआ और इससे हिन्दी का प्रचार होना शुरू हुआ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के दो दशक बीत जाने पर सरकार ने बैंकों के कार्यों की समीक्षा की और यह महसूस किया गया कि, बैंकों की सेवा का लाभ दूर-दराज के गांवों में बसे उन लोगों को भी मिलना चाहिए, जिन्होंने बैंक का नाम सुना ही नहीं था। सरकार चाहती थी बैंकों का काम गांवों तक बढ़े और देश के गरीब किसानों को, उसकी जमीन का पूरा-पूरा लाभ मिले। इस योजना को कारगर करने के लिए 1969 में एक ऐतिहासिक निर्णय हुआ बैंकों के 'राष्ट्रीयकरण' का। इस दिन से बैंकिंग, वर्ग बैंकिंग (क्लास बैंकिंग) से जन-सामान्य (मास बैंकिंग) की बैंकिंग की ओर बढ़ने लगी।

भारतीय बैंकिंग व्यवस्था में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ किन्तु इस परिवर्तन का तब तक पूरा-पूरा असर नहीं होगा, जब तक इसका कामकाज जन-सामान्य की भाषा में न हो। इस तथ्य को स्वीकार कर ही भारत सरकार ने बैंकों को राजभाषा अधिनियम की परिधि में लेकर यह सुनिश्चित कर दिया कि बैंकिंग को जनभाषा में काम करना चाहिए।

राजभाषा अधिनियम की व्यवस्थाओं के अनुसार राज्यों का जो वर्गीकरण किया गया है, उसके अनुसार गुजरात प्रान्त 'ख' क्षेत्र में आता है। इसलिए यहां के लिए राजभाषा अधिनियम के कुछ उपबन्धों में ढील दी गई है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि सरकार की राजभाषा नीति के अनुपालन में शिथिलता हो। जो व्यवस्थाएं 'ख' क्षेत्र के लिए इस अधिनियम में बनाई हैं, उसके अनुपालन का अथक प्रयास किया जा रहा है। इसी उद्देश्य से इस क्षेत्र में हिन्दी कक्ष की विधित् स्थापना 18 जून, 1978 को हुई थी। इस तीन वर्षों की संक्षिप्त अवधि में राजभाषा अधिनियम की व्यवस्थाओं के लक्ष्य प्राप्त करने में हम कितना आगे बढ़ पाए हैं। इसका संक्षिप्त वर्णन निम्नवत् है।

परिपत्रों का द्विभाषीकरण :—इस क्षेत्र में राजभाषा कक्ष स्थापित हो जाने के बाद कक्ष ने सबसे पहले क्षेत्रीय कार्यालय से जारी किए जाने वाले परिपत्रों को द्विभाषी रूप में जारी करने का कार्य हाथ में लिया। प्रारंभ में कोई हिन्दी टाइपिस्ट न होने के कारण हिन्दी में अनूदित परिपत्र हाथ से लिखा कर भेजे जाने लगे। जब हाथ से लिखे परिपत्र शाखाओं को जाने लगे तो लोगों को आश्चर्य हुआ। किन्तु कुछ ही समय बाद हिन्दी टाइपिंग की वैकल्पिक व्यवस्था कर ली गई, जिससे परिपत्र साथ-साथ तो नहीं पर कुछ समय के अन्तराल से हिन्दी में जाने लगे। दिसम्बर, 78 में टाइपिस्ट की व्यवस्था होने के बाद से परिपत्र पूर्ण रूप से हिन्दी अंग्रेजी में एक साथ जारी किए जाने लगे हैं।

बैंक परिसर पर साईन बोर्ड :—इसी दौरान शाखाओं को हिदायत और सूचना जारी कर दी गई कि शाखाओं पर लगने वाले बैंक के साइन बोर्ड राजभाषा नीति के अनुसार त्रिभाषी करवा लिए जाएं। इस हिदायत पर अमल शुरू हुआ और आज क्षेत्र में ऐसी कोई भी शाखा नहीं है, जिस पर बैंक का बोर्ड राजभाषा नीति के अनुरूप न हो।

रबड़ की मोहरों का द्विभाषीकरण :—प्रारम्भिक तौर पर कर्मचारियों व अधिकारियों का हिन्दी के प्रति लगाव हो और उन्हें कम से कम कार्य करना पड़े इस बात को ध्यान में रखकर शाखाओं पर काम में आने वाली सभी मोहरों का अनुवाद करके शाखाओं को भेज कर सभी मोहरों को द्विभाषी बनाने को कहा गया। पहले तो इस पर अमल नहीं हो पाया, किन्तु धीरे-धीरे इस ओर प्रगति हुई और सभी शाखाओं पर काम में आने वाली मोहरें द्विभाषी रूप में बनवा ली गईं तथा उनका उपयोग शुरू हो गया।

जनता की सूचना के लिए काउन्टर बोर्ड :—शाखाओं पर जनता के लिए सूचना देने के लिए जो काउन्टर बोर्ड बनाये

गए हैं, सभी राजभाषा नीति के अनुसार ही बनाए गए हैं। इस दिशा में शाखाओं ने अच्छी प्रगति की है। कर्मचारियों के नामपट्ट भी द्विभाषी रूप में बनवाए जा चुके हैं।

हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर हिन्दी में देना :—

गुजरात क्षेत्र की 38 शाखाओं द्वारा हिन्दी में लिखे पत्रों के उत्तर 95 प्रतिशत से अधिक हिन्दी में दिए जाते ह, जबकि शेष शाखाओं के इस दिशा में निरन्तर प्रयास जारी हैं।

मूल रूप से हिन्दी पत्र लिखना :—

गुजरात क्षेत्र की शाखाओं में मार्गदर्शन हेतु पत्रों के लगभग 50 नमूने भेजे गए तथा पत्रों में प्रयुक्त वाक्यांशों को भी हिन्दी अनुवाद के साथ भेजा गया, जिसके उत्साहजनक परिणाम निकले हैं। इसके साथ ही साथ अधिकारियों/कर्मचारियों को इस दिशा में प्रेरित करने हेतु छोटे-छोटे पत्र, जैसे अग्रप्रेषण, टी० ए० बिल ड्राफ्ट, टिप्पणियों से संबंधित पत्र-व्यवहार करने को कहा गया।

वेतन बिल या हाजिरी रजिस्टर में हिन्दी का प्रयोग :—

दैनिक काम-काज में हिन्दी का प्रयोग हो इस हेतु शाखाओं को हिदायत दी गई थी कि वेतन बिलों और हाजिरी रजिस्टरों में नाम हिन्दी में लिखे जाएं। शाखाओं ने संबंधित कार्य हिन्दी में शुरू कर दिया है।

ड्राफ्ट हिन्दी में लिखना :—

क्षेत्र की शाखाओं से यह अपेक्षा की गई थी कि हिन्दी भाषी राज्यों गुजरात व महाराष्ट्र को भेजे जाने वाले ड्राफ्टों में हिन्दी का प्रयोग किया जाए। इस दिशा में पहले बड़ी बड़ी शाखाओं ने काम शुरू किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि गुजरात में फैले उत्तरी क्षेत्र के व्यवसायी बड़े प्रभावित हुए और वे स्वयं ही अब तो ड्राफ्ट आदि से संबंधित फार्म स्वयं ही हिन्दी में भर कर देने लगे हैं। अब शहरी क्षेत्र के अतिरिक्त भी धीरे धीरे इस दिशा में काम करने की ओर कर्मचारियों को प्रेरित किया जा रहा है।

प्रशिक्षण :—

कर्मचारियों को हिन्दी में काम करने का प्रशिक्षण दिया जाए, इस दृष्टि से यहां कुछ कठिनाइयां हैं। गुजरात राज्य में एस० एस० सी० स्तर की परीक्षा में हिन्दी विषय अनिवार्य है। इस वैधानिक व्यवस्था के कारण यहां के गुजराती भाषी कर्मचारियों को कार्यसाधक ज्ञान का स्तर माना जाता है, किन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं हो पा रहा है। क्योंकि इस परीक्षा से पर्याप्त हिन्दी ज्ञान नहीं हो पाता है। इसके अतिरिक्त हिन्दी में प्राप्त होने वाले अंक डिवीजन बनाने में नहीं जोड़े जाते संभवतः इसलिए विद्यार्थी रूचि नहीं लेते हैं। इस व्यवस्था के कारण यहां के कर्मचारी, प्रबोध प्रवीण और प्राज्ञ परीक्षा में भी भाग नहीं ले सकते, क्योंकि इनके लिए कोई प्रोत्साहन की व्यवस्था नहीं है। फिर भी उनके हिन्दी ज्ञान को बढ़ाने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

जहां तक टाइपिंग के प्रशिक्षण का प्रश्न है हिन्दी शिक्षण योजना द्वारा आयोजित इस प्रशिक्षण का लाभ अहमदाबाद शहर के कर्मचारियों को मिल रहा है। इस प्रशिक्षण में प्रति सत्र में एक-दो कर्मचारियों को भेजा जाता है।

इसके अतिरिक्त भी अहमदाबाद शहर के अधिकारियों को प्रशिक्षित करने के लिए साप्ताहिक कक्षा का आयोजन पिछले एक वर्ष से किया जा रहा है। इससे अहमदाबाद की शाखाओं के 10 अधिकारी लाभान्वित हुए हैं। आगे और भी संख्या बढ़ाने की योजना है। भारतीय बैंकर्स संस्थान द्वारा ली जाने वाली बैंकिंग उन्मुख हिन्दी परीक्षा में भी लगभग 50 कर्मचारियों ने भाग लिया है। क्षेत्र के लिए अब तक 8 कार्यशालाओं का भी आयोजन गया, जिस लगभग 150 अधिकारियों व कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जा चुका है। इन कार्यशालाओं से भी शाखाओं में आन्तरिक कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ा है। जो उत्साहजनक है। अब तक के आंकड़ों से प्रतीत होता है कि इस बैंक में 'ख' क्षेत्र में होने पर भी 43.98 प्रतिशत पत्र-व्यवहार के लक्ष्य को प्राप्त कर लिया है।

हिन्दी पुस्तकालय की स्थापना :—

बैंक के कर्मचारियों की रूचि हिन्दी में पढ़ने में हो इसको ध्यान में रख कर क्षेत्रीय कार्यालय में हिन्दी पुस्तकालय की स्थापना की गई, जिसमें लगभग हिन्दी की विभिन्न विषयों की 300 पुस्तकें हैं। अहमदाबाद शहर के सभी कर्मचारी इसका लाभ उठा रहे हैं। इन पुस्तकों के अतिरिक्त भी एक हिन्दी दैनिक, एक साप्ताहिक और एक पाक्षिक पत्र की व्यवस्था की गई है।

सभी कर्मचारियों के नामपट्ट, अधीनस्थ कर्मचारियों की वर्दी पर बिल्ले, हिन्दी में तैयार करवा दिए गए हैं। क्षेत्र में अब ऐसी कोई शाखा नहीं है, जहां पर द्विभाषी नामपट्ट न हों।

उत्तर भारत, गुजरात, महाराष्ट्र, को भेजे जाने वाले लिफाफों पर पते हिन्दी में लिखे जाते हैं हिन्दी में भेजे जाने वाले पत्रों की प्रविष्टि हिन्दी में ही की जाती है।

बिना कोड वाले तार क्षेत्रीय कार्यालय द्वारा हिन्दी में भेजे जाते हैं। शाखाओं में हिन्दी में काम किया जाए, इसके निर्देश भेजे जा चुके हैं।

हिन्दी में प्राप्त होने वाले और भेजे जाने वाले पत्रों का रिकार्ड रखने की व्यवस्था की गई है।

हमारा यह लक्ष्य है कि 'ख' श्रेणी के राज्यों के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित लक्ष्य को शीघ्र प्राप्त कर ले। इस हेतु हमारा क्षेत्र प्रयत्नशील है।

—डा० विनोद दीक्षित,
पंजाब नेशनल बैंक, क्षेत्रीय कार्यालय,
अहमदाबाद।

2. कर्मचारी राज्य बीमा निगम में हिन्दी की प्रगति

कर्मचारी राज्य बीमा निगम अपने कार्यालयों में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की दिशा में निरन्तर प्रयत्नशील है और सरकार की राजभाषा नीति को कार्यान्वित करने की दिशा में हर संभव प्रयास किए जा रहे हैं। इस प्रयोजन के लिए मुख्यालय के हिन्दी अनुभाग द्वारा अपने सभी क्षेत्रीय कार्यालयों आदि में हिन्दी की प्रगति के लिए समय-समय पर विभिन्न योजनाएं कार्यान्वित की जाती हैं।

चालू वर्ष के दौरान निगम के विभिन्न कार्यालयों में आयोजित कार्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है :—

(क) **क्षेत्रीय कार्यालय, राजस्थान :**—निगम के क्षेत्रीय कार्यालय, राजस्थान में सर्वाधिक कार्य हिन्दी में किया जा रहा है और इस कार्यालय द्वारा लगातार पिछले दो वर्ष से शील्ड प्राप्त की जा रही है। मौजूदा स्थिति में इस कार्यालय का लगभग 90 प्रतिशत कार्य हिन्दी में हो रहा है। क्षेत्रीय कार्यालय, राजस्थान में 24 जून, 1983 को वार्षिक हिन्दी समारोह का आयोजन किया गया जिसमें निगम की तत्कालीन बीमा आयुक्त, श्रीमती सोपारकर द्वारा सर्वाधिक कार्य हिन्दी में करने के उपलक्ष्य में उक्त कार्यालय को शील्ड भेंट की गई। इस अवसर पर एक पुस्तक प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया।

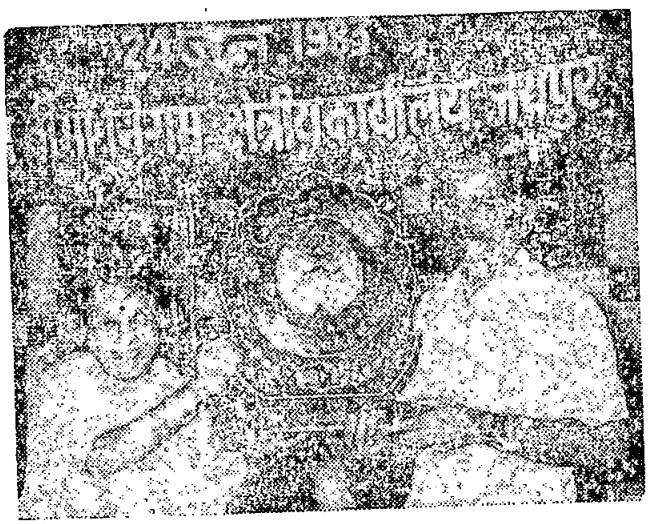

श्रीमती अ० र० सोपारकर, बीमा आयुक्त श्री एस० एन० तिवारी, क्षेत्रीय निदेशक, राजस्थान को शील्ड भेंट करती हुई।

इस अवसर पर राजस्थान सरकार के भाषा विभाग के सहयोग से क्षेत्रीय कार्यालय, राजस्थान में एक पुस्तक प्रदर्शनी का भी आयोजन किया गया, जिसमें विभिन्न विषयों की उच्च-कोटि की हिन्दी पुस्तकों के अलावा हिन्दी में तकनीकी तथा पारिभाषिक शब्दावली की पुस्तकें तथा विभिन्न शब्दकोष तथा शब्दावलियां आदि भी प्रदर्शित की गई। साथ ही भारत सरकार द्वारा प्रकाशित शब्दावलियों के अलावा राजस्थान सरकार के भाषा विभाग द्वारा प्रकाशित शब्दकोष/शब्दावलियां आदि भी प्रदर्शित की गईं।

समारोह का संचालन निगम मुख्यालय के हिन्दी अधिकारी, श्री चन्द्रभान गर्ग द्वारा किया गया। उन्होंने प्रारम्भ में निगम कार्यालयों में हिन्दी की मौजूदा स्थिति पर प्रकाश डालते हुए क्षेत्रीय कार्यालय, राजस्थान द्वारा किए जा रहे हिन्दी कार्य की प्रशंसा की और आशा प्रकट की कि उक्त कार्यालय द्वारा इसी गति से कार्य करते रहने पर इस कार्यालय का शत-प्रतिशत कार्य शीघ्र हिन्दी में होने लगेगा।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि तथा निगम मुख्यालय में तत्कालीन बीमा आयुक्त, श्रीमती सोपारकर ने निगम कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की संभावनाओं पर अपने विचार प्रकट किए।

क्षेत्रीय निदेशक, राजस्थान श्री एस० एन० तिवारी ने इस अवसर पर भाषण देते हुए मुख्य अतिथि श्रीमती सोपारकर, बीमा आयुक्त, राजस्थान सरकार के भाषा निदेशक, डा० कलानाथ शास्त्री और चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवाओं के निदेशक के प्रति अपने अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रम में से समय निकाल कर उपस्थित होने के लिए कृतज्ञता प्रकट की।

इस अवसर पर क्षेत्रीय कार्यालय, राजस्थान में अधिकारियों के लिए एक कार्यशाला का आयोजन भी किया गया, जिसमें विभिन्न निगम कार्यालयों में तैनात अधिकारियों ने हिन्दी का व्यवहारिक प्रशिक्षण प्राप्त किया।

(ख) **क्षेत्रीय कार्यालय, चड़ीगढ़ :**—चण्डीगढ़ में स्थित निगम के क्षेत्रीय कार्यालय पंजाब और हरियाणा द्वारा सम्मिलित रूप से 14 सितम्बर, 1983 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया। इस समारोह की अध्यक्षता क्षेत्रीय निदेशक, पंजाब द्वारा की गई और मुख्य अतिथि के रूप में निगम के बीमांकक, श्री हीरालाल जैन ने समारोह में भाग लिया। इस अवसर पर 'ख' तथा "ग" क्षेत्र में स्थित निगम कार्यालयों में सर्वाधिक कार्य हिन्दी में करने के लिए मुख्यालय में प्रधान अधिकारी के स्तर पर हिन्दी का काम देखने वाले बीमांकक, श्री हीरालाल जैन ने क्षेत्रीय निदेशक, पंजाब को राजभाषा शील्ड प्रदान की।

समारोह के प्रारम्भ में क्षेत्रीय निदेशक, पंजाब, श्री के० के० एस० सेठी ने मुख्य अतिथि श्री हीरा लाल जैन का स्वागत किया और सभी उपस्थित अधिकारियों तथा कर्मचारियों को धन्यवाद देते हुए उनके द्वारा हिन्दी में किए गए कार्यों की प्रशंसा की और आशा प्रकट की कि उनका उत्साह निरंतर आगे बढ़ते रहना चाहिए ताकिन केवल "ख" तथा "ग" क्षेत्रों में बल्कि समस्त निगम कार्यालयों में क्षेत्रीय कार्यालय, पंजाब ही अग्रणी रहे।

(ग) **क्षेत्रीय कार्यालय, बिहार :**—क्षेत्रीय कार्यालय, बिहार में 14 सितम्बर, 1983 को 'हिन्दी दिवस' समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता क्षेत्रीय निदेशक, श्री श्याम नारायण सिन्हा ने की और मुख्यालय के हिन्दी अधि-

कारी, श्री चन्द्रभान गर्ग, मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित हुए इस समारोह का शुभारंभ "वीणा वादिनी वर दे" गायन से हुआ और तत्पश्चात् उप क्षेत्रीय निदेशक, श्री बृजनंदन उपाध्याय ने क्षेत्रीय निदेशक, मुख्य अतिथि तथा उपस्थित अधिकारियों व कर्मचारियों का स्वागत करते हुए समारोह के प्रयोजन पर प्रकाश डाला। क्षेत्रीय हिन्दी अधिकारी, बिहार श्री गणेश झा ने क्षेत्रीय कार्यालय में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की स्थिति में हुई प्रगति का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया और भावी कार्यक्रम पर प्रकाश डाला। क्षेत्रीय कार्यालय के कुछेक अन्य अधिकारियों और कर्मचारियों ने भी अपने विचार व्यक्त किए और हिन्दी की आवश्यकता पर प्रकाश डाला। अंत में उप क्षेत्रीय निदेशक, श्री जगदीश नारायण ने सभी उपस्थित अधिकारियों तथा कर्मचारियों को धन्यवाद दिया और आशा प्रकट की कि क्षेत्रीय कार्यालय के सभी अधिकारी तथा कर्मचारी अपने रोज़मर्रा के कार्य में शत-प्रतिशत हिन्दी का प्रयोग करके सरकार की राजभाषा नीति को सफल बनाने में अपना पूर्ण योगदान देंगे।

(घ) क्षेत्रीय कार्यालय, महाराष्ट्र :—निगम के क्षेत्रीय कार्यालय, महाराष्ट्र में दिनांक 14 सितम्बर, 1983 को हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता क्षेत्रीय निदेशक, श्री नरोत्तम व्यास ने की और इस समारोह में प्रमुख साहित्यकार श्री गोविन्द मिश्र, आयकर आयुक्त, बम्बई, डा० राधेमोहन शर्मा, हिन्दी विभागाध्यक्ष, पार्ले कालेज, बम्बई और श्री बी० के० शर्मा, अध्यक्ष समन्वय समिति, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, बम्बई ने भी भाग लिया। समारोह के प्रारम्भ में संयुक्त क्षेत्रीय निदेशक, श्री सुरजीत सिंह अबरोल ने सभी उपस्थित अधिकारियों तथा कर्मचारियों का स्वागत किया तथा श्री बलदेव राही, उप क्षेत्रीय निदेशक ने क्षेत्रीय कार्यालय, महाराष्ट्र में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की स्थिति का संक्षिप्त लेखा-जोखा प्रस्तुत किया। इस अवसर पर हिन्दी शिक्षण योजना की विभिन्न परीक्षाओं में उत्तीर्ण कर्मचारियों को प्रशस्ति-पत्र आदि भी भेंट किए गए। समारोह के मुख्य अतिथि श्री गोविन्द मिश्र ने अपने अनुभवों का उल्लेख करते हुए कहा कि हिन्दी में स्वत: ही इतनी क्षमता विद्यमान है कि यह सम्पूर्ण देश की भाषा बन जाएगी। अपने अध्यक्षीय भाषण में क्षेत्रीय निदेशक, श्री नरोत्तम व्यास ने दिन-प्रति-दिन के हर काम में हिन्दी का प्रयोग करने का आवाहन करते हुए हर प्रकार की सुविधाएं एवं प्रोत्साहन देने का आश्वसान दिया।

कार्यक्रम के अंत में एक कवि सम्मेलन का भी आयोजन किया गया जिसमें श्री मनोहर महाडिक ने हिन्दी का भजन और श्री डी० एन० दिनकर ने एक मराठी गीत प्रस्तुत किया। कवि-सम्मेलन का संचालन हास्य कवि श्री हुल्लड़ मुरादाबादी ने किया। अन्य प्रमुख कवियों में भी सच्चिदानंद, श्री आलोक भट्टाचार्य, श्री सुरेश श्रीवास्तव तथा श्री गो० रा० कलाल ने अपनी कविताएं सुनाई।

(ङ.) क्षेत्रीय कार्यालय, पश्चिमी बंगाल :—14 सितम्बर, 1983 को हिन्दी दिवस के अवसर पर क्षेत्रीय कार्यालय, पश्चिमी बंगाल में भी एक समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह की अध्यक्षता क्षेत्रीय निदेशक ने की और क्षेत्रीय कार्यालय में हिन्दी का कार्य देखने वाले उप क्षेत्रीय निदेशक, श्री जे० पी० वर्मा ने हिन्दी की प्रगति का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया। मुख्य अतिथि द्वारा राजभाषा की महत्ता पर प्रकाश डाला गया और विभिन्न हिन्दी परीक्षाओं में उत्तीर्ण अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशस्ति-पत्र भेंट किए गए। अहिन्दी भाषी क्षेत्र में स्थित निगम कार्यालयों में यह पहला समारोह होने के कारण विशेष रूप से उल्लेखनीय है और इससे अहिन्दी भाषी क्षेत्र में स्थित निगम कार्यालयों में भी हिन्दी के प्रयोग का सुखद वातावरण तैयार होने की संभावना की जाती है।

—चन्द्रभान गर्ग,
हिन्दी अधिकारी, कर्मचारी राज्य बीमा निगम,
नई दिल्ली।

3. नेशनल बिल्डिंग्स कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन लिमिटेड में हिन्दी कार्यशाला

नेशनल बिल्डिंग्स कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन (लिमिटेड) की हिन्दी कार्यशाला के उद्घाटन दिवस दिनांक 19–9–83 को श्री मोती लाल चतुर्वेदी उपनिदेशक, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) ने कहा कि देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिन्दी संघ की राजभाषा है। राजभाषा नीति यानी अंग्रेजी शब्द "पोलिसी" के अन्तिम वर्ण "वाई" के स्थान पर हम "ई" वर्ण को नहीं रख सकते। यह नीति डण्डे की नीति न होकर अनुनय-विनय की नीति है। इसका सम्बन्ध जहां संवैधानिक अनिवार्यता से है वहीं हिन्दी को मन से अपनाने की भावना से भी है। राजभाषा नीति के विविध पहलुओं को समझाते हुए श्री चतुर्वेदी ने सलाह दी कि सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के दौरान अनुवाद कार्य पर निर्भर रहने की बजाय स्वयं आसान हिन्दी के प्रयोग पर बल देना अच्छा है।

श्री चतुर्वेदी के सरस और दृष्टांत भरे व्याख्यान के बाद निर्माण एवं आवास मंत्रालय के हिन्दी अधिकारी, डा० राजेन्द्र सिंह कुशवाहा ने भारत सरकार की राजभाषा नीति को लागू करना अनिवार्य बताया। इसके लिए व्यक्ति विशेष की इच्छा अनिच्छा का प्रश्न निराधार है। विदेशियों में अपनी भाषा के प्रति अपार मोह दिखाई देता है। भारतीयों को भी इस भावना का आदर करना चाहिए। सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के दौरान भाषा के सरलीकरण और भाषा की प्रकृति को ध्यान में रखना आवश्यक है। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि कार्यालयों में हिन्दी सम्बन्धी वातावरण बनाए रखने के लिए साहित्यिक गोष्ठियों और सांस्कृतिक समारोह का आयोजन होते रहना चाहिए।

इसके उपरान्त लोक उद्यम विभाग के हिन्दी अधिकारी, श्री रामरज मिश्र ने उपस्थित श्रोताओं को अनुवाद की प्रवृत्ति को छोड़ने का अनुरोध करते हुए कई सुझाव सामने रखे। उन्होंने सलाह

दी कि सरकारी कामकाज में संस्कृतनिष्ठ शब्दावली को छोड़कर आम बोलचाल की भाषा का प्रयोग करना हितकर है।

इन कार्यशालाओं में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले निगम के 20 कर्मचारियों ने भाग लिया। कार्यशालाओं के दूसरे दिन भूतपूर्व उपसचिव भारत सरकार, श्री हरिबाबू कंसल ने "प्रशासनिक (स्थापना व सामान्य) कार्य में हिन्दी का प्रयोग" के बारे में अपने विचार रखे। तीसरे दिन निदेशक (हिन्दी) संघ लोक सेवा आयोग, डा० पाण्डुरंग राव ने "प्रशासनिक (भर्ती) कार्य में हिन्दी का प्रयोग" के बारे में प्रक्षिणार्थियों को समझाया। चौथे दिन की कार्यशाला में उपनिदेशक, बैंकिंग डिवीजन, आर्थिक कार्य विभाग, श्री जगदीश राज सेठ ने "वित्त एवं लेखा कार्य में हिन्दी का प्रयोग" की सम्भावनाओं को उजागर किया। पांचवे दिन कार्यपालक अभियन्ता, सी० पी० डब्ल्यू० डी०, डा० महेश चन्द्र गुप्त ने "इंजीनियरिंग" कार्य में हिन्दी का प्रयोग विषय पर अपने विचार रखे।

उपर्युक्त सभी प्रशिक्षकों ने राजभाषा हिन्दी को अपनाने पर बल देते हुए सरकारी कामकाज में हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया। सभी प्रशिक्षकों ने इस प्रयोग के दौरान अनुवाद की प्रक्रिया से हट कर आसान हिन्दी में कार्य करने का सुझाव दिया। सभी प्रशिक्षकों ने कार्यशाला में आए कर्मचारियों को कार्यशाला सम्बन्धी अभ्यास कराया और यह पाया गया कि तकनीकी विषयों से सम्बन्धित कार्य को भी आसान हिन्दी में किया जा सकता है। इसके लिए प्रशिक्षकों ने लिप्यंतरण की पद्धति को अपनाने का सुझाव दिया।

कार्यशालाओं के समापन समारोह की अध्यक्षता करते हुए दिनांक 24-9-83 को प्रसिद्ध वैज्ञानिक, कवि, पत्रकार तथा संयुक्त निदेशक, प्रकाशन प्रभाग (सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय) डा० श्याम सिंह शशि ने निगम द्वारा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग की दिशा में किए जा रहे प्रयासों की सराहना की। उन्होंने भारतीय और विदेशी भाषाओं के प्रति समान रूप से आदर भाव रखने का उल्लेख करते हुए व्यक्तिगत स्तर पर राजभाषा हिन्दी को अपनाने का अनुरोध किया। डा० श्याम सिंह शशि ने अपने विचारों को इतने आत्मविभार होकर श्रोताओं के सामने रखा कि सभी श्रोता मंत्र-मुग्ध हो कर उन्हें सुनते रहे। उन्होने निगम के अधिकारियों से व्यक्तिगत स्तर पर राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को और प्रोत्साहन देने की अपील की। आमतौर से हिन्दी के प्रति जो हीन भावना लोगों के मन में रहती है उसे दूर करने का सुझाव दिया।

डा० श्याम सिंह शशि के खट्टे-मीठे अनुभवों और प्रेरणादायक अध्यक्षीय भाषण के लिए निगम की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष तथा निगम के मुख्य अभियन्ता (देशीय कार्य), श्री एम० एस० राव ने उन्हें गुलाब के फूलों का गुच्छा देकर उनका आभार प्रकट किया। इसके उपरान्त राजभाषा सर्वकार्य प्रभारी अधिकारी तथा प्रबन्धक (प्रशासन) श्री वाई० एल० नांगिया ने राजभाषा हिन्दी के प्रयोग के लिए दिए जाने वाले भावी प्रोत्साहनों का उल्लेख करते हुए यह आशा व्यक्त की कि इन कार्यशालाओं के आयोजन से कर्मचारियों की हिन्दी में कार्य करने की झिझक दूर होगी।

—डा० भ० प्र० निदारिया
हिन्दी अधिकारी, नेशनल बिल्डिंग्स कन्स्ट्रक्शन कार्पोरेशन लि०, लोधी रोड, नई दिल्ली।

4. हिन्दी अकादमी, दिल्ली द्वारा आयोजित पुस्तक विमोचन समारोह

हिन्दी अकादमी, दिल्ली तथा दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन के संयुक्त तत्वाधान में दिनांक 9 नवम्बर, 1983 को विट्ठलभाई पटेल भवन में कविता पाठ तथा हिन्दी अकादमी के सदस्य श्री गोपाल प्रसाद व्यास द्वारा लिखित पुस्तक "बिन हिन्दी सब सून" के विमोचन का आयोजन किया गया। इसकी अध्यक्षता बाबू गंगाशरण सिंह द्वारा की गई तथा पुस्तक का विमोचन प्रसिद्ध रूसी विद्वान डा० चैलिशैव द्वारा किया गया। इस समारोह में मुख्य आलेख श्री लक्ष्मीमल सिंघवी द्वारा प्रस्तुत किया गया जिसमें उन्होंने हिन्दी के व्यापक प्रयोग की आवश्यकता पर बल देते हुए श्री व्यास के कार्य की सराहना की। दिल्ली प्रशासन के कार्यकारी पार्षद (शिक्षा) तथा हिन्दी अकादमी के उपाध्यक्ष श्री कुलानन्द भारतीय ने भी हिन्दी के प्रचार और प्रसार की दिशा में अकादमी के योगदान की चर्चा करते हुए हिन्दी में काम करने के लिए पहल करने की आवश्यकता पर बल दिया और श्री व्यास को उनकी पुस्तक के लिए धन्यवाद दिया।

पुस्तक का विमोचन करते हुए डा० चैलिशेव ने कहा कि हिन्दी भारतवर्ष में विचारों के आदान-प्रदान के लिए प्रमुख रूप से अपनाई जाए, इसकी कामना करते हुए मैं चाहता हूं कि मेरे देश में भी हिन्दी को उसका उचित स्थान प्राप्त हो और मैं अपनी ओर से इस भाषा के प्रचार और प्रसार का कार्य निरन्तर करता रहूंगा।

श्री गोपाल प्रसाद व्यास ने अपनी हिन्दी सेवा तथा इसके प्रचार और प्रसार के लिए अपनी ओर से किए गए प्रयत्नों की चर्चा की तथा अपने आपको हिन्दी के लिए आजीवन समर्पित बताया। त्रिभुवन विश्वविद्यालय नेपाल के श्री कृष्णचन्द्र मिश्र ने भी इस अवसर पर अपने विचार प्रकट करते हुए हिन्दी भाषा को बढ़ावा देने की बात पर जोर दिया। दिल्ली प्रशासन के शिक्षा सचिव श्री ओम प्रकाश केलकर ने हिन्दी अकादमी तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन के इस संयुक्त कार्यक्रम को सफल बनाने में जिन लोगों ने सक्रिय सहयोग दिया उनको तथा समारोह के अध्यक्ष, मुख्य अतिथि और श्रोताओं को धन्यवाद दिया।

इस अवसर पर श्री संतोषानन्द, श्री मधुर शास्त्री और श्री ओम प्रकाश आदित्य की सरस कविताओं ने श्रोताओं को आनन्दित किया। यह उल्लेखनीय है कि तीनों ही कवियों ने हिन्दी भाषा से सम्बन्धित सरस कविताएं पढ़ीं।

कार्यक्रम का संचालन हिन्दी अकादमी के सचिव डा० नारायणदत्त पालीवाल ने किया तथा आरम्भ में उन्होंने हिन्दी अकादमी के कार्यक्रमों की रूपरेखा प्रस्तुत की।

यह उल्लेखनीय है कि हिन्दी अकादमी के उद्देश्यों में हिन्दी के प्रचार और प्रसार के कार्य में लगी हुई स्वयं सेवी संस्थाओं के कार्यक्रमों और योजनाओं में सहयोग देना भी सम्मिलित है। अकादमी, दिल्ली प्रशासन का भाषा विभाग तथा अन्य हिन्दी के कार्य से सम्बद्ध संस्थाओं के साथ पारस्परिक तालमेल के माध्यम से विभिन्न क्षेत्रों में हिन्दी की योजनाओं और कार्यक्रमों को अमल में लाने का प्रयास करती आ रही है।

—डा० नारायणदत्त पालीवाल
सचिव, हिन्दी अकादमी, दिल्ली

5. यूनियन बैंक आफ इंण्डिया, दिल्ली में हिन्दी कार्यशाला.

क्षेत्रीय कार्यालय दिल्ली द्वारा दिनांक 29 और 30 नवम्बर, 1983 को शाखा प्रबन्धकों/लिखाकारों/अधिकारियों के लिए एवं दिनांक 1,2 दिसम्बर, 1983 को लिपिकों के लिए हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इन कार्यशालाओं में क्रमश: 18 एवं 19 प्रशिक्षणार्थियों ने भाग लिया। प्रथम कार्यशाला का उद्घाटन दिल्ली विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध भाषा वैज्ञानिक डा० भोलानाथ तिवारी के हाथों सम्पन्न हुआ। प्रशिक्षणार्थियों को राजभाषा अधिनियम/नियम, बैंकिंग शब्दावली हिन्दी पत्राचार, तिमाही प्रगति रिपोर्ट की सही रिपोर्टिंग आदि विषयों पर विस्तारपूर्वक जानकारी प्रदान की गयी।

इस कार्यशाला को उल्लेखनीय बात यह रही कि कार्यशाला के दूसरे दिन हिन्दी कार्यशालाओं में पहले से प्रशिक्षण प्राप्त दो अधिकारियों श्री सी० एल० शर्मा अधीक्षक, क्षेत्रीय कार्यालय, दिल्ली एवं श्री एम० पी० राजपूत, शाखा प्रबन्धक, नेहरू प्लेस शाखा ने भी प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण प्रदान किया।

कार्यशाला के अन्त में विख्यात हिन्दी लेखक एवं "आवारा मसीहा" के रचयिता श्री विष्णु प्रभाकर ने सफल प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण-पत्र वितरित किए।

क्षेत्रीय कार्यालय, दिल्ली के तत्वाधान में पहली बार लिपिकों के लिए हिन्दी कार्यशाला का सफल आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का उद्घाटन केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निदेशक श्री राजमणि तिवारी ने किया। इस कार्यशाला की विशेषता यह रही कि इसमें प्रशिक्षणार्थियों से हिन्दी पत्र-व्यवहार, स्क्रोल, दैनिक बही, पास-बुकों एवं लेजरों में हिन्दी में प्रविष्टियां आदि विषयों पर अभ्यास करवाया गया। कार्यशाला के अन्त में बैंकिंग प्रभाग, वित्त मंत्रालय के उप निदेशक श्री जगदीश सेठ ने सफल प्रशिक्षणार्थियों को प्रमाण-पत्र वितरित किए।

—प्रदीप खुराना
राजभाषा अधिकारी, यूनियन बैंक आफ इण्डिया
नई दिल्ली।

6. आयकर विभाग, नागपुर में 12वीं हिन्दी कार्यशाला का आयोजन

तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के शुभ अवसर पर आयकर भवन, नागपुर में 12वीं हिन्दी कार्यशाला का उद्घाटन श्री केदार नाथ जी, आयकर आयुक्त, विदर्भ, नागपुर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर सुप्रसिद्ध साहित्यकार एवं भाषा चिंतक श्री रज्जन त्रिवेदी जी को मुख्य अतिथि तथा वक्ता के रूप में आमन्त्रित किया गया था। आयकर आयुक्त श्री केदार नाथ जी ने पुष्पमाला द्वारा मुख्य अतिथि का सत्कार किया तथा श्री जी० एल० श्रीनिवासन, आयकर आयुक्त (अपील) ने पुष्पगुच्छ देकर मुख्य अतिथि का स्वागत किया। श्री रा० ना० निखर, हिन्दी अधिकारी ने उपस्थित सभी अधिकारियों एवं प्रशिक्षणार्थियों का श्री रज्जन त्रिवेदी जी का संक्षिप्त परिचय दिया। श्री निखर ने कार्यशाला के मुख्य उद्देश्य का उल्लेख करते हुए बताया कि अभ्यास की कमी के कारण लिखते समय जो झिझक होती है उसे दूर करना ही कार्यशालाओं का प्रमुख उद्देश्य है।

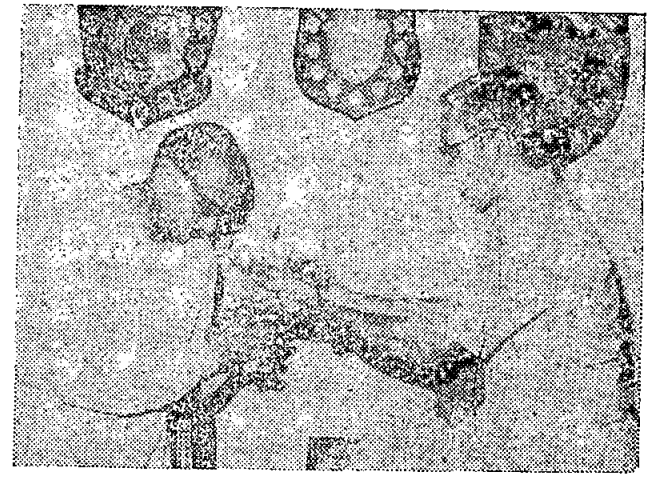

आयकर विभाग 'नागपुर' में हिन्दी कार्यशाला के उद्घाटन के अवसर पर श्री टी० एन० श्री निवासन आयकर आयुक्त (अपील) श्री रज्जन त्रिवेदी को पुष्पगुच्छ समर्पित करते हुए स्वागत कर रहे हैं।

श्री रज्जन त्रिवेदी जी ने इस अवसर पर उन्हें निमंत्रित करने के लिए आभार प्रकट करते हुए कहा कि हिन्दी के गालियारे में आप सबके स्नेह के द्वारा मैं पहुंचने का प्रयत्न कर रहा हूं। आजादी के बाद हिन्दी एक बहुत बड़ी दुर्घटना का शिकार हो गई, जिसके कारण उसका स्वरूप तथा हिन्दी का निर्माण खो गया। हिन्दी किसी व्यक्ति, राजनीति, धर्म से जुड़ी वस्तु नहीं है, बल्कि वह एक शक्ति है जो हमारी आजादी की लड़ाई की लड़ी की एक कड़ी है। उन्होंने आजादी के पहले की घटनाओं में अमर शहीद भगत सिंह के पत्र का उल्लेख किया जिसमें कहा गया है कि हमें रविन्द्रनाथ टैगोर के साहित्य की गरिमा को समझना चाहिए। और उसका मूल्यांकन करना चाहिए तब जो शक्ति पैदा होगी वह होगी हिन्दी। वह शक्ति हमारी चेतना में जागृति पैदा करती है और वह ही भाषा के प्रति संवेदना उत्पन्न कराती है। हिन्दी भाषा हमारी परम्पराओं की धरोहर है। वह किसी भी प्रकार से राजनीतिक मसला नहीं है। उन्होंने यह भी बताया कि हिन्दी

किस प्रकार कालान्तर में राष्ट्रभाषा से राजभाषा और फिर सम्पर्क भाषा बन गई ।

श्री त्रिवेदी जी ने यह विशेष रूप से उल्लेख किया कि उत्तर और दक्षिण की साहित्यिक परम्पराएं कभी भी अलग नहीं रही हैं । उदाहरण के रूप में चैतन्य महाप्रभु, मीरा बाई, नरसी भगत, जगतगुरू शंकराचार्य, सन्त नामदेव, गुरू नानक, कबीर, तुलसी सूर इत्यादि सन्तों ने हिन्दी भाषा के माध्यम से सम्पूर्ण भारत को एक सूत्र में बांधने का प्रयास किया है । यह प्रयास आज का नहीं बल्कि सैंकड़ों वर्षों से चला आ रहा है । आजादी मिलने के साथ अगर हिन्दी को उपयुक्त स्थान दिया जाता तो हमारी सांस्कृतिक भाषा राजनीतिक दलदल में न फंसती । आपने विदेशों के उदाहरण देकर बताया कि लंका, सोवियत, इन्डोनेशिया आयरलैण्ड, इजरायल, जर्मनी आदि में उनकी भाषाओं को राजभाषा बनने में कितना समय लगा । श्री त्रिवेदी जी ने श्री श्रीनिवासन, आयकर आयुक्त (अपील) के मुख से मराठी के कुछ वाक्यों को सुन कर प्रसन्नता व्यक्त की । आपने आगे बताया कि हम अंग्रेजी भाषा को लादे हुए चल रहे हैं, यह हमारी मानसिक गुलामी है । इस गुलामी को फैंक कर हमें हमारी आम भाषा और बोली को अपनाना ही सही दृष्टि से पूर्ण आजादी होगी । संस्कृत भाषा अत्यन्त समृद्ध होते हुए भी वह जन भाषा नहीं बन पाई और पाली प्राकृत संस्कृत के बाद में आने वाली भाषाएं प्रयोग में आई और उन्हें प्रयोग में लाने के लिए सत्ता ने मुख्य भूमिका निभाई ।

श्री त्रिवेदी जी ने यह भी कहा कि देश के उच्च सत्ताधिकारी पद के निमित्त हिन्दी का प्रयोग मान्य किया जाए तो निश्चित ही हिन्दी आगे बढ़ेगी । सरकार का सारा काम यदि हिन्दी में होगा तभी हिन्दी के साथ-साथ भारत की सभी भाषाओं की निश्चित रूप से उन्नति होगी और इसके साथ ही अंग्रेजी अपने आप समाप्त हो जाएगी । हिन्दी के प्रयोग में मात्रा, व्याकरण और भाषा सम्बन्धी सामान्य त्रुटियों की ओर अधिक ध्यान न देकर जब हम लिखने का अभ्यास बढ़ायेंगे तो हमारी भाषा अपने आप निखरती चली जाएगी । भाषा शास्त्र अथवा व्याकरण के नियम प्रचलित भाषा के पश्चात बनाए गए हैं । हमें सरल हिन्दी का प्रयोग करते समय अन्य भारतीय भाषाओं के प्रचलित शब्दों को निःसंकोच ग्रहण करना चाहिए क्योंकि किसी भी भाषा की सफलता शब्दों के अर्थों में नहीं बल्कि उसके सफल सम्प्रेषण में है । हम जो भी कहें सरल, सुगम शब्दों में कहें । जिसे सुनने वाला अथवा पढ़ने वाला आसानी से समझ सके । कभी-कभी स्थान परिवर्तन से शब्दों के अर्थों में परिवर्तन हो जाता है जैसे महाराष्ट्र में "बाई" किसी भी स्त्री के लिए आदर सूचक शब्द है, किन्तु वही शब्द यदि उत्तर प्रदेश में कहा जाए तो दिक्कत उत्पन्न हो सकती है । भाषा के दरवाजे सदा खुले रहना चाहिए । बन्द कर देने से उसकी संस्कृति तथा भाषा का विकास अवरुद्ध हो जाएगा । टोपी पुर्तगाली शब्द है, किन्तु हिन्दी में आत्मसात कर लिया गया है और वह प्रतिष्ठा का प्रतीक है । मैं चाहता हूं कि नय शब्द आने दो, उन्हें प्रचालो ताकि हिन्दी का बहुमुखी विकास हो । अंग्रेजी से व्यक्तित्व बढ़ेगा ऐसी हीन भावना छोड़ देनी चाहिए । हिन्दी की इन कार्यशालाओं में इसी हीन भावना को दूर करने का प्रयास किया जाता है । हिन्दी में अस्मिता है, अभिव्यक्ति है जिससे व्यक्तित्व बढ़ाया जा सकता है । अनुवाद का कार्य अत्यन्त उच्च श्रेणी का कार्य है । हिन्दी सम्पूर्ण देश की सम्पर्क भाषा है । हिन्दी लिखने में मात्राओं पर विशेष बल न दें, न हिचकें, लेकिन उसका प्रभाव, भाव कम न हो इसे भी देखना आवश्यक है । आप सीधे-सादे तथा सहज शब्दों का प्रयोग कर हिन्दी के स्वरूप को उन्नत करें । बहुत अच्छी शब्दावली बहुत अच्छी रचना निर्माण करती है, यह भ्रम है । सरल और स्वच्छ भाव अभिव्यक्ति वाली भाषा प्रभावी और हृदयग्राही होती है । तुलसी, सूर और कबीर ने मुगल साम्राज्य में भी सरल हिन्दी तथा अन्चलिक शब्दों को प्रयोग में लाकर जन मानस को जीत लिया । कार्यालयों में प्रत्यक स्तर पर हिन्दी का कितना अर्थपूर्ण प्रयोग हो रहा है इसकी ओर ध्यान देने की अत्यन्त आवश्यकता है । हमें प्रत्येक स्तर पर हिन्दी को आगे बढ़ाने की दिशा में सुनिश्चित प्रयास करना चाहिए ।

श्री त्रिवेदी जी के व्याख्यान के बाद श्री केदार नाथ, आयकर आयुक्त जी ने अपने सम्बोधन में बताया कि हिन्दी भाषा ही राष्ट्र की सम्पर्क भाषा है । हम सबके सही योगदान से तथा उसके प्रति लगाव और गौरवान्वित होने के द्वारा हम हिन्दी को विकसित कर सकते हैं । प्राय: विदेश के प्रत्येक राष्ट्र की अपनी-अपनी राष्ट्रभाषा है, तो हम सब हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रयत्न में क्यों न योगदान दें ? आपने संविधान का हवाला देते हुए बताया कि संविधान में हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिया गया है किन्तु कुछ ऐसी स्थितियां हैं, जिसके कारण सरकारी कामकाज में एकदम हिन्दी ही चलेगी यह घोषणा नहीं की जा सकती । आयुक्त जी ने भी पुष्टि की कि जब तक अन्य भाषा के शब्दों को कोई भी भाषा आत्मसात करने की शक्ति नहीं रखती तब तक वह भाषा उन्नत नहीं हो सकती । आयकर विभाग में हिन्दी की स्थिति का उल्लेख करते हुए उन्होंने बताया कि आयकर विभाग में कर्मचारियों को हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है । सभी के सम्मिलित प्रयास के द्वारा ही राजभाषा हिन्दी का विकास हो सकता है, हम सबकी अपनी एक भाषा हो, इसका ध्यान रखकर हिन्दी का प्रयोग निरन्तर बढ़ाना चाहिए ।

अन्त में धन्यवाद ज्ञापन के साथ अध्यक्ष महोदय की अनुमति से कार्यक्रम समाप्त किया गया ।

—रामनारायण निखर
हिन्दी अधिकारी, आयकर आयुक्त कार्यालय, विदर्भ, नागपुर

7. केनरा बैंक मंडल कार्यालय, नयी दिल्ली में लिपिक वर्गीय हिन्दी कार्यशाला

दिनांक 24 नवम्बर, 1983 को प्रात: इस कार्यशाला का उद्घाटन, अध्यक्ष, नागरी प्रचारिणी सभा, नयी दिल्ली, विश्व हिन्दी सम्मेलन की राष्ट्रीय समिति तथा संगठन समिति के सदस्य एवं सांसद श्री सुधाकर पाण्डेय द्वारा दीप प्रज्वलित कर समारोह का उद्घाटन किया गया ।

आपने अपने संक्षिप्त भाषण में कर्मचारियों को हिन्दी में काम करने की प्रेरणा दी तथा बैंकिंग कार्य में क्षेत्रीय स्तर पर भारतीय भाषाओं के प्रयोग की आवश्यकता, हिन्दी प्रचार-प्रसार के लिए हिन्दी कार्यशालाओं की आवश्यकता, सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी के प्रयोग की आवश्यकता पर सुझाव प्रस्तुत किए। आपने कहा कि हिन्दी को प्रेम की भाषा के रूप में इस्तेमाल कर सरलता से आगे बढ़ाया जा सकता है। उन्होंने बैंकिंग कार्य में बोल-चाल की सरल हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया। इस अवसर पर श्रीमती जीवन लता जैन, राजभाषा अधिकारी, दिल्ली अंचल ने राजभाषा कार्यान्वयन में उठाए गए प्रमुख कदमों पर प्रकाश डाला। श्री एम० एल० मैत्रैय, राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) तथा श्री पी० वी० मुतालिक, राजभाषा अधिकारी, विजया बैंक, ने भारतीय भाषाओं के समन्वय तथा सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी के प्रयोग की आवश्यकता पर प्रकाश डाला। इस समारोह का संचालन श्री रमेश चन्द, राजभाषा अधिकारी, दिल्ली मंडल द्वारा किया गया।

25 नवम्बर, 1983 को समापन समारोह में प्रसिद्ध कवि एवं लेखक श्री गोपाल प्रसाद व्यास जी को आमन्त्रित किया गया जिन्होंने कर्मचारियों को प्रेरणा देते हुए कहा कि भाषा देश की अस्मिता, संस्कृति को प्रकट करती है किन्तु अंग्रेजी ने हमारे देश के स्वाभिमान, आकांक्षा, संस्कृति, विचारधारा को नष्ट कर दिया है। यह हमारे संस्कारों को भी नष्ट करती जा रही है। हम पश्चिम की फैशनपरस्ती में डूब गए हैं। अतः हमें अपनी भाषा के सम्मान की बात सोचनी चाहिए। उन्होंने कहा कि हिन्दी संस्कृत की बेटी है और संस्कृत भारतीय संस्कृति की अखण्ड परम्परा है। हिन्दी किसी प्रदेश की भाषा नहीं है। उन्होंने परिचय प्रतियोगिता के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए तथा अपने हास्य कविताओं से कर्मचारियों का रसास्वादन किया। श्रीमती जीवनलता जैन ने बैंक की हिन्दी-नीति पर प्रकाश डाला तथा श्री सुरजीत कुमार तुली के आभार प्रदर्शन के बाद समारोह सम्पन्न हुआ।

प्रबन्धक, केनरा बैंक, मण्डल कार्यालय, नई दिल्ली

8. "विश्व हिन्दी सम्मेलन में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा का योगदान"

भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, पूसा की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की दिनांक 25 नवम्बर, 1983 को आयोजित 28वीं त्रैमासिक बैठक में समिति के अध्यक्ष श्री एम० डी० सिंह, संयुक्त निदेशक (प्रशासन) द्वारा सदस्यों को सूचित किया गया कि उनको यह बताते हुए बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि इस वर्ष दिल्ली में तृतीय विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर हिन्दी अधिकारी के अपनी ओर से किए गए प्रयासों के आधार पर सम्मेलन की प्रदर्शनी में संस्थान ने भाग लिया। इस अवसर पर हिन्दी में संस्थान का एक संक्षिप्त परिचय भी तैयार किया गया। सम्मेलन प्राधिकारी की ओर से इस प्रदर्शनी को लगाए जाने पर एक प्रशस्ति-पत्र प्राप्त हुआ है। उन्होंने हिन्दी अधिकारी को निर्देश दिया कि वे संक्षेप में सदस्यों को इस प्रमुख उपलब्धि का ब्यौरा दें। हिन्दी अधिकारी ने शुरू से आखिर तक बहुत संक्षेप में इस सम्मेलन की प्रदर्शनी में संस्थान के योगदान का ब्यौरा प्रस्तुत किया जिसमें संस्थान की ओर से लगाए 7 प्रदर्शन-पट्टों तथा प्रदर्शनी में कृषि के क्षेत्र में संस्थान द्वारा निभाये गए उत्तरदायित्वों का विवरण दिया। इस प्रदर्शनी में कृषि मंत्रालय और भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद या कृषि मंत्रालय के अन्य किसी विभाग द्वारा भाग नहीं लिया गया था और संस्थान द्वारा ही पूरे कृषि क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया गया था। प्रधानमन्त्री द्वारा इस प्रदर्शनी को देखा गया। इस प्रदर्शनी का समाचार बाद में दूरदर्शन पर दिनांक 2–11–83 को 'कृषि दर्शन' कार्यक्रम के अन्तर्गत कृषि समाचारों में भी प्रसारित किया गया जिसमें इस प्रदर्शनी की बहुत प्रशंसा की गई। इस प्रदर्शनी को संयुक्त निदेशक (प्रशासन) व अन्य अधिकारियों द्वारा देखे जाने आदि का भी उल्लेख किया गया। अन्त में उन्होंने सदस्यों से अनुरोध किया कि ये प्रदर्शनी-पट्ट निदेशालय के विभिन्न स्थानों पर लगाए जा चुके हैं वे कृपया उनको देखें। सदस्यों ने इसे स्वीकार किया और हिन्दी अधिकारी ने प्रदर्शनी में लिए गए 5-6 चित्रों को सभी सदस्यों को दिखाया। सभी सदस्यों द्वारा इस प्रयास की सराहना की गई। संयुक्त निदेशक (प्रशासन) व सभी सदस्यों द्वारा हिन्दी अधिकारी की इस कार्य के किए जाने के लिए बहुत प्रशंसा की गई।

—सतीश चन्द्र
हिन्दी अधिकारी, भा० कृ० अनु० संस्थान

9. गोरखपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक

गोरखपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की पहली बैठक दिनांक 29–8–83 को पूर्वोत्तर रेलवे के प्रवर उप महाप्रबंधक एवं मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री हरीशचन्द्र शाह जगाती की अध्यक्षता में महाप्रबन्धक कार्यालय के सभा-कक्ष में आयोजित की गयी।

इस अवसर पर भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार एवं राजभाषा सचिव श्री कृष्ण कुमार श्रीवास्तव मुख्य अतिथि के रूप में पधारे थे। मुख्य अतिथि ने सरकार की राजभाषा नीति पर प्रकाश डालते हुए बतलाया कि संविधान में हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया गया है, इसमें कोई दो मत नहीं हैं। उन्होंने राजभाषा अधिनियम यथा संशोधित अधिनियम 1967 पर प्रकाश डालते हुए इसके अनुपालन के संवैधानिक दायित्व की महत्ता को बतलाते हुए कहा कि गृह मंत्रालय, केन्द्रीय हिन्दी समिति के परामर्श से प्रतिवर्ष एक वार्षिक कार्यक्रम बनाती है। इस वार्षिक कार्यक्रम के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, उद्यमों और निगमों को यह देखना वांछनीय है कि वह वार्षिक कार्यक्रम के अनुरूप अपने-अपने विभागों में राजभाषा हिन्दी का कार्यक्रम कार्यान्वित करें।

राजभाषा नीति पर प्रकाश डालते हुए श्री श्रीवास्तव ने बतलाया कि संघ लोक सेवा आयोग तथा अन्य जितनी भी अखिल भारतीय स्तर पर परीक्षायें आयोजित की जाती हैं उनमें अब अधिकांश लोगों का माध्यम हिन्दी ही होता है। अर्थात् हिन्दी माध्यम

से परीक्षा देने वालों की संख्या निरन्तर बढ़ने लगी है। श्रीवास्तव ने गैर सरकारी संस्थानों द्वारा हिन्दी के प्रचार-प्रसार के योगदान की चर्चा करते हुए उल्लेख किया कि अभी उन्होंने अपने हाल ही के त्रिवेन्द्रम प्रवास के दौरान पाया कि केरल राज्य से लगभग डेढ़ लाख लोग हिन्दी परीक्षाओं में सम्मिलित हुए हैं। इन परीक्षाओं का स्तर मैट्रिक परीक्षा के स्तर का होता है। इन संस्थाओं द्वारा परीक्षा में सफल कर्मचारियों को पुरस्कृत भी किया जाता है। इससे स्पष्ट है कि दक्षिण में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में कोई विरोध नजर नहीं आता।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की उपादेयता पर प्रकाश डालते हुए मुख्य अतिथि ने बतलाया कि इस समय देश में लगभग 70 नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियां गठित की गयी हैं। इन समितियों के गठन से सरकारी कार्यालयों में हिन्दी का काम-काज सुव्यवस्थित ढंग से आगे बढ़ रहा है।

मुख्य अतिथि ने गोरखपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों को सम्बोधित करते हुए बतलाया कि गोरखपुर नगर 'क' क्षेत्र के अन्तर्गत आता है। अत: इस नगर में स्थित केन्द्रीय कार्यालयों के बीच मूल पत्राचार हिन्दी में होना चाहिए। इसी प्रकार दिल्ली स्थित प्रधान कार्यालय से पत्राचार हिन्दी में ही करना अनिवार्य है।

मुख्य अतिथि ने 1983–84 के वार्षिक कार्यक्रम की चर्चा करते हुए सदस्यों को बतलाया कि वे अपने कार्यालय में वार्षिक कार्यक्रम को सुनिश्चित करने के लिए एक सुनियोजित कार्यक्रम बनायें और उसे अपने कार्यालयों में यथाशीघ्र कार्यान्वित करें। मुख्य अतिथि ने विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी के पदों के सृजन के संबध में राजभाषा नीति पर प्रकाश डालते हुए बतलाया कि राजभाषा नियमों के अनुपालन के लिए हिन्दी के न्यूनतम पदों का सृजन किया जाना चाहिए। जिन कार्यालयों में हिन्दी का कोई पद सृजित नहीं है उन कार्यालयों को अपने मुख्यालय को इस संदर्भ में प्रस्ताव भेजना चाहिए। मुख्य अतिथि ने आगे विचार व्यक्त किया कि हिन्दी के पदों के सृजन पर कोई प्रतिबंध नहीं है।

हिन्दी प्रशिक्षण की चर्चा करते हुए मुख्य अतिथि ने कहा कि गोरखपुर नगर में हिन्दी के प्रशिक्षण की कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती क्योंकि गोरखपुर नगर हिन्दी भाषी प्रान्त के अन्तर्गत है, अत: यहां के सभी कर्मचारी हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखते ही होंगे। हां, कुछ कर्मचारी ऐसे भी हो सकते हैं जो दूसरे प्रान्तों से आकर यहां काम कर रहे हैं और उन्हें हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान नहीं है, अत: उन्हें प्रशिक्षण देना अनिवार्य होगा। हिन्दी टंकण एवं आशुलेखन प्रशिक्षण की अनिवार्यता पर प्रकाश डालते हुए श्री श्रीवास्तव ने कहा कि नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष को विभागीय व्यवस्था के अन्तर्गत हिन्दी टंकण एवं आशुलिपिक केन्द्र के चलाने की सम्भावना पर यथाशीघ्र कार्रवाई करनी चाहिए।

मुख्य अतिथि ने गृह मंत्रालय द्वारा हिन्दी में काम-काज करने वाले टंकण और आशुलिपिकों को क्रमश: 20 और 30 रु० प्रति माह दिए जाने वाले भत्ते की चर्चा करते हुए बतलाया कि गृह मंत्रालय द्वारा जारी किए गए आदेश 15 अगस्त 1983 से लागू होंगे। इस प्रकार के आदेशों का यह परिणाम होगा कि आशुलिपिक और टंकक अपने संबंधित अधिकारियों से हिन्दी में काम लिए जाने के लिए प्रयत्नशील रहेंगे। मुख्य अतिथि ने आगे बतलाया कि इसी प्रकार का एक अन्य प्रस्ताव सरकार के विचाराधीन है जिसके अन्तर्गत अधिकारियों और कर्मचारियों द्वारा सरकारी काम-काज में हिन्दी में टिप्पण और प्रारूप लिखने में पारिश्रमिक देने की सम्भावनाओं पर विचार किया जा रहा है। राजभाषा सचिव ने विभिन्न केन्द्रीय कार्यालयों के सदस्यों से उनके विभाग के राजभाषा संबंधी प्रगति और तत्संबंधी समस्याओं पर चर्चा करते हुए विचार व्यक्त किया कि सभी विभागाध्यक्ष अपने-अपने विभाग में मंत्रालय द्वारा बनाए गए वार्षिक कार्यक्रम के अनुपालन के लिए हर सम्भव प्रयास करें। उल्लेखनीय है कि पूर्वोत्तर रेलवे की राजभाषा संबंधी प्रगति पर अपना संतोष व्यक्त करते हुए सचिव महोदय ने उल्लेख किया कि पूर्वोत्तर रेलवे में हिन्दी का काम-काज बड़े ही सुव्यवस्थित ढंग से चल रहा है।

अपराह्न में राजभाषा सचिव ने पूर्वोत्तर रेलवे के महाप्रबन्धक श्री डी० हरिराम की अध्यक्षता में आयोजित रेलवे के विभागाध्यक्षों की बैठक को सम्बोधित करते हुए सरकार की राजभाषा नीति पर प्रकाश डाला।

10. नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बैंगलोर की दूसरी बैठक

नगर राजभाषा कार्यान्वन समिति बैंगलोर की दूसरी बैठक दिनांक 8–7–1983 को कुद्रेमुख आयरन और कम्पनी लिमिटेड के प्रबंधक निदेशक श्री एच० वी० मीरचन्दानी की अध्यक्षता में संपन्न हुई। इसमें नगर के केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों, सरकारी उपक्रमों तथा राष्ट्रीयकृत बैंकों के लगभग 75 प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री मीरचन्दानी ने इस बात पर बल दिया कि राजभाषा का प्रश्न किसी व्यक्ति, कार्यालय या राज्य का नहीं अपितु समूचे देश के हित का है। इसलिए हमें एकजुट होकर इसके विकास में सहयोग देना है।

राजभाषा विभाग (गृह मंत्रालय) के प्रतिनिधि श्री पूरन जोशी ने राजभाषा अधिनियम के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालते हुए कहा कि संसद द्वारा पारित अन्य अधिनियमों की भांति राजभाषा अधिनियम का पालन करना भी हम सबका कर्त्तव्य है।

इस बैठक में राजभाषा विभाग द्वारा जारी किए गए वार्षिक कार्यक्रम के अतिरिक्त, राजभाषा कार्यान्वयन के मार्ग में आने वाली विभिन्न कठिनाइयों पर विस्तृत चर्चा की गई।

—मंगल प्रसाद
सदस्य सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, बैंगलोर

साहित्य का सर्वोत्तम भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार श्रीमती महादेवी वर्मा को।

भारतीय ज्ञानपीठ का 1982 का साहित्य पुरस्कार हिन्दी की सुप्रसिद्ध कवियित्री श्रीमती महादेवी वर्मा को उनकी काव्यकृतियां "यामा" एवं "दीपशिखा" के लिए समर्पित किया गया। उनकी कृतियों को सन् 1977 से पूर्व की कालावधि में प्रकाशित भारतीय भाषाओं के सृजनात्मक साहित्य में विधिवत सर्वश्रेष्ठ निर्णीत और घोषित किया गया।

इस पुरस्कार में 1.5 लाख रुपए की धनराशि के अतिरिक्त एक प्रशस्ति पत्र तथा वाग्देवी की एक प्रतिमा भी शामिल है।

महादेवी वर्मा इससे पहले भी अनेक पुरस्कारों से सम्मानित की जा चुकी है। इनमें से मंगल प्रसाद पारितोषिक-1934 तथा भारत–भारती पुरस्कार–1983 प्रमुख हैं। सन् 1956 में भारत सरकार ने भी इन्हें पद्मभूषण की उपाधि से अलंकृत किया था।

बचपन से ही काव्य चेतना से ओतप्रोत महादेवी जी, प्रसाद, पंत व निराला के साथ छायावाद के प्रमुख स्तंभ के रूप में जानी जाने लगीं। हिन्दी की आधुनिक मीरा, महादेवी का काव्य, विरहवेदना की भावनाओं की श्रेष्ठतम गीतात्मक अभिव्यक्ति है।

इस पत्रिका में प्रकाशन के लिए सामग्री भेजते समय कृपया नीचे लिखी बातों को ध्यान में रखें :—

1. फुलस्केप साइज़ कागज पर साफ-साफ टाइप की गई सामग्री की कम से कम दो प्रतियां भेजी जाएं।
2. बैठकों, सम्मेलनों तथा समारोहों आदि के समाचार यथासंभव संक्षिप्त और चित्रों के साथ भेजे जाएं।
3. प्रकाशन के लिए भेजी जाने वाली सामग्री में मानक देवनागरी लिपि और मानक वर्तनी का ही प्रयोग किया जाए।

—सम्पादक

"यह सत्य है कि कोई भी देश अपनी मातृभाषा के द्वारा ही आगे बढ़ सकता है। हम दूसरी भाषा सीख सकते हैं, बोल सकते हैं लेकिन नए विचार उससे पैदा नहीं होते। नए विचार केवल अपनी मातृभाषा के द्वारा ही निकल सकते हैं। इसलिए हमें भारत की सभी भाषाओं को आगे बढ़ाना है, प्रोत्साहन देना है और हिन्दी का तो एक विशेष स्थान है ही। हम चाहते हैं कि जल्दी से जल्दी भारत के सभी लोग अगर हिन्दी न बोल सकें तो कम से कम समझ तो सकें। मैं समझती हूं कि यह काम आगे बढ़ रहा है।

इतने बड़े देश में जहां इतनी भाषाएं हैं, वहां देश की एकता के लिए आवश्यक है कि कोई भाषा ऐसी हो, जिसे सब बोल सकें, जो एक कड़ी की तरह सबको मिला-जुला कर रख सके। इसलिए हिन्दी को बढ़ाना हम सब का काम है।"

—इन्दिरा गांधी

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के लिए श्री जयपाल सिंह द्वारा, लोकनायक भवन, खान मार्केट, नई दिल्ली से प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित।